मिस्टर एलन आक्टेवियन ह्यूम ।

समर्पण ।

यह पुस्तक

भारतके सच्चे हितैषी, निःस्वार्थ सेवक, स्वाधीनता-प्रिय,

महात्मा ह्यूमकी

पुत्री

और

उत्तराधिकारिणी

इंडियन-नेशनल-कॉंग्रेस

के

कर-कमलोंमें

उसके जन्म-दाता पूज्य पिताकी भारतके प्रति

असीम सेवाके स्मरणार्थ

अनुवादकों द्वारा

सादर समर्पित की गई ।

अनुक्रमणिका।

भूमिका ।

आज हम इस छोटीसी ऐतिहासिक पुस्तकमें एक ऐसे महान् पुरुषकी जीवनीका कुछ संक्षिप्त परिचय पाठकोंको कराना चाहते हैं जिसने यद्यपि सात समुद्र पार इङ्गलेंड जैसे देशमें जन्म लिया था, तथापि जो भारतीय विषयोंसे पूरी पूरी सहानुभूति रखता था, जो भारतवर्षकी सच्ची उन्नतिका हृदयसे इच्छुक था, जिसकी नस नसमें भारत-हितका जोश भरा हुआ था, जिसने अनेक उच्च पदों पर रह कर राजा प्रजा दोनोंमें घनिष्ट सम्बंध पैदा करने और भारतवर्षमें राजनीतिक जागृति उत्पन्न करने, में कुछ भी कमी न रख छोड़ी थी और जिसमें नैतिक बलके साथ अखंड साहस और अश्रात श्रम भी था। उसका नाम एलन आक्टेवियन ह्यूम था। उसीने ही इंडियन नेशनल कांग्रेस (Indian national congress) की स्थापना की थी। आज जो कुछ राजनीतिक आन्दोलन दिखाई दे रहा है और प्रजाको जो जो अधिकार राजा द्वारा मिलते जा रहे हैं वे सब ह्यूम महाशयकी ही कृपाके फल हैं।

ह्यूमके सामने यह प्रश्न उपस्थित था कि क्या भारतवर्षमें ब्रिटिश राज्य भारतवासियोंके हितार्थ चल सकता है ? वे इसका आशामय उत्तर रखते थे। उनको पूर्ण विश्वास था कि अंग्रेज और भारतवासी दोनोंके हित समान है, अतएव वे समझते थे कि ऐसे राज्यसे, जो जन-साधारणकी इच्छानुसार हो अर्थात् जिस राज्यसे जन-साधारणकी पूरी पूरी सहानुभूति हो, राजा प्रजा दोनों समान लाभ उठा सकते है और आर्यजातिकी दोनों शाखाओंकी पूर्णरूपसे उन्नति हो सकती है।

परन्तु वे जानते थे और उनको इस बातकी बड़ी चिन्ता रहती थी कि वर्तमानमें जो विदेशीय कर्मचारियों द्वारा शासन हो रहा है वह जन-साधारणकी इच्छानुसार नहीं है। उससे लोगोंको सहानुभूति नहीं है। वे कर्मचारियोंको दोष नहीं देते थे; किंतु कहा करते थे कि दोष शासन-पद्धतिका है। उस समय राजा और प्रजाके बीचमें कुछ भी ऐसा सम्बन्ध नहीं था कि जिससे राज-कर्मचारी प्रजाके विचार, उनकी इच्छायें और उनके दुःख-दर्दको जान सकते। कर्मचारी प्रजासे अलग और प्रजा कर्मचारियोंसे दूर रहती थी। न राजाको प्रजाका हाल मालूम होता था और न प्रजाको राजाका। सन् १८७८ और १८७९ के लगभग सारे भारतवर्षमें आर्थिक और नैतिक कठिनाइयाँ फैली हुई थीं। अधिकांश लोगोंके शारीरिक दुःखों और कतिपय शिक्षित पुरुषोंके मानसिक दुःखोंसे लोगोंके हृदयोंमें बड़ी भयानक बे-चैनी पैदा हो रही थी। किसान लोग गरीबी, अकाल और दुःखोंके कारण निराश होते जाते थे। उनकी चिल्लाहटका कोई सुननेवाला नहीं था और उन्हें आरामकी कोई आशा नहीं थी। उधर स्कूलों और कालेजोंके विद्यार्थी राजनीतिक इतिहासके पढ़नेसे यह मालूम करने लगे थे कि अंग्रेजोंने अपने देशमें किस तरह हुल्लड़ मचा कर और हलचल फैला कर स्वतंत्रता प्राप्त की है। यहाँ भी वे राज्य-विद्रोह और परिवर्तनके स्वप्न देखने लगे। यह समय बड़ा नाजुक था; परंतु ह्यूम इस बातको अच्छी तरह समझे हुए थे। लोगोंके दिलोंमें जो अंतरंग भाव थे, उनसे वे भली भाँति परिचित थे। वे जानते थे कि इस समय लोगोंके बिगड़ जानेका भय है और यदि ऐसा हुआ तो वह उन्नति कदापि न हो सकेगी जिस पर भारतवर्षका भावी कल्याण निर्भर है। लोगोंके दिलोंमें अंधा जोश भरा हुआ था और उस जोशके फूट पड़नेका पूरा पूरा भय था। इस कठिन समस्याको वे हल कर चुके थे। वे जानते थे कि इस समय क्या करना उचित है। उनकी रायमें लोगों पर विश्वास करना यही इस कठिनाईका 'गुरु' था। वे कहा करते थे कि जो भारत-

वासी चतुर, बुद्धिमान और नियम-निष्ठ हैं और जिन्होंने अपने पूर्वजोंसे प्राचीन कालसे पैतृक सम्पत्तिके तौर पर सभ्यता प्राप्त की है वे पूर्णरूपसे विश्वासके पात्र हैं। जो संदेशा उन्होंने अपनी ब्रिटिश जातिको दिया था वह यह था कि अभय-पथ इसमें है कि भारतवासियों पर विश्वास करो और उनके देशके प्रबंधमें उनको शामिल करो।

ह्यूम महाशयका जीवन-चरित भारतवर्षके सच्चे हितैषी सर विलियम वेडरबर्नने अंग्रेजी भाषामें अभी हाल ही लिखा है। उसीका यह स्वतंत्र अनुवाद हिन्दी-भाषा-भाषियोंकी भेंट है। वेडरबर्न महाशय ह्यूम साहबकी जीवनीकी भूमिकामें लिखते है कि "ऐसे मनुष्यका जीवन राजनीतिक विचार रखनेवाले अंग्रेजोंके लिए बड़े ही मूल्यकी वस्तु है। कारण कि इससे उनको मालूम होगा कि ह्यूम महाशयका उन्हें क्या संदेशा है और उन्हें किस प्रकार उसे पूर्ण करना चाहिए। इस ग्रन्थके लिखनेसे मेरा केवल यही अभिप्राय नहीं है; किंतु मैं यह भी अपना मुख्य कर्तव्य समझता हूँ कि भारतवासियोंके समक्ष भी उस महान् आत्माका निःस्वार्थ जीवन उपस्थित करूँ और एक बार फिर उन्हें उन जोशीले शब्दोंका स्मरण कराऊँ कि जिनके द्वारा ह्यूमने भारतवासियोंको पग-पग पर उन्नतिके लिए उत्तेजित किया है। जिस प्रकार पिता कभी अपने पुत्रकी प्रशंसा करता है और कभी निंदा करता है, कभी उसे पुचकारता है और कभी घुड़कता है; परंतु जो कुछ भी वह करता है प्रेम-वश करता है। कारण कि वह पुत्रका सच्चा हितैषी है। इसी प्रकार ह्यूम महाशय भी भारतवासियोंके प्रति पिताका व्यवहार करते थे। कभी उनके सद्गुणोंकी प्रशंसा करते थे और कभी अवगुणोंकी निंदा करते थे, कभी उन्हें पुचकारते थे और कभी घुड़कते थे; परंतु इन तमाम बातोंमें प्रेम था। उनकी हृदयसे इच्छा थी कि भारतवर्ष उन्नति करे, भारतवासी दिन दिन आगे बढ़ते जायँ। ज्ञान, विज्ञान, कला, कौशल्य, शिल्प, वाणिज्य

आदि सभी बातोंमें वे निपुण हों; आत्मिक, सामाजिक, नैतिक और शारीरिक सर्व प्रकारकी उन्नति करें; परंतु उनकी सदैव यह शिक्षा थी कि इन गुणोंकी प्राप्ति केवल उसी समय हो सकती है जब कि भारतवासी अपनेमें साहस, वीरता, श्रम और आत्म-त्यागके गुण उत्पन्न करें और उनको प्रतिदिन व्यवहारमें लावें।

अनुवादक।

किया कि कम्पनीने प्रसन्न होकर उनको सामुद्रिक सेवासे सिविलमें बदल दिया। सिविलमें आकर उनको पूर्वीय भाषाओंके सीखनेका शौक हो गया और उन्होंने इन भाषाओंमें ऐसी निपुणता प्राप्त की कि वे दुभाषिये (Interpretor) बना दिये गये और इस पद पर रह कर उन्होंने कम्पनी और भारतीय राजों और नव्वाबोंके बीचके अनेक आवश्यक मामिलोंको तय कराया। यह वह समय था जब कि अधिकारी लोग नव्वाब बन बैठे थे और कम्पनीके साधारणसे साधारण कर्मचारी भी अमीर बन गये थे। सन् १८०८ ई० तक जोजेफ ह्यूमने पार्लियामेंटमें शामिल होनेके लिए, जिसकी उनको उत्कट इच्छा थी, काफी रुपया जमा कर लिया था। विलायत जाते ही उन्होंने एक जगह खरीद ली और वहाँके लोगोंने उनको मेम्बर चुन लिया। जनवरी सन् १८१२ ई० में वे पार्लियामेंटके मेम्बर हो गये, परंतु नवम्बरमें ही पार्लियामेंट टूट गई और फिर दुबारा लोगोंने उनको चुननेसे इन्कार कर दिया। सन् १८१८ ई० में उनको फिर पार्लियामेंटमें जगह मिल गई; परंतु अबकी बार दूसरी जगहसे मिली और इसी तरह बारी बारीसे कई जगहोंके प्रतिनिधि होकर इन्होंने पार्लियामेंटमें काम किया।

पार्लियामेंटमें कुछ लोग गर्मदलके होते हैं जो सदा स्वतंत्रताके इच्छुक रहते हैं और परिवर्तन पर परिवर्तन चाहा करते है। जोजेफ ३० वर्षतक इसी दलके नेता रहे। इस दलसे पहले तो कुछ समय तक लोग भय खाते है और घृणा भी रखते है, परंतु अंतमें प्राय इसी दलकी जीत होती है और इसीके द्वारा कुल समुदायकी उन्नति होती है। सन् १८३४ ई० में जोजेफ ह्यूमने पार्लियामेंटमें अन्न सम्बधी कानूनोंका, जो उस समय पास होनेवाले थे, घोर विरोध किया। यद्यपि बहुमत उनके विरुद्ध था, तथापि उन्होंने बड़े जोरके साथ कहा कि इस कानूनसे लोगोंको बलात्कार भूखों मरना पडेगा, अतएव इस पर पुनः विचार होना चाहिए। इसी प्रकारके उन्होंने अनेक

कार्य किये । एक बार उन्होंने इस बातका उद्योग किया कि जितने लोगोंको अधिकार है, उनसे अधिक लोगोंके निर्वाचनका अधिकार दिया जाय और प्रत्येक मनुष्यकी सम्मति गुप्तरूपसे लिखित ली जाया करे अर्थात् जिसको लोग चुनना चाहें, उसका नाम वे कागज पर लिख कर रख दें । जिनके नाम अधिक निकलें उनको ही चुना जाये ।

जोजेफ ह्यूमने गिरजों (धर्म-मंदिरों) के सुधारनेका भी शक्ति भर प्रयत्न किया । इसके अतिरिक्त उन्होंने दो बातोंके बंद किये जानेका और उद्योग किया । एक यह कि गिरजोंमें पादरी लोग बिना कुछ काम किये वेतन पाते हैं, दूसरे यह कि सेनामें सिपाहियोंके कोड़े न लगाये जावें । यद्यपि उन्होंने ये सब बातें कीं, परंतु उनकी अधिकतर धुन आर्थिक विषयोंमें सुधार करनेकी थी । आर्थिक विषयोंकी वे बड़ी कड़ी समालोचना किया करते थे और बड़े जोरोंसे आय-व्यय-सम्बंधी बातोंमें दूषण निकाला करते थे । अपने देशमें प्रत्येक विभागमें सुधार करते हुए, उन्हें भारतवर्षकी चिंता भी सदैव लगी रहती थी । जिस भारतवर्षमें उन्होंने इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी, उसे वे भूले नहीं थे । जब सन् १८३५ ई० में दूसरी बार भारत गवर्नमेंटमें कुछ सुधार करनेका बिल पढ़ा गया था तब आप कई घंटों तक बराबर भारतवासियोंके पक्षमें बोलते रहे ।

ऐसे पितासे ही हमारे चरित-नायक एलन ह्यूमका जन्म हुआ था । एलन ह्यूममें वे सर्व गुण बाल्यावस्थासे ही प्रगट होने लगे थे जो स्काटलेंडके उत्तरीय पूर्वीय किनारेके लोगोंमें विशेषरूपसे पाये जाते हैं । वहाँके लोग बड़े परिश्रमी, साहसी, संयमी और मितव्ययी हैं । बालकपनमें एलन ह्यूमकी इच्छा जहाज पर नौकरी करनेकी थी । यद्यपि उनके भाग्यमें सिविल-सर्विस बदी थी, तथापि उनके पिताने उनको जहाज पर काम करनेकी आज्ञा देदी । उस समय उनकी अवस्था केवल १२ वर्षकी

थी। उर्वेनगार्ड नामक जहाजमें उन्हें एक छोटीसी जगह मिल गई और भूमध्य-सागरमें कुछ दिनों तक उसी जहाज पर उन्होंने सेवा की। उसके बाद वे हेलीवरी (Hailey bury) के ट्रेनिंग कालेजमें भेजे गये और वहाँसे निकलनेके बाद उनको यूनीवर्सिटी-कालेज-हास्पिटलमें, जो उस समय प्रसिद्ध डाक्टर राबर्ट लिस्टन (Robert Liston) से सुशोभित था, डाक्टरी पढ़नेका मौका मिल गया। सन् १८४९ ई० में वे बंगाल सिविलसर्विसमें भेज दिये गये। उनका जन्म सन् १८२९ ई० में हुआ था और इन्हीं दिनों बृटिश जातिमें उन्नतिकी लहर चल रही थी। इस प्रकार ह्यूम साहबकी युवावस्थाका समय वही था जब कि इस जातिने सन् १८३० ई० के सुधारके आंदोलनसे उन्नतिके क्षेत्रमें एक पग आगे बढ़ाया था और जब ब्राइट (*Bright*) और कावडन (*Cobden*) जैसे पुरुष लोगोंकी आजीविकाके अर्थ जीजानसे लड़ रहे थे।

भारतीय सिविलसर्विस।

ह्यूम साहब भारतवर्षमें आ गये और यहाँ अनेक पदों पर प्रतिष्ठित रहे। अब देखना यह है कि उन्होंने किस किस पद पर रह कर क्या क्या कार्य किये। उनकी तमाम नौकरीका काल अनेक भागोंमें विभक्त है और प्रत्येक भाग अपने रूपमें भिन्न भिन्न है, अर्थात् एक भागमें उन्होंने जो कुछ काम किया, उसका दूसरेसे कुछ संबंध नहीं। उनकी अफसरीके कालके चार मुख्य भाग हैं (क) सन् १८४९ ई० से १८६७ ई० तक। इस कालमें वे एक जिलेके अधिकारी अर्थात् कलक्टर रहे। (ख) १८६७ ई० से १८७० ई० तक। इस कालमें वे एक विभागके अध्यक्ष रहे। (ग) १८७० से १८७९ ई० इक। इसमें वे भारत गवर्नमेंटके मंत्री रहे। (घ) १८७९ ई०। इसी साल उनका बड़े लाटसे झगड़ा हो गया और यहीं पर कहना चाहिए कि उनकी अफसरीके कालका अन्त आ गया। सन् १८८२ ई० में उन्होंने इस्तीफा दे दिया। उक्त चारों अवस्थाओंसे एक विलक्षण परिणाम निकलता है, कारण कि जिस जिस विभागमें ह्यूम साहबने काम किया उसकी ऊँच, नीच, भलाई बुराई सब कसौटीके समान साफ साफ प्रगट करदी। जब वे पश्चिमोत्तर (वर्तमान संयुक्त) प्रांतके इटावा जिलेके अधिकारी रहे, तब उनको अपने कार्यमें पूर्णरूपसे सफलता प्राप्त हुई। शांति तथा अशांति दोनों समयोंमें उन्होंने ऐसी उत्तम रीतिसे कार्य किया है कि गवर्नमेंटने उनके सुकार्य और सुप्रबन्धकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। वास्तवमें ह्यूम साहबका शासन बड़ा ही योग्य और समीचीन था। और गवर्नमेंटने जो कुछ भी उनकी प्रशंसा की है वह सर्वथा उचित है।

सरकारी कागजोंसे विदित होता है कि ह्यूम साहबने सार्वजनिक शिक्षा-का प्रचार करने, पुलिसका सुधार करने, आबकारीको घटाने, देशी

समाचार पत्रोंके प्रकाश करने, नवयुवकोंके सुधारने तथा अन्य आवश्यक सामाजिक सुधारोंके लिए अश्रांत परिश्रम किया तथा सफलता भी उन्हें बहुत कुछ प्राप्त हुई। यह काल ह्यूम साहबके बड़े ही आनंदके समयोंमेंसे है। ह्यूम साहबके निःस्वार्थ उद्योगोंके स्थायी परिणामोंसे स्पष्ट रूपसे प्रगट होता है कि किसी जिलेका अधिकारी, जो प्रजाके सुख दुःखसे भलीभाँति परिचित है और जो प्रजासे पूर्ण रूपसे सहानुभूति रखता है वह, प्रजाहितके लिए कितना काम कर सकता है। इस स्थल पर पाठकोंको यह बात भी अवश्य याद रखनी चाहिए कि उन दिनोंमें कर्मचारियोंको बड़ी स्वतंत्रता थी। आजकलकी तरह वे नियमोंसे जकड़े हुए नहीं थे।

चुंगीके उच्च कर्मचारी रह कर ह्यूम साहबने अच्छी तरह जतला दिया कि एक विभागका अधिकारी अपने कर्तव्य और अधिकारकी सीमामें रह कर कितना उपयोगी काम कर सकता है। लार्ड मेयो (Lord Mayo) की गवर्नर-जेनरलीमें कृषि-विभागके डायरेक्टर जेनरलके पद पर रह कर ह्यूम साहब दुखी कृषकोंकी अवश्य काया-पलट कर देते और उन्हें एक नया जीवन प्रदान कर देते यदि, अंडमन द्वीपमें एक नीच दुष्टात्मा लार्ड मेयो जैसे उदार हृदय लाट साहबको, जिन्होंने कृषकोंके सुधारके लिए एक बड़ा ही उत्तम उपाय सोच रक्खा था, अकाल-मृत्युका ग्रास न बना देता और उनके सद्विचारोंकी यों ही इतिश्री न कर देता। शोक है कि वे अपने भाव और विचार अपने मनहीमें लेकर चले गये थे। भारत गवर्नमेंटके मंत्री होने पर तो ह्यूम साहबके अधिकार बहुत बढ़ गये थे। परंतु अब उनको लाचार इस्तीफा ही देना पड़ा। कारण कि वे अपने सिद्धान्तों और विचारोंसे उच्च कर्मचारियोंको प्रसन्न नहीं रख सकते थे। विरोधी दलका जोर बढ़ा हुआ था। उनके सामने इनकी कुछ न चल सकी। परिणाम यह हुआ कि इनको अपने पदसे पृथक् होना पड़ा।

(क) १८४९ ई० से १८६७ ई० तक।

ह्यूम साहबने अपने कार्यके लिए कैसी शिक्षा और योग्यता प्राप्त की थी, इस विषयमें टाइम्ज-आफ-इण्डिया (Times of India) ने इस प्रकार लिखा है कि " पहले समयमें जैसा जीवन और जैसी शिक्षा युवा सिवीलियन (Civilian) की होती थी, वह कई बातोंमें आज कलके सिवीलियनके जीवन और शिक्षासे भिन्न है। उन दिनोंमें उसे दफ्तरका काम बहुत कम करना पड़ता था। उसको पुस्तकीय ज्ञान तो बेशक इतना नहीं होता था जितना आज कलके सिवीलियनको होता है; परंतु वह उन लोगोंसे बड़ा घनिष्ट सम्बंध रखता था जिन पर वह राज्य करता था। वह सब बातें अपनी आँखोंसे देखता और कानोंसे सुनता था। इससे उसके ज्ञानमें किसी प्रकारकी कमी न रहती थी।" ह्यूम साहबने जिस प्रकार शुरूमें काम सीखा उसके विषयमें वे स्वयं लिखते हैं कि पहले मासमें मुझे एक थानेके मुहर्रिर (Clerk) का काम करना पड़ा। दो या तीन महीने पीछे मैं एक दूसरे बड़े थानेमें नायब दारोगा हो गया। फिर कुछ समय तक एक छोटे थानेका दारोगा रहा। जब तक मैंने इतना काम नहीं कर लिया तब तक मुझे छोटी मोटी मार-पीटका मुकद्दमा भी सुननेका अधिकार नहीं मिला। भावार्थ सब काम अपने हाथोंसे करनेके बाद वे असिस्टेंट मैजिस्ट्रेट और कलक्टर नियत हुए और डाके वगैरहकी खोज करनेका विशेष अधिकार उन्हें दिया गया। इसके अनन्तर वे इटावेके जायंट मैजिस्ट्रेट और डिपुटी कलक्टर नियत हुए। जब हिंदुस्तानमें गदर हुआ तब वे इसी पद पर नियुक्त थे। जो ढंग काम सीखनेका ऊपर कहा गया है, वह बहुत ही अच्छा है। उस ढंगसे बुरे हाकिम कदापि नहीं हो सकते। लार्ड जार्ज हेमिल्टन (Lord George Hamilton) जब भारत सचिव हुए तब उन्होंने शिकायत की थी कि नये ढंगके

२६ वर्षकी अवस्था थी जब वे इटावा जिलेमें प्रधान सिविल अफसरकी जगह काम कर रहे थे। "

जब सन् १८५७ ई० का मईका महीना प्रारम्भ हुआ, तब किसी प्रकारकी भी शका नहीं थी। सब काम ठीक ठाक चल रहा था। अपराध कम होते जाते थे। लगान और मालगुजारी आसानीसे वसूल हो जाती थी। नहरें भूमिको उपजाऊ बना रही थीं और रेल भी दिनों दिन फैलती जाती थीं। लोग सुखी और सन्तुष्ट जान पड़ते थे। ऐसी अवस्थामें ही १० मईको एकाएक तूफान आ गया। मेरठमें, जो इटावेसे उत्तरकी तरफ लगभग २५० मीलकी दूरी पर है, तीसरे नम्बरकी घुड़सवार फौजने बलवा कर दिया। दो दिनके अन्दर इटावेमें भी इस उपद्रवके समाचार पहुँच गये और एक दो दिन पीछे थोड़ीसी फौज भी आ गई। जबर्दस्त मुकाबलेके बाद बहुतसे बागी तो कैद कर लिये गये और बहुतसे गोलीसे मार डाले गये। इसके बाद जो कुछ हुआ वह के (Kaye) साहबने अपनी पुस्तक सिपाहीविद्रोह (Sepoy Mutiny) में पूरी तौरसे लिखा है। ह्यूम साहबकी उन्होंने बड़ी प्रशंसा की है। वे लिखते हैं कि उस समय ह्यूम साहब इटावेमें मैजिस्ट्रेट व कलक्टर थे। वे एक बड़े सुधारक अंग्रेजके पुत्र थे। लोकोपकार और वीरता आदि गुण उन्होंने अपने पितासे पैतृक सम्पत्तिके तौर पर प्राप्त किये थे। १८ तथा १९ मईको उसी फौजके भगोड़ोंका एक दूसरा दल इटावेसे १० मीलकी दूरी पर जसवंतनगरमें आ पहुँचा। जब पुलिसके सिपाहियोंने उनसे अधीनता स्वीकार करनेको कहा तब पहले तो उन्होंने स्वीकारता प्रगट की; परंतु थोड़ी ही देरमें पकड़नेवाले सिपाहियोंको गोलीसे मार डाला और एक अहातेवाले हिन्दू मंदिर पर कब्जा करके वहाँसे वे अपना बचाव करने लगे। जब ह्यूम साहबने यह खबर सुनी, तब उन्होंने तुरंत अपनी बग्गी मँगवाई और गोली, बारूद,

अनुसार जिलेके अफसरोंको कुछ करनेकी शक्ति नहीं रहती । चिट्ठी, पत्री, रिपोर्ट और नकशोंका उन्हें इतना काम रहता है कि उन्हें दफ्तरसे छुट्टी ही नहीं मिलती । जब ह्यूम साहब काम सीखते थे तब यह बात नहीं थी। उन्होंने सबसे छोटी जगहसे काम करना शुरू किया और वे ऊँचे ऊँचे बढ़ते गये । उन्होंने स्वयं अपने हर एक अधीन कर्मचारीके कामको किया था और खेतों और जंगलोंमें घूम कर तथा सर्व प्रकारके लोगोंसे मिल कर अनुभव प्राप्त किया था। ह्यूम साहबमें यह बात भी नहीं थी कि उनका पुस्तकीय ज्ञान कम था। सच पूछो तो ह्यूम साहबकी जल्दी जल्दी बढ़ती और तरक्कीका कारण ही यह था कि वे परीक्षाओंमें सर्वोत्तम रहते थे।

गदरका समय।

अब सन् १८५७ ई० के गदरकी भयंकर घटनाओंका कुछ उल्लेख किया जाता है। ह्यूम साहबके मित्र करनल सी. एच. टी. मारशल (C. H. T. Marshall) ने जो 'इंडिया' नामक पत्रको इटावेकी गदरके समयकी अवस्था लिखी थी, उससे विदित होता है कि किस प्रकार ह्यूम साहबने उस विश्वाससे, जो उन्होंने लोगोंके दिलोंमें अपनी तरफसे पैदा कर रक्खा था, स्थानीय अंग्रेजोंकी जानें बचाई और गदर मचानेवालोंको एक लड़ाईमें हरा कर तथा उनसे ६ तोपें छीन कर अंतमें शांति स्थापित की। करनल मारशलने जो लेख इंडिया पत्रमें प्रकाशित किया था उसका आशय इस प्रकार है।

"एलन ह्यूम सन् १८४९ ई० में बंगाल सिविल-सार्विसमें भरती हुए। उस समय उनकी अवस्था २० वर्षकी थी । उन्हें हिन्दुस्तानमें आये अभी ८ वर्ष भी न बीते थे कि १८५७ ई० में गदर मच गया और उनको अपनी सैनिक वीरता और शासनकी योग्यताके प्रगट करनेका मौका मिला। उनकी जल्दी जल्दी बढ़वारी होती गई । उनकी केवल

२६ वर्षकी अवस्था थी जब वे इटावा जिलेमें प्रधान सिविल अफसरकी जगह काम कर रहे थे। "

जब सन् १८५७ ई० का मईका महीना प्रारम्भ हुआ, तब किसी प्रकारकी भी शका नहीं थी। सब काम ठीक ठाक चल रहा था। अपराध कम होते जाते थे। लगान और मालगुजारी आसानीसे वसूल हो जाती थी। नहरें भूमिको उपजाऊ बना रहीं थीं और रेल भी दिनों दिन फैलती जाती थीं। लोग सुखी और सन्तुष्ट जान पड़ते थे। ऐसी अवस्थामें ही १० मईको एकाएक तूफान आ गया। मेरठमें, जो इटावेसे उत्तरकी तरफ लगभग २५० मीलकी दूरी पर है, तीसरे नम्बरकी घुड़सवार फौजने बलवा कर दिया। दो दिनके अन्दर इटावेमें भी इस उपद्रवके समाचार पहुँच गये और एक दो दिन पीछे थोड़ीसी फौज भी आ गई। जबर्दस्त मुकाबलेके बाद बहुतसे बागी तो कैद कर लिये गये और बहुतसे गोलीसे मार डाले गये। इसके बाद जो कुछ हुआ वह के (Kaye) साहबने अपनी पुस्तक सिपाहीविद्रोह (Sepoy Mutiny) में पूरी तौरसे लिखा है। ह्यूम साहबकी उन्होंने बडी प्रशंसा की है। वे लिखते हे कि उस समय ह्यूम साहब इटावेमें मैजिस्ट्रेट व कलक्टर थे। वे एक बड़े सुधारक अंग्रेजके पुत्र थे। लोकोपकार और वीरता आदि गुण उन्होंने अपने पितासे पैतृक सम्पत्तिके तौर पर प्राप्त किये थे। १८ तथा १९ मईको उसी फौजके भगोड़ोंका एक दूसरा दल इटावेसे १० मीलकी दूरी पर जसवंतनगरमें आ पहुँचा। जब पुलिसके सिपाहियोंने उनसे अधीनता स्वीकार करनेको कहा तब पहले तो उन्होंने स्वीकारता प्रगट की; परंतु थोड़ी ही देरमें पकड़नेवाले सिपाहियोंको गोलीसे मार डाला और एक अहातेवाले हिन्दू मदिर पर कब्जा करके वहाँसे वे अपना बचाव करने लगे। जब ह्यूम साहबने यह खबर सुनी, तब उन्होंने तुरंत अपनी बग्गी मँगवाई और गोली, बारूद,

तमंचा, बंदूक वगैरह तमाम हथियार लेकर अपने सहायक कर्मचारी मिस्टर डेनियल (Deniell) सहित नौ बजे सुबह रवाना हुए। गर्मी बड़े जोरसे पड़ रही थी और दोनोंमेंसे किसीने जल पान भी नहीं किया था। मौके पर पहुँच कर ह्यूम साहब कुछ अनसधे अशिक्षित सिपाहियों और पुलिस-सवारोंको ही लेकर उक्त मंदिर पर जा डटे। पर कठिनाई यह थी कि वे लोग सब बागियोंकी तरफ थे। धावेसे कुछ आशा नहीं मालूम होती थी, कारण कि लोगोंको इस बातका भय था कि बागी लोग हमारा विध्वंस कर डालेंगे और इसी भयसे वे सहायता देनेसे हिचकते थे। जब दिन ढल गया और सूर्य अस्त होने लगा, तब केवल इन दोनों अंग्रेजोंने ही एक पुलिसके सिपाहीको साथ लेकर स्वयं उस मंदिर पर धावा किया। पुलिसका सिपाही तो गोलीसे मर गया और डेनियलके चेहरेमेंसे होकर गोली पार हो गई। ह्यूमने बड़ी वीरतासे डेनियलको भीड़मेंसे निकाल कर गाड़ी तक पहुँचाया। उन्होंने एक बागीको तो जानसे मार डाला था और दूसरेको अधमरा घायल कर दिया था। इसीसे घबड़ा कर बागी लोग रातको भाग निकले।

के साहब लिखते हैं कि वीरताके जिन कार्योंका हमने पहले उल्लेख किया है, उनमेंसे सबसे पहला काम यही था। इससे अंग्रेज जातिकी वीरता और धीरताका अच्छी तरह पता लगता है। ह्यूम साहब और उनके सहायक डेनियलने बागी लोगोंके सामने ही उन लोगोंसे बड़ी वीरतासे बदला लिया जिन्होंने कुछ दिन पहले अंग्रेजोंको जानसे मार डाला था। इसके बाद वे इटावा लौट आये और कुछ समयके लिए इनकी हुकूमत फिर जोरोंसे जम गई।

इटावेकी सेना अभी तक नहीं बिगड़ी थी; परंतु थोड़े ही दिन बाद उसने भी उपद्रव मचा दिया। खजाना लूट लिया। बंगले जला दिये और दो जेलोंमेंसे कुल कैदियोंको निकाल दिया। मेमें तो कुछ राजभक्त

कर्मचारियोंके साथ अमन-चैनसे आगरेके किलेमें पहुँचादी गई; परंतु साहब लोग उपद्रव दूर करनेके लिए अपनी जगहों पर जमे रहे । ह्यूम साहब अशांतिके निवारण करनेके लिए स्थानीय फौज जमा करने लगे; परंतु उन्हें कुछ सफलता नहीं हुई । जगह जगहसे मुसीबतके समाचार आते थे और गदरका जोर क्षण क्षणमें बढ़ता जाता था । १७ जून तक यह स्पष्ट जान पड़ता था कि किसी भी अंग्रेजकी जान नहीं बचेगी, अतएव उनका वहाँ पर ठहरा रहना किसी भी कामका नहीं है । उनको लाचार आगरे जाना पड़ा और रात्रिके समय भाग कर आगरेके किलेमें छिपना पड़ा । आगरेके किलेसे ह्यूम साहब अपने जिलेके उन कर्मचारियोंसे बराबर चिट्ठी-पत्री रखते रहे जिनको वे सच्चे राजभक्त जानते थे । घोषणाओंसे और प्राइवेट चिट्ठीयोंसे वे जिलेका तमाम हाल मालूम करते रहते थे कि जिससे लोग राजभक्त और शुभ-चिन्तक बने रहें ।

५ जुलाईको आगरेमें एक लड़ाई हुई । बागियोंमें दो हजार अच्छे सधे हुए सिपाही थे और एक फौज बंगालके तोफखानेकी थी । यह बड़ा घोर युद्ध हुआ और इसमें बहुतसे अफसर काम आये । ह्यूम साहब बराबर तोफखानेके साथ काम करते रहे । करनल पेट्रिक बेनरमैन (Colonel Patrick Bannerman), जो ह्यूम साहबके साथ किलेमें थे, ह्यूम साहबको अच्छी तरहसे जानते थे और उनकी वीरताकी बड़ी प्रशंसा करते थे, उन्होंने कहा था कि ह्यूम साहब जैसे साहसी वीर मैंने बहुत कम देखे हैं । वे कई रातों तक खुली हवामें तोपोंके साथ रहे, यहाँ तक कि हैजेने उनको दबा लिया और उन्हें बीमार होकर आगरे आना पड़ा ।

ज्यों ही वे काम करनेके योग्य हुए उनको इटावा पहुँचनेकी चिंता हुई। परंतु २० दिसम्बर तक उन्हें जानेकी आज्ञा नहीं मिली। २० दिसम्बरको वे अपने सहायक कर्मचारी जी. बी. मैकोनाकी (G.B. Maconochie)

और ५० पंजाबी पल्टनके जवानोंके साथ इटावेको रवाना हुए । छठी जनवरीको फिर उन्होंने इटावा ले लिया और तुरंत स्थानीय देशी सेना जमा करना शुरू कर दिया। महीनेके अंत तक २०० पैदल और १५० सवार सधा कर तैयार कर लिये तथा ५ तोपें और २० तोपची भी जमा कर लिये। बादमें उनकी फौजमें एलिक-जेंडर साहबकी घुड़सवार फौज और मिल गई; परंतु इटावेकी दशा अभी तक भयंकर थी। दो बार बागियोंने बड़ी संख्यामें आकर धमकी दी । ७ फरवरी सन् १८५८ ई० को इटावेसे २१ मीलकी दूरी पर अनंतराममें एक लड़ाई हुई। इसमें भी ह्यूम साहबने बड़ी वीरता दिखलाई। उपद्रवी लोग, जिनकी संख्या बारह तेरह हजार थी और जिनके पास एक तोप भी थी, एक बागमें जमा हुए थे। बागके चारों तरफ ६ फिट ऊँची दीवार थी। सामने एक छोटी सी खाई थी और बाईं तरफ एक गाँव था । धावा करनेवाली फौजमें इधर केवल ६० सिपाही कप्तान एलिक-जेण्डरके साथ थे और तीन-सौके लगभग बंदूकची और ८० सवार ह्यूम साहब तथा मैकानाकी साहबके साथ थे। इनके साथ तीन पौंडकी गोली फेंकनेवाली एक पीतलकी तोप भी थी। इसी सम्बंधमें कप्तान एलिकजेंडरने बिरगेडियर सीटन (Brigadier Seaton) को लिखा था कि ह्यूम साहबने कठिनाईसे २००, ३०० के लगभग बंदूकची जमा कर पाये और उनको साथ लेकर वे बड़ी वीरतासे खाईकी तरफ गये। शत्रुके गोले मेरी सेनाकी तरफ चल रहे थे; परंतु हमारे बंदूकचियोंको आगे बढ़ते देखकर शत्रुने उन पर गोले चलाने शुरू कर दिये। हमारी तोपें भी फिर चलने लगीं और हर दफे हम उनके निकट तर निकट पहुँचते गये। पाँचवी बारमें हमारी तोपें दीवार तक पहुँच गई और ह्यूम साहबने एकदम बड़े जोरसे धावा कर दिया। बस फिर क्या था, शत्रु पीछे हटने लगे। इस धावेमें ह्यूम साहबने बड़ी वीरता दिखलाई।

प्रधान सेनापति (Commander-in-chief) ने अपनी रिपोर्टमें बड़े लाट (लार्ड केनिंग) को लिखा था कि मैं श्रीमान्के ध्यानमें यह बात विशेष रूपसे लाना चाहता हूँ कि मिस्टर ह्यूम और कप्तान एलिकजेंडरने बड़ी वीरतासे काम किया है। लाट साहबने उत्तरमें लिखा था कि जन साधारणकी सूचनाके अर्थ मुझे अनंतरामकी लड़ाईका हाल प्रकाशित करते हुए, जो ७ तारीखको गदरवालों और कप्तान एलिकजेंडरकी सेना तथा इटावेके मैजिस्ट्रेट मिस्टर ह्यूमकी जमींदारी फौजमें हुई, बड़ी प्रसन्नता होती है। लाट साहब प्रधान सेनापतिसे इस बातमें सहमत थे कि इस लड़ाईमें ह्यूम, एलिकजेंडर तथा मैकानाकी इन तीनों साहबोंकी योग्यताका पता लगता है। इन तीनोंने अनन्तरामकी लड़ाईमें बड़ी वीरतासे काम किया और थोड़ेसे आदमियोंसे गदरवालोंकी बड़ी सेनाको हरा दिया।

इस लड़ाईका नतीजा यह हुआ कि १३१ बागी मारे गये और उनके घोड़े, तोपें, गोला, बारूद तथा औजार-हथियार सब अंग्रेजी सेनाके हाथ आये।

ह्यूम साहबने स्वयं अपनी रिपोर्टमें लिखा है कि लड़ाई खतम होने पर हम पाई हुई तोपोंको लेकर इटावा पहुँचे। कुल काममें १२ घंटे लगे, जिसमें ५० मील घोड़ों पर सवार होकर भी चलना पड़ा। अगले ६ महीने भी ह्यूम साहबको बराबर उन बागियोंके साथ लड़नेमें लग गये जो अवधसे भाग कर आये थे। ह्यूम साहबने उपद्रव दूर होने पर जो अंतिम रिपोर्ट सरकारको भेजी थी उसीमेंसे कुछ हाल छाँट कर नीचे लिखा जाता है।

"२१ अप्रेलको हमने अजीतमलमें रूपसिंहके एक दल पर बड़े जोरसे धावा किया, जिसमें पूर्ण सफलता हुई। यद्यपि शत्रुओंकी संख्या चारों तरफ बहुत ज्यादह थी, तथापि हमने उनको भगा दिया और

उनके सात आदमी गड्ढोंमें गिर कर मर गये। इस धावेके कारण कुछ देरके लिए तो गदरवालोंको बड़ा भय हो गया। दूसरे दिन हमने दो पहरको शत्रु पर फिर छापा मारा। १५ को काट डाला और ३ को पकड़ कर फाँसी पर चढा दिया। डायल (Doyle) साहबके कंधेमें होकर गोली पार हो गई। ”

मईके महीनेमें दिल्लीके राज-घरानेके फीरोजशाहके साथ जमनाके किनारों पर कई लड़ाइयाँ हुई। ह्यूम साहब लिखते हैं कि इसके सम्बंधमें इतना ही कह देना काफी है कि हमने मईकी सख्त गर्मीमें खुली हुई नौकामें ४१० घुड़सवारों और पैदल फौजके साथ ७ दिनमें २६ नौकायें एकत्रित कीं और बहुतसी छोटी छोटी लड़ाइयों तथा एक बड़ी लड़ाईके बाद, जिनमें हमने बागियोंकी अपनेसे कहीं बड़ी फौजको हरा दिया तथा उनकी ६ तोपें और सामान छीन लिया और उनके ८१ सधे हुए सिपाहियोंको मार डाला, हम अमन-चैनसे उन नौकाओंको शत्रुके गावों और किलोंके पास होते हुए ६२ मील तक नदीमें ले गये।

सालके अंतमें इटावेमें फिर अमन-चैन हो गया। ह्यूम साहबने और क्या क्या काम किये, इस विषयमें थोड़ासा हाल स्वयं ह्यूम साहबकी लिखी हुई रिपोर्टके अन्तमेंसे छाँट कर लिखा जाता है:—

“ पश्चिमोत्तर प्रान्तके किसी जिलेमें भी इतनी शांति नहीं हुई जितनी इटावेके जिलेमें हो गई। कोई जिला ऐसा नहीं है जिसमें इतने कम कड़े दण्ड दिये गये हों। मैने दया और क्षमासे काम लिया है। हमारे सामने यह बड़ी कठिनाई उपस्थित थी कि जिलेमें किस प्रकारसे पूर्णरूपसे शांति फैले, बृटिश राज्यका अधिकार जमे, और इसके साथ आदमियोंको तकलीफ भी कम हो जाय। ” इसमें कोई संदेह नहीं कि ह्यूम साहबने अपनी नीति, युक्ति, साहस और दृढतासे ऐसी आसानीसे लोगोंमें विश्वास पैदा करके अमन-चैन फैला दिया कि दूसरोंके लिए ऐसा करना कठिन था।

सन् १८५९ ई० तक ह्यूम साहबको उनके इस श्रमका कुछ पुरस्कार नहीं मिला। १८६० ई० में सी. बी. (Companion of the Bath) की पदवी मिली। उनके अखंड श्रमको देखते हुए यह पुरस्कार कुछ भी नहीं था; परंतु उन दिनोंमें और आज कलमें बड़ा भेद है। उन दिनोंमें आजकलकी तरह योग्य अयोग्य सब किसीको पदवियाँ और उपाधियाँ न मिल जाती थीं।

अब हम उन कामोंका उल्लेख करते हैं जो उन्होंने अपने जिलेकी शांति और उन्नतिके लिए किये थे।

१ सार्वजनिक शिक्षा।

२१ जनवरी सन् १८५७ ई० वाली विशद रिपोर्टमें इटावेमें बिना फीसके (Free) स्कूल खोलनेके विषयमें ह्यूम साहबने लिखा था कि–

"गत फरवरी मासमें मुझे इस बातकी आज्ञा मिली कि कुछ बिना फीसके स्कूल खोलनेका उद्योग किया जाय और उनके खर्चके वास्ते जमींदारोंसे कुछ कर लिया जाय; परंतु यह कर जमींदार स्वयं अपनी इच्छासे देवें, जबरदस्ती किसीसे न की जावे। जब यह प्रश्न उपस्थित किया गया, तब बहुतसे लोग इसके विरुद्ध हुए; परंतु शांतिके साथ समझाने और उद्योग करनेसे विरोध जाता रहा और इटावेके बहुतसे जमींदार इस करके देनेके वास्ते राजी हो गये। यह बात एक आम जल्सेमें भी प्रगट करदी गई और लोगोंने पहली बारका चन्दा भी दे दिया। अतएव पहली अप्रैलको परगनेके बड़े बड़े गावोंमें ३२ स्कूल खोल दिये गये।" इस कार्यवाहीको छोटे लाट, बडे लाट तथा कोर्ट-आफ-डाइरेक्टर्स (Court of Directors) ने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर लिया। इस शुभ आरम्भसे उत्साहित होकर, यह ढंग जो हल्काबन्दीके नामसे मशहूर था, धीरे धीरे इटावेके तमाम जिलेमें फैल

गया और पहली जनवरी १८५७ ई० तक १८१ स्कूल स्थापित हो गये, जिनमें ५१८६ छात्र पढ़ने लगे। उसमें २ बालिकायें भी थीं। स्कूलोंके वास्ते मकान बननेका श्रीगणेश भी साधारण रूपसे हो गया था। ह्यूम साहबने उसके बारेमें अपनी रिपोर्टमें लिखा थाः—

"अभी केवल तीन मकान हैं और वे भी कच्चे। अभी स्कूल या तो किसी जमींदारके मकानमें हैं या किसी टूटे हुए मकानमें जिसकी गाँववालोंने मरम्मत करादी है। सफाईकी बड़ी ताकीद रहती है और सफाई रहती भी है। हर एक स्कूलमें मोटी चटाइयाँ बिछी हैं और वे इतनी बड़ी हैं कि उन पर अध्यापक और विद्यार्थी अच्छी तरह बैठ सकते हैं।"

यह आशा थी कि कुछ समयके पश्चात् बड़े स्कूलोंके वास्ते साफ और स्थायी मकान स्कूलोंके बचे हुए रुपयोंमेंसे बन जावेंगे; परंतु उस समय तक जहाँ कहीं स्कूलके लिए गाँवकी जरूरतके अनुसार काफी मकान मिल जाता था, तो उसके खोलनेमें रुपयोंकी कमीकी वजहसे रोक नहीं लगाई जाती थी। १८१ स्कूलोंके वास्ते ५ अध्यापक ६) रु० मासिक वेतन पर, ३९ अध्यापक ५) रु० मासिक वेतन पर और १३८ अध्यापक ४) रु० मासिक वेतन पर मिल गये थे। वेतनकी अपेक्षा अध्यापक बहुत अच्छे थे। पठनक्रम, अध्यापकोंके कर्तव्य तथा निरीक्षण और प्रबन्ध-सम्बन्धी नियम विशदरूपसे हिन्दी तथा उर्दूमें छाप दिये गये थे। परंतु इस कार्यके आरम्भमें ही यह आवश्यकता हुई कि कोई ऐसा विद्यालय खोला जाय कि जिसमें प्रारम्भिक पाठशालाओंकी शिक्षा समाप्त होनेके पश्चात् आगरा कालेजमें जानेके वास्ते छात्र तैयार किये जावें। अतएव पहली अगस्त सन् १८५६ ई० को इस आवश्यकताकी पूर्तिके लिए ह्यूम साहबने इटावेमें सेंट्रल-ऐंगलो-वरनाक्युलर (Central Anglo Vernacular) स्कूल खोला। इस कार्यमें भी

पहले उनको विरोधका सामना पड़ा; परंतु वह धीरे धीरे जाता रहा। पहली जनवरी सन् १८५७ ई० तक इस स्कूलमें १०४ छात्रोंकी उपस्थिति थी। अब केवल एक बात और करना बाकी रह गई थी और वह यह कि कुछ छात्र वृत्तियाँ योग्य विद्यार्थियोंके लिए नियत की जायँ, कि जिससे वे आगरा कालेजमें, रह कर अपनी शिक्षा पूर्ण कर सकें। एक छात्रवृत्तिके लिए ह्यूम साहबने गवर्नमेंटको लिखा कि कुँवर अजीतसिंहकी यादगारमें कायम कर दी जाय और दूसरीके लिए उन्होंने स्वयं अपने पाससे देनेका विचार किया। इसके अतिरिक्त उनको आशा थी कि कुछ छात्र-वृत्तियाँ स्थानीय धनाढ्य नियत कर देंगे। ऐसे शांति और उन्नतिके समयमें मई सन् १८५७ ई० के गदरने बिजलीके समान असर किया। दो वर्षके पीछे जब बिल्कुल अमन-चैन हो गया तब ह्यूम साहबने २५ जनवरी सन् १८५९ ई० को रिपोर्ट की कि शिक्षाका ढंग फिर ठीक ठीक चल रहा है। उन्होंने अपनी रिपोर्टमें लिखा था कि "स्वयं गदर भी इस शिक्षाके ढंगको न मिटा सका। कुछ स्कूल गदरके समयमें भी बराबर जारी रहे। अभी जिले पर पुनः अधिकार पाये हुए हमें छह मास ही हुए हैं, तथापि सैकड़ों स्कूल जारी हैं और हजारों छात्र पढ़ते हैं।"

अभाग्यसे गदरके बाद शिक्षाके विषयमें अधिकारियोंकी रायमें कुछ परिवर्तन हो गया और ह्यूम साहबने बड़े दुःखके साथ लिखा है कि बहुतसे अफसरोंकी यह राय थी कि भारतवसियोंको शिक्षा बिल्कुल न दी जाय और बहुतसे कहते थे कि केवल धर्म-विहीन लौकिकशिक्षा हानिकर है। जनवरी सन् १८५९ की इस रिपोर्टमें उन्होंने लिखा था कि चाहे गवर्नमेंट तलवारके जोरसे अपनी हुकूमत जमावे; परंतु सभ्य और स्वतंत्र गवर्नमेंटको तो अपनी स्थिति और दृढ़ता इसी बातमें समझनी चाहिए कि लोग शिक्षित हों और उनके मन और चरित्र इस योग्य हों।

कि वे गवर्नमेंटकी कृपा और उसके उपकारोंका मूल्य जान सकें। अधिकारियोंकी सम्मतिमें परिवर्तन होनेका परिणाम २८ जनवरी सन् १८५९ ई० को प्रकट हुआ, जब गवर्नमेंटने यह हुक्म निकाला कि शिक्षाके फैलानेमें भारतवासियोंकी सम्मति न ली जाय और कलक्टरोंको चाहिए कि वे लोगोंको इस बातकी ताकीद न करें कि वे अपने बालकोंको स्कूलोंमें पढ़नेके लिए भेजें और न उनसे शिक्षाके कामके वास्ते रुपया माँगें। ३० मार्च सन् १८५९ ई० को इस हुक्मके प्रतिकूल ह्यूम साहबने गवर्नमेंटको शुद्ध हृदयसे नम्रता पूर्वक एक पत्र लिखा कि कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स (Court of Directors) ने अधिकारियोंको हुक्म दे रक्खा है कि जहाँ तक बने वे अपने प्रभावसे शिक्षा फैलानेमें सहायता देवें। फिर उन्होंने यह भी साफ़ तौरसे समझा कर लिखा है कि लोगोंको शिक्षाके महत्त्व पर तभी विश्वास होगा, जब स्वयं उनके अगुआ उनको समझाँयगे। अंतमें उन्होंने बहुत ही करुणाके शब्द लिखे हैं। वे लिखते हैं:—

" जितना साहस मुझे इस कार्यमें है और जितना ध्यान मैं इसकी ओर देता हूँ, उससे मुझे बहुत कुछ आशा है। गत कई वर्षोंसे मैं अपने अवकाशके समयको इसी सोच-विचारमें लगाता रहा हूँ और मेरी आशायें भी इसी पर लग रही हैं। यद्यपि अभी बहुत थोड़ा हो पाया है, परंतु आशा है कि बहुत कुछ हो जावेगा। जैसे बहुत दिनके बर्फ़के पहाड़से रुके हुए नदमेंसे पहले जरा जरासा पानी टपकता है, परंतु पीछे कुछ ज्यादह ज्यादह होता जाता है, यहाँ तक कि ठंडे बर्फके पहाड़को दूर करके अंतमें नद अच्छी तरह बहने लगता है; इसी तरह शिक्षाका प्रभाव अविद्याको थोड़ा थोड़ा दूर करके बिल्कुल दूर कर देगा और विद्याका प्रकाश सम्पूर्ण भारतमें हो जावेगा। शोकके साथ कहा जाता है कि इतिहास ऐसे उदाहरण पेश करता है कि जिनमें बहुत समयसे

रुकी हुए नदी तमाम रुकावटोंको तोड़ कर निकल गई और उन सब जगहों पर बरबादीका कारण हुई जहाँ कि उसे फल पैदा करने चाहिए थे। हमारा कर्तव्य है कि हम रास्ता साफ करें न कि उसमें रुकावटें डालें। हमारा कर्तव्य है कि पालिसीकी निःसार व्याख्याओंसे नहीं किंतु लोगोंकी सहानुभुति और सहायतासे शिक्षाका प्रचार करें और यह भी देखें कि यह ठीक ठीक उन्नति कर रही है या नहीं और इससे अच्छी अच्छी बातें उत्पन्न हो रही हैं या नहीं।

जो कागज मिल सके उनसे यह तो पता नहीं लगता कि ह्यूम साहबके इस लेखका क्या परिणाम हुआ; परंतु इससे यह अवश्य विदित होता है कि अबसे ५० वर्ष पहले घोर कठिनाइयोंके समयमें भी कैसी वीरतासे ह्यूम साहबने शिक्षाके पक्षका समर्थन किया था। इससे उन लोगोंको साहस और उत्साह होना चाहिए जिन्होंने प्रारम्भिक शिक्षाको मुफ्त और आवश्यक बना कर अपने गरीब भाइयोंको अज्ञानताके अंधकारसे निकालनेका बीड़ा उठा रक्खा है।

२ पुलिससुधार।

सन् १८६० ई० में गवर्नमेंटने पुलिस-कमीशनकी अनुमतिके अनुसार पुलिसका प्रबंध करनेके लिए हुक्म जारी किया और हर एक जिलेमें पुलिससुपरिंटेंडेंट नियत किया गया। सुपरिंटेंडेंटको पुलिसके इन्स्पेक्टर जेनरलकी आज्ञानुसार काम करना होता था। पहली जनवरी सन् १८६१ ई० तक ह्यूम साहबने आज्ञानुसार इटावेकी पुलिसका संगठन तो कर दिया, परंतु साथ ही उन्होंने यह भी अपना कर्तव्य समझकर गवर्नमेंटको लिखा कि मेरे खयालमें यह नवीन प्रथा ठीक नहीं है। यह पूरे तौरसे काममें भी नहीं लाई जा सकती और कुछ बातोंमें छोड़ कर इस परिवर्तनसे बिगाड़ होना भी सम्भव है। ह्यूम साहबने इस नये ढंगमें जो त्रुटियाँ निकाली थीं, वे संक्षेपसे इस प्रकार हैं —१ इससे

पुलिस और जुडीशलका काम अलग नहीं रहता, २ पुलिससुपरिंटेंडेंट और जिलेके मैजिस्ट्रेटकी जिम्मेवारी बढ़ जाती है। ३ पुलिससुपरिंटेंडेंट-को, जिसे फौजदारीके मुकदमोंकी खोजका कुल काम करना होता है, न तो स्थानीय अनुभव होता है और न उसका कुछ प्रभाव। ह्यूम साहबकी यह राय थी कि जिलेका कलक्टर पुलिस समेत समस्त विभागोंका अधिकारी रहे। उसीके द्वारा समस्त विभागोंका हाल सरकारको मालूम होता रहे; परंतु न तो वह और न उसका कोई अधीन कर्मचारी मैजिस्ट्रेटीके अधिकार रक्खे। उनकी सम्मति यह थी कि पुलिसका काम कलक्टरके अधीन कर्मचारी करें; परंतु वे ऐसे हों जो लोगोंको भली-भाँति जानते हों और गवर्नमेंटकी हुकूमतका प्रभाव भी उन पर डाल सकते हों और कलक्टर जिला-पुलिसका मुख्य कर्मचारी होनेकी अपेक्षा इन्स्पेक्टर जेनरल द्वारा जिलेमें शांति बनाये रखने और अपराध कम करनेका जिम्मेवार हो। जिलेकी साधारण मैजिस्ट्रेटीका काम भिन्न भिन्न दरजोंके आनरेरी मैजिस्ट्रेटों (Honorary Magistrates) और सबार्डिनेट जजों (Subordinate Judges) के सुपुर्द किया जाय और वे एक और मैजिस्ट्रेटके अधीन रहें जिसकी अदालतकी अपील शेसनजजके यहाँ हो। यह तजवीज ह्यूम साहबकी थी। इससे पुलिस और जुडीशल दोनों काम बिल्कुल अलग अलग हो जाते थे जिसकी आवश्यकता अभी तक लोगोंको प्रतीत हो रही है। यह राय उन लोगोंको भी अच्छी मालूम होगी जो चाहते हैं कि कलक्टर जिलेमें राज्यके सम्पूर्ण विभागोंका जिम्मेवर अफसर रहे।

२ आबकारी।

इस विषयमें भी १४ सितम्बर १८६० ई० को ह्यूम साहबने रिपोर्ट की थी कि गवर्नमेंटकी आज्ञाओंका पालन कर दिया गया है और इसमें पिछले वर्षसे १८५८)रु० की और गत १० वर्षोंकी औसत आमदनीसे ५२५१)

रु० की विशेष वृद्धि हुई हैं। परंतु साथमें उन्होंने इस प्रकारकी आमदनी-से बड़ी घृणा प्रगट की। उन्होंने लिखा है कि " आमदनीकी अपेक्षा उस श्रमको देखते हुए, जो आबकारीके प्रबंधोंमें उठाना पड़ा, यह कहना चाहिए कि अच्छी सफलता हुई; परंतु मुझको आबकारीकी आमदनी बढ़ते हुए देख कर बड़ा शोक होता है। प्रतिवर्ष मुझे इस अधार्मिक प्रथाके विरुद्ध कहना पड़ता है, परंतु कुछ भी लाभ नहीं होता। क्यों कि इस विभागके खुल जानेसे बहुतसे लोगोंकी आजीविका इस बातमें हो गई है कि वे लोगोंको मद्यपान तथा उसके सहकारी व्यभिचार आदिकी ओर फुसलावें। इन फुसलानेवालोंको अपने उद्योगमें बड़ी सफलता होती है। प्रति वर्ष शराबियोंकी संख्या बढ़ती जाती है और नशेली चीजोंकी माँग ज्यादह होती जाती है। जिन लोगोंने मेरे समान इस बातके जाननेमें कष्ट उठाया है कि देशी जातियोंकी क्या हालत है, उन्हींको इस बातका ज्ञान है कि यह भयंकर प्रथा गत वर्षोंमें कितनी बढ़ गई है और जब प्रजामें व्यभिचार आदि फैल जाता है, तब उनके बरबाद होनेके कारण हम उनसे कोई आर्थिक लाभ भी नहीं उठा सकते। पुरानी कहावतके अनुसार हम यह कह सकते हैं, कि यह आमदनी पापहीके कामोंमें लग जाती है। आबकारीकी एक रुपयेकी आमदनी-के पीछे दो रुपये प्रजाके पापमें और राजाके पाप दूर करनेमें लग जाते हैं। अब इस विषयमें अधिक कहना फिजूल है, क्योंकि गत ५ वर्षोंसे लगातार मैं इस प्रथाका विरोध करता चला आ रहा हूँ, परंतु कुछ भी लाभ नहीं हुआ। यद्यपि इस समय मुझे सुधारकी कुछ भी आशा नहीं है, तथापि मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि मैं यहाँ कुछ और रहा, तो मैं भारत सरकार पर लगे हुए इस धब्बेको किसी धार्मिक सुधारसे धोया हुआ देख सकूँगा। मुझे आशा है कि मेरा यह पत्र ज्योंका त्यों बोर्ड-के सामने पेश कर दिया जायगा। शोकके साथ कहना पड़ता है कि आज ५० वर्ष बीतने पर भी यह भारी धब्बा लगा हुआ है।

४ प्रजा-प्रेम The People's Friend

ह्यूम साहबको भारतवर्षकी भावी अवस्थाकी बड़ी चिंता थी और इसी वास्ते उनको यहाँके नवयुवकोंका, चाहे वे शिष्ट हों चाहे आशिष्ट, बड़ा खयाल था। यद्यपि स्कूलोंसे प्रतिवर्ष छात्र तैयार होकर निकलते थे, उनमें पढ़ने लिखनेकी योग्यता भी हो जाती थी और बुद्धिका भी कुछ विकाश हो जाता था; परंतु देशभाषाकी पुस्तकें बहुत महँगी थीं और बहुत कम मिलती थीं। साथमें ही ये कुछ शिक्षाप्रद भी नहीं थीं। इस कारण ह्यूम साहबने अपने मित्र कुँवर लक्ष्मणसिंहकी सहायतासे इस कमीकी पूर्ति करनेका दृढ़ विचार किया और सन् १८५९ ई० के अंत तक उन्होंने भाषामें एक पत्र निकालना आरम्भ किया। यह बहुत अच्छी तरह चलाया जाता था और इसका चंदा भी इतना सस्ता रक्खा गया था कि गाँवके गरीबसे गरीब आदमी भी इसे आसानीसे खरीद सक्ते थे। शुरूमें तो यह केवल इटावेके लोगोंके लिए ही था; परंतु बादमें इसकी प्रशंसा सम्पूर्ण प्रांतमें फैल गई और यह ग्वालियर और भरतपुर तक जाने लगा। यह पत्र सरकारी नहीं था, इस कारण किसीको भी इसमें पक्षपातका संदेह नहीं होता था। इस पत्रने लोगोंको सरकारकी पालिसीके समझाने तथा लोगोंके हृदयोंमें विरुद्ध भावके उत्पन्न न होने देनेमें बड़ी सहायता दी थी। इसकी ६०० प्रतियाँ संयुक्त प्रांतकी सरकार लेती थी। बड़े लाट साहबकी भी इस पत्र पर कृपादृष्टि हुई और उनकी सलाहसे इसकी कुछ प्रतियाँ, अनुवाद सहित भारत-सचिव (Secretary of State) के पास इस अभिप्रायसे भेजी गई कि वे उसे महारानी विक्टो-रियाको दिखलावें। इसका यह भाव था कि महारानी भारतवर्षके सबसे पहले पत्रको देख कर और यह जान करके कि इतनी दूर रहनेवाली प्रजाको उनके प्रति कितना प्रेम है, बड़ी प्रसन्न होंगी।

५ अपराधी युवकोंका सुधार।

ह्यूम साहबका केवल अच्छे लड़कोंकी ओर ही ध्यान नहीं था, किंतु बुरे लड़कोंके सुधारकी भी उन्हें चिंता थी। ऐसा जान पड़ता है कि इटावेके जिलेमें कुछ चोरोंके दल बाहरसे आकर समय समय पर आक्रमण किया करते थे। पुलिस उनको पकड़ कर मैजिस्ट्रेटके सामने ले जाया करती थी और मैजिस्ट्रेट उनके कोड़े लगवाते थे, या उन्हें जेलमें भेज दिया करते थे। इससे चोर और भी ढीठ हो गये और चोरीसे बढ़ कर डकैती करने लगे, अथवा चोरीका माल रखने लगे। इन लोगोंके साथ खास तौरसे बर्ताव करनेकी जरूरत थी। सन् १८६३ ई० में ह्यूम साहबने एक सुधार-शाला खोलनेके वास्ते जोर दिया, जिसमें छोटी उमरके अपराधी बड़ी उमरके अपराधियोंसे अलग रक्खे जावें। उनको शिक्षा और नियम आदिसे सुधारा जाय और कोई ऐसा कार्य सिखला दिया जाय जिस से वे सुधार-शालासे जानेके पश्चात् अपनी आजीविका पैदा कर सकें। पहले तो भारत-सरकारने सुधार-शालाओंकी तजवीजको पसंद नहीं किया, केवल यह स्वीकार कर लिया कि सेंट्रल जेलमें युवा अपराधी अलग रक्खे जावें; परंतु सन् १८६७ ई० में ह्यूम साहबने फिर इस तजवीजको उठाया और पश्चिमोत्तर प्रांतके छोटे लाटकी सहायता पाकर दूसरी सितम्बर सन् १८६७ ई० को इटावेके समीप किसी अच्छी जगह पर सुधार-शाला बनानेके लिए विशदरूपसे रिपोर्ट की गई। भाग्यसे ह्यूम साहबके साथ इस मामलेमें जेलोंके इन्सपेक्टर जेनरल डाक्टर क्लार्क तथा जेलके सुपरिंटेंडेंट डाक्टर शेरलाककी भी सहानुभूति हो गई। डाक्टर शेरलाकने अपने नियमित कार्यके अतिरिक्त सुधार-शालाका काम भी अपने जिम्मे लेना स्वीकार कर लिया। जो ढंग इन्होंने सोचा था, वह बिल्कुल वैसा था जैसा आयरलेंडमें प्रचलित है। उनकी तजवीज थी कि मकान गोल बनाया जाय। शुरूमें चौथाई

भाग बनवाया जावे। यह मकान जनवरी सन् १८६८ ई० तक तैयार हो सकता था, और इसमें १०० युवा अपराधी रह सकते थे। मकानका तखमीना ११०००) रु० का था और खाने वगेरहका खर्च ४६४) रु० प्रति मासका था। विचार यह था कि आगरा और इलाहाबादकी कमिश्नरियोंसे १०० युवा अपराधी प्रतिवर्ष आवेंगे और तीन वर्ष तक एक एक चौथाई मकान तैयार होता रहेगा। चूंकि अपराधी वहाँ पर आम तौरसे चार वर्ष तक रक्खे जावेंगे, इस तरह पहली जनवरी सन् १८७१ ई० तक मकानका पहला हिस्सा खाली हो जायगा और दूसरे अपराधियोंके लिए जगह हो जावेगी। पूर्ण हो जाने पर कुल मकानका खर्चा २५०००) रु० पड़ेगा और मासिक खर्च १२५०) रु०। इस तजवीजको पश्चिमोत्तर प्रांतकी सरकारने स्वीकार कर लिया और स्वीकारताके लिए भारत-सरकारकी सेवामें भी भेज किया।

अन्य विषयों पर भी ह्यूम साहबने बड़ी मारकेकी रिपोर्ट की है। उदाहरणके लिए उस पत्रको लीजिए जो उन्होंने काटन-ऐसोशियेशन मैनचेस्टरके मंत्री हेवुड साहबके पत्रके उत्तरमें लिखा था। यह पत्र इतना मनोरंजक है कि हम इसको संक्षेपमें न देकर ज्योंका त्यों पुस्तकके अंतमें परिशिष्ट नं० १ में देते हैं। नहरकी आबपाशीके सम्बन्धमें भी जो २० पृष्ठोंकी रिपोर्ट ह्यूम साहबने लिखी थी, उससे उनकी योग्यताका पता लगता है। हम समझते हैं कि उनकी योग्यता और बुद्धिमत्ताके इतने ही उदाहरण काफी हैं, अधिक लिखनेकी जरूरत नहीं है। बड़े हर्षकी बात है कि उनके जिलेके प्रबंधकी सदैव प्रशंसा होती रही। पुलिस-शासनके विषयमें प्रांतीय लाटने लिखा था कि "हम ह्यूम साहबको मुबारिकबादी देते हैं कि उनके उद्योगसे इटावेके जिलेमें, जहाँ कभी बड़ी अशांति थी, अपराध बिल्कुल बंद हो गये हैं। यह और भी संतोषकी बात है कि बाल-हत्याका घोर पाप भी उनके

उद्योग और प्रभावसे बहुत कम हो गया है। उन्होंने एक सालमें १७२ आदमी ऐसे पकड़े जिनको कानूनकी पाबंदीका बिल्कुल भी खयाल नहीं था और जो खुल्लम-खुल्ला अपराध करते थे। " गवर्नमेंटने अपने १३ नवम्बर सन् १८६० ई० के हुक्ममें उनके कार्य और चरित्रकी प्रशंसा करते हुए लिखा है कि " अपूर्व शासन-योग्यता, अखंड श्रम और अश्रांत उद्योगके अतिरिक्त ह्यूम साहब अपने जिलेकी उन्नति और वहाँके लोगोंकी भलाईमें बड़ी दिलचस्पी रखते है और अपने कर्तव्यके पालन-में अपनी शारीरिक आवश्यकताओंकी भी आहुति दे देते हैं। " इसके अतिरिक्त ४ मार्च सन् १८६१ ई० के गवर्नमेंटके प्रस्तावमें लिखा था, कि लॅफ्टेंट गवर्नर साहबको इटावेके निरीक्षण करनेमे बड़ी सन्तुष्टता हुई और उनकी इच्छा है कि ह्यूम साहबकी योग्यता, साहस और न्याय-शक्तिका, जिससे वे शासन कर रहे हैं, स्थाई रूपसे उल्लेख किया जावे।

(ख) १८६७ ई० से १८७० ई० तक।

चुंगीके कमिश्नर।

जुलाई सन् १८६७ ई० में ह्यूम साहब पश्चिमोत्तर प्रांतके चुंगीके कमिश्नर नियत हुए। यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि वे एक बड़े विभागके अध्यक्ष नियत किये गये; क्योंकि हम देख चुके हैं कि उन्होंने जिलेकी अफसरीका काम कितनी योग्यतासे किया है। इस पद पर रह कर इन्होंने सबसे बड़ा काम यह किया कि नमकका बड़ा भारी झगड़ा तय कर दिया। सरकार अपना नमक चलाना चाहती थी और राजपूतानेमें साम्भर-झीलमें कई रियासतोंकी ओरसे नमक बनता था। सरकारने कई वार यह झगड़ा तय करनेकी तजवीज की, परंतु कुछ फल नहीं हुआ। नमकका बनाना रोकनेके वास्ते अटकसे लेकर कटक तक २५०० मील तककी सरकारको हिफाजत करनी होती थी। इसमें बहुत रुपया फिजूल खर्च होता था और बड़ी दिक्कतें होती थीं। फिर भी लोगोंको बेईमानी कर-

नेका मौका मिल जाता था। नमकका बनाना रोकनेका प्रस्ताव बहुत दिनोंसे उपस्थित था। कई बड़े लाटोंने भी इसको पसंद कर लिया था। परंतु एकदमसे रोकनेमें सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि कई रियासतोंसे संधियाँ हो रही थीं। उनसे लिखा-पढ़ी करना और यह तय करना कि किस तरह रियासतें सन्तुष्ट रहें, एक बड़ा भारी काम था। ह्यूम साहबने यह तमाम काम बड़ी सफलतासे किया और भारत-सचिवने उनके इस कामकी बड़ी प्रशंसा की। ६ फरवरी सन् १८७९ ई० को उन्होंने बड़े लाटको लिखा था कि आपने जो ह्यूम साहबकी दीर्घ और बहुमूल्य सेवाकी प्रशंसा की है, उससे मैं पूर्ण सहमत हूँ। जैसा आपने लिखा है निश्चयसे राजपूतानेकी रियासतोंसे नमकका मामला तय करनेका काम ह्यूम साहबने ही आरम्भ किया और उन्होंने ही उसे पूर्णता पर पहुँचाया। जिन शर्तोंसे साम्भर-झील तथा अन्य नमककी खानें सरकारने रियासतोंसे लीं, उनके विषयमें ह्यूम साहबने स्वयं कुछ मनोहारी बातें पत्रोंमें लिखी थीं। एक तरफ तो कहा जाता था कि रियासतोंको बहुत ही कम और तुच्छ बदला मिला और दूसरी तरफ यह भी दूषण लगाया जाता था कि ह्यूम साहबने बड़ी बे-परवाईसे उदारता की। मुआवजा कम होनेके सम्बंधमें तो मिस्टर ह्यूमने लिखा था कि सबसे अधिक जयपुर और जोधपुर रियासतोंका सम्बंध साम्भर-झीलसे है। इस शर्तके अनुसार जयपुरको पिछले वर्षकी आमदनीकी अपेक्षा दुगुना रुपया मिला और जोधपुरको पहलेकी अपेक्षा ३ लाख अधिक मिले। इसके विपरीत सरकारकी तरफसे जो उन पर उदारताका दूषण लगाया जाता था, सो वह भी

हुआ । अंतिम परिणामसे यह ठीक ही हुआ, कारण कि वैज्ञानिक रीतिको काममें लानेसे सरकारको इस सौदेमें बड़ा लाभ हुआ। और लोगोंको भी लाभ रहा । जहाँ पहले १५ लाख मन नमक पैदा होता था वहाँ अब ५० लाख मन तैयार हुआ और वह लोगोंको ७) रु० मनके बदले ३८= मनके हिसाबसे मिलने लगा और पहलेसे अच्छा मिलने लगा ।

कृषि-विभाग ।

सरकारी माल-गुजारीको बढ़ाते हुए ह्यूम साहबको किसानोंकी भलाईकी भी सदैव चिंता लगी रहती थी । भाग्यसे भारतके उस समयके बड़े लाट लार्ड मेयोकी उनके विचारोंसे पूर्ण सहानुभूति हो गई । लार्ड मेयो स्वयं कृषिका काम किये हुए थे । उन्होंने किसी समयमें कृषिसे आजीविका पैदा की थी । वे कहते थे कि 'मैं सारे सारे दिन जानवर बेंचनेके लिए बाजारमें खड़ा रहा हूँ । अब तक सरकारका ध्यान विशेष कर माल-गुजारीके जमा करनेमें लगा हुआ था । कृषिके सुधारकी ओर कुछ भी नहीं था । कहना चाहिए कि भेड़ परसे ऊन काटनेका तो ध्यान था, परंतु उसको खिलाने पिलानेका बिल्कुल खयाल नहीं था । लार्ड मेयो इस विषयमें बड़े निपुण थे । वे समझते थे कि इस नीतिका परिणाम बड़ा भयंकर होगा । अतएव उन्होंने ह्यूम साहबकी सलाहसे इसके इलाजके वास्ते एक कृषि-विभाग स्थापित किया और उसको एक चतुर डाइरेक्टर जेनरलके अधीन रक्खा । ह्यूम साहबने सन् १८७९ ई० में 'भारतमें कृषिका सुधार' इस विषयकी एक पुस्तक लिखी थी जिसमें उन्होंने तजवीज की थी कि कृषि-विभागका अध्यक्ष डाइरेक्टर जेनरल होगा और उसको अपने विभागका पूर्ण अधिकार रहेगा । उसमें लिखा था कि डाइरेक्टर जेनरलके नीचे कुछ होशियार कर्मचारी होंगे और आवश्यकताके अनुसार दफ्तर भी रहेगा । इस विभागमें लिखाईका काम यथासंभव कम होगा और असली काम अधिक होगा । प्रत्येक प्रांतमें डाइरे-

क्टर रक्खे जावेंगे और उनकी सहायताके लिए इस विषयके कुछ चतुर मनुष्य उनके नीचे रक्खे जावेंगे। ये लोग अपना काम कुछ तो खेतों और कृषि-स्कूलोंके द्वारा करेंगे और कुछ माल-विभागके कर्म-चारियों द्वारा, जिनमें पटवारी तक भी शामिल होंगे। इस बातको सब लोग खुल्लम-खुल्ला जानते थे कि लार्ड मेयो ह्यूम साहबको कृषिके लिए आदर्श डाइरेक्टर जेनरल समझते थे। निःसंदेह जो कोई उनकी पुस्तक पढ़ता है, उसको मालूम हो जाता है कि किस प्रकार उन्होंने किसानोंको दशाका, उनकी भलाइयों और बुराइयोंका, कठिनाइयों और आपत्तियों-का अध्ययन किया था और उनके सुधारके लिए उद्योग किया था। उन्होंने लिखा था कि ३००० वर्षके अनुभवसे भारतके किसानोंको अपने बाप-दादोंके खेतोंका पूरा पूरा हाल मालूम हो गया है और वे यहाँ तक जानते हैं कि किस रोज और कौनसा अनाज बोना चाहिए, जमीन कितने प्रकारकी होती है, कौनसी जमीन कितना पैदा कर सकती है, खाद कैसी उपयोगी चीज है और गहरे हल जोतनेसे क्या लाभ है, ये सब बातें उनको अच्छी तरहसे मालूम हैं। वे खेतोंकी निलाईमें बड़े होशियार हैं। भूसे वगैरहमें उनके गेहूँके खेत योरुपके १०० मेंसे ९९ खेतोंको मात दे सकते हैं। उनके मौजूदा ढंगमें तो हम उनको कुछ नहीं सिखला सकते, पर हमें उनकी विद्याको अधिक नहीं समझना चाहिए। कारण कि जो कुछ उन्हें मालूम हुआ है, वह सब प्रायः सुन सुनाकर और अनुभवसे मालूम हुआ है। जिस तरह बाप-दादोंके द्वारा होता आया है उसी तरह वे कर सकते हैं। भारतके किसानोंको केवल बाहरी कठिनाइयोंका ही सामना नहीं करना पड़ता और केवल यही बात नहीं कि उनका ज्ञान अभी बिल्कुल शुरूकी हालतमें है, किंतु जो कुछ थोड़ा बहुत ज्ञान है, वह भी प्रायः पुरानी जमानेकी कहावतों और किं-वदंतियोंके कारण बेकार है। ह्यूम साहबने अपनी पुस्तकके अन्तमें कुछ दोहों और छन्दों-

को उद्धृत किया है जिनमें लिखा है कि किसान लोग ग्रहों और नक्षत्रोंसे फसिलकी पैदावारका फल निकालते हैं। २३ मई और ४ नवम्बरके बीचमें जो १२ नक्षत्र आते हैं वे किसानोंके बड़े कामके हैं। उनसे उन्हें विदित हो जाता है कि इनका बोने-काटने अथवा बरसात-वगैरह पर अच्छा या बुरा कैसा असर पड़ेगा। उन्होंने लिखा है कि शकुनों और झूठे विचारोंसे जो उन्नतिमें रुकावटें आ रही हैं वे तो शिक्षाके अनिवार्य और मुफ्त प्रचारसे धीरे धीरे जाती रहेंगी, पर और कई ऐसे कारण हैं जिनसे किसानोंको अनेक प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। जैसे खाद और सिंचाईके लिए रुपयोंकी कमी, वोहरे और साहुकार लोगोंका बंधन और बैलोंका अधिक मरना। बैलोंके साथ जैसा शोचनीय और दुःखप्रद व्यवहार किया जाता है, उसके विषयमें ह्यूम साहबने लिखा है कि भारतके अधिक तर भागमें सालमें ६ हफ्ते जानवर भूखों मरते हैं। गरम हवायें जोर जोरसे चलती हे। हरियालीका कहीं नाम तक भी नहीं रहता। गरमीमें कोई चारा बोया नहीं जाता। पिछली फसिल कुवोंके बैलोंके काममें लाई जाती है जिससे आबपाशी होती रहे। बाकी जानवरोंको इधर उधरके वृक्षों और झाड़ियोंकी पत्तियां और टहनियोंकी कुट्टी खिला कर अथवा खेतोंके किनारोंकी जड़ोंको खिला कर जीवित रक्खा जाता है। सुकालमें तो काम चल जाता है, परंतु अकालमें निर्बल जानवर भूखके मारे मर जाते हैं। गरमीके बाद बरसात होती है और एक हफ्तेके अन्दर जादूके तमाशेकी तरह जल्दी हुई रेती तक हरी-भरी हो जाती है। अब चौपाये जो महीनोंसे खाली पेट मर रहे थे, पेट भरकर बल्कि उससे भी ज्यादह खा जाते हैं और लाखों जानवर एक धारगी परिवर्तनके कारण तरह तरहके रोगोंमें ग्रसित होकर मर जाते हैं। ह्यूम साहबने हिसाब लगाया था कि भारतमें एक करोड़के करीब जान-

वर एक सालमें ऐसे रोगोंसे मर जाते हैं कि जिनको रोका जा सकता है। एक करोड़ जानवरोंका मूल्य कमसे कम ११२५०००००)रु० होता है। चौपायोंमें इतनी मरी हो जानेसे किसानोंको केवल खादका ही नुकसान नहीं होता, किंतु और भी भारी नुकसान होता है। क्योंकि इन लोगोंका मालमत्ता केवल चौपाये ही हैं और इन्हींको लापरवाहीके कारण बरबाद कर दिया जाता है। ह्यूम साहबने इसका इलाज यह सोचा था कि गाँवमें चारा बोया जाय, पशु-चिकित्साके विद्यालय खोले जावें और लोगोंको इस विषयका उपयोगी ज्ञान कराया जाय, तथा इसी प्रकारके अन्य कार्य किये जावें। भारतका जल वायु, जो भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न प्रकारका है, चौपायोंके लिए बहुत ही उपयोगी है। जिसने कभी जानवरोंको रक्खा है वह जानता है कि यदि इनको परिमित रूपसे खिलाया पिलाया जाय और उनसे खूब काम लिया जाय, परंतु छूतकी बीमारियोंसे बचा कर रक्खा जाय तो वे कभी बीमार नहीं होंगे, बुढ़ापे तक हट्टे कट्टे और मजबूत रहेंगे और खूब काम देते रहेंगे। इनमें बढ़ौतरी भी खूब होती है। यदि ये ठीक तरहसे रक्खे जावें, तो सारे देशमें चौपाये ही चौपाये दीख पड़ें। यह खेतीका भारीसे भारी काम कर सकेंगे और गहरीसे गहरी जोताई हो सकेगी।

ह्यूम साहबकी रायमें किसानोंको जो साहूकारोंके बंधनमें रहना पड़ता है इसका कारण दीवानीकी अदालतें हैं। उन्होंने तजवीज की थी कि इन लोगोंके कर्जेके मुकदमे वहींके वहीं तय हो जाने चाहिए, कचहरीमें जानेकी जरूरत नहीं है। चतुर बुद्धिमान और सच्चे आदमी पंच बनाकर एक गाँवसे दूसरे गाँवमें भेजे जायँ और गाँवके नम्बरदारोंकी मददसे वहाँके कर्जेके झगड़ोंको वे तय करादें। इसका जो परिणाम होगा वह ह्यूम साहबने इस प्रकार लिखा है।

"ये लोग किसी कायदे कानूनके बंधनमें न होंगे, किंतु दोनों पक्षोंके

कुल कथनको कर्जदारके गाँवकी चौपालमें ही सुनेंगे। यह बात किसीसे अप्रगट नहीं है कि कचहरीमें जाकर गवाह लोग झूठ बोल देते हैं; परंतु गाँवमें अपने पड़ोसियोंके सामने झूठ नहीं बोल सकते। वहाँ सब सच्चा सच्चा हाल कह देंगे; क्योंकि हर एक आदमी एक दूसरेके हालको अच्छी तरह जानता है। यदि कोई जरा भी उलट पलट कर कहेगा तो सब लोग वाह वाह करके उस पर आक्षेप करने लगेंगे, जिससे उसे तुरंत मालूम हो जायगा कि मैं कचहरीमें नहीं हूँ और यहाँ इस किस्मका झूठ नहीं चल सकता। सन् १८७९ ई० में दक्षिणकी दुखी प्रजाके लाभके लिए इसी ढंग पर एक विशद रूपसे तजवीज की गई थी, परंतु बम्बई सरकारने उसे नहीं चलने दिया।

उपर्युक्त बातोंसे मालूम होता है कि ह्यूम साहबको प्रजाके साथ कितनी सहानुभूति थी और उनके पिछले अनुभवने कृषि-सुधार-का काम चलानेके वास्ते उन्हें कैसा योग्य बना दिया था। इसके अतिरिक्त वे स्वयं वैज्ञानिक योग्यता रखते थे। योरुप देशका कृषिकर्म उन्हें अच्छी तरह मालूम था। जर्मनी और अंग्रेजी भाषामें कृषि पर जो पुस्तकें लिखी गई हैं उनका भी उन्होंने खूब अध्ययन किया था। एक जिलेके अधिकारी रहते हुए उन्होंने अपने ज्ञानकी वृद्धि तथा मनोरंजनके लिए खेतका काम भी वर्षों किया था। इन सब बातोंके सिवाय अब वे लार्ड मेयो के साथ रहते थे। इस कारणसे अब उन्हें कृषिके विषयमें पूर्ण रूपसे वाद-विवाद करनेका मौका मिल गया था। इन सब बातोंके साथ साथ यदि ह्यूम साहबकी शक्ति और उत्साहको मिला दिया जाय तो मालूम होगा कि यदि वे कृषि-विभागके अधिकारी बना दिये जाते तो भारतवर्षके कृषकोंको कितना लाभ पहुँचता और देशकी कितनी उन्नति होती।

हत-भाग्य लार्ड मेयो अपनी तजवीजको काममें न ला सके। शिमले

तथा लंदनके इण्डिया दफ्तरमें (India Office) में उनके प्रतिकूल ऐसी बातें हुई कि जिनका वे सामना न कर सके। आर्थिक विषयोंके आक्षेप दूर करनेके लिए उन्होंने अपनी तजवीजको बदल भी दिया और बदलनेसे तजवीजमें बड़ी कमजोरी आ गई; परंतु तिस पर भी उस तजवीजका घोर विरोध हुआ। किसी भी वाइसरायकी तजवीजका कभी इतना विरोध नहीं हुआ होगा और फिर ऐसे वाइसरायकी तजवीज कि जो कृषि-कर्ममें स्वयं दक्ष थे। परिणाम यह हुआ कि घटते घटते उस तजवीजमेंसे वे सब बातें जाती रहीं जिनसे इच्छित सफलता होती। गरज यह है कि तजवीजका यों ही सत्यानाश हो गया। इसी तरह सन् १८८४ ई० में लार्ड रिपनकी कृषि-बेंकोंकी तजवीज बरबाद हो गई थी। उन्होंने तजवीज की थी कि हिन्दुस्तानमें कृषि-बेंक खोले जायें, यद्यपि भारत और इंगलेंड दोनों देशोंकी प्रजाने इसको भी पसंद किया था और लार्ड रिपनने इसका बलपूर्वक समर्थन किया था; परंतु इण्डिया दफ्तरके द्वार पर पहुँचते ही इस बेचारी तजवीजकी मौत आ गई और यह नाशको प्राप्त हो गई।

(ग) सन् १८७० ई० से १८७९ ई० तक।

भारत सरकारके मंत्री।

जब लार्ड मेयोको कृषिका पृथक् विभाग स्थापित करनेमें सफलता नहीं हुई, तब उन्होंने कृषिको फुटकर विभागमें शामिल कर देने पर ही संतोष किया और उसका नाम 'कर, कृषि तथा व्यापार-विभाग' (Department of Revenue, Agriculture & Commerce) रक्खा। जुलाई सन् १८७१ ई० में उन्होंने ह्यूम साहबको गृह (Home) विभागसे निकाल कर, जहाँ वे एक वर्षसे मंत्रीका काम कर रहे थे, कृषि-

विभागका मंत्री नियत कर दिया। साथ, ही लार्ड महोदयने इस नवीन विभागके नाममें भी थोड़ासा परिवर्तन कर दिया और वह यह कि कृषिके शब्दको शुरूमें रख दिया। परंतु भारत-सचिवने इस पर शंका की और अपने ३ अगस्त सन् १८७१ ई० के पत्रमें लिखा कि इस विभागके नाममें 'कर' शब्द मुख्य है, इस लिए 'कर' कृषिसे पहले ही होना चाहिए। उसीके साथ यह नियम भी बना दिया कि विभाग मंत्री वही व्यक्ति होना चाहिए जो माल (Revenue) का विशेष अनुभव रखता हो, न कि वह जो कृषि अथवा व्यापारका अनुभवी हो। अत: कृषिको फिर पीछे हटना पड़ा। इस परिणामको देख कर ह्यूम साहबने लिखा है कि जिस रूपमें यह विभाग बना है उससे न तो पहले यह कृषि-विभाग था और न कभी सरकारका इसको कृषि-विभाग बनानेका इरादा था। लार्ड मेयोको आशा थी कि इसमें परिवर्तन होकर यह कृषि-विभाग बन जायगा: परंतु उनकी मृत्युसे भारतका कृषि-सुधारका सच्चाहितैषी, उत्साही, और प्रभावशाली मित्र जाता रहा। जैसा परिवर्तन लार्ड मेयो चाहते थे, वैसा कभी नहीं हुआ, बल्कि उनके बाद और भी सूरत खराब हो गई। अब मंत्री केवल दफ्तरमें बैठ कर कागजी कार्यवाही करनेवाला रह गया। उस समय सरकारका ऐसा भाव न था कि उत्तम कृषि ही भारतकी आर्थिक उन्नतिका मूल है।

यद्यपि लार्ड मेयोकी तजवीजके नाश हो जानेसे ह्यूम साहबको निराशा तो बहुत हुई, परंतु इसके कारण उन्होंने अपने उद्योगमें कमी नहीं की। वे उन लोगोंमेंसे थे जिनको यदि इच्छित सामग्री न मिले, तो भी जो कुछ उन्हें मिले उसीको वे उपयोगी बना लेते थे। उन्होंने लिखा था कि यद्यपि लार्ड मेयोका कृषि-विभाग पूर्णरीतिसे न बन सका तथापि जो कुछ बना उससे भारतके इतिहासमें एक नवीन बात पैदा हो गई और उससे बड़ा भारी मतलब हल हो गया। कारण कि

इसमें बहुतसी ऐसी शाखायें सम्मिलित हो गई जिन पर देशकी आर्थिक अवस्थाका सुधार बहुत कुछ निर्भर है। ऐसा विचार रखते हुए ह्यूम साहबने, जब तक वे मंत्री रहे, जिस कार्यको हाथमें लिया उसमें एक नवीन जीवन डाल दिया। उन्होंने प्रत्येक कार्यको बड़ी वीरतासे किया। खेतीके कामके सिवाय उन्हें और बहुतसे कार्य करने पड़ते थे, जैसे जंगलोंकी रक्षा करना, लकड़ी और ईंधन वगैरहकी माँगकी पूर्ति करना, खानोंकी खोज करना, जमीनकी पैमाइश करना तथा भरती, देशान्तर गमन, पवन संबंधी घटनाओं, अजायब-घरों, शिल्पकला-प्रदर्शनियों, जहाजों द्वारा मालका लदान, बन्दरगाहों, समुद्रके किनारों पर रात्रिमें जहाजोंके लिए मार्ग-प्रदर्शक द्वीपगृहों, चुंगी, जहाजी चुंगी आदि अनेक कामोंकी भी देख भाल करनी होती थी। यद्यपि उनको इतना अधिक कार्य रहता था तिस पर भी उनका विचार सदा गरीब किसानोंके सुखके लिए रहता था। वे सदा पानी, खाद, औजार वगैरह चीजोंका, जो किसानके लिए आवश्यक हैं, खयाल रखते थे। कृषिके ऊपर उन्होंने जो ट्रैक्ट लिखा है उसमें अनेक ऐसी बातोंका जिकर है कि जिनसे वे अच्छी अच्छी सलाहें और सूचनायें गाँववालोंको दिया करते थे।

(घ) सन् १८७९ ई० से १८८२ ई० तक।

मंत्री-पदसे जुदा होना।

ह्यूम साहबकी शोक-विज्ञप्ति छापते हुए टाइम्स (Times) पत्रने उन घटनाओंका उल्लेख किया था, जिनके कारण ह्यूम साहबको भारत सरकारके मंत्री-पदको सन् १८७९ ई० में त्यागना पड़ा था। उनमें यह बतलाया गया है कि उनके जुदा होनेका कारण यह था कि उनका एक सरकारी मेम्बरसे झगड़ा हो गया था और झगड़ा भी ऐसे विषयमें हुआ था जिसमें मेंबर साहब स्वयं गलती पर थे। इस झगड़ेकी असलमें क्या

बुनियाद थी, इसके विषयमें कहीं कुछ नहीं लिखा है । जीवनी जैसी पुस्तकमें यह आवश्यक मालूम होता है कि ऐसे विषयको स्पष्ट कर दिया जाय । भाग्यसे ह्यूम साहबके कई निजी कागजोंमें मूल लेखक अर्थात् सर विलियम वेडरबर्न महाशयको कुछ पत्र और खंड लेख (Extracts) ऐसे मिले है जो इस विषय पर बहुत कुछ प्रकाश डालते हैं और जिनसे प्रकट होता है कि ह्यूम साहबका पृथक्त्व किसी ऐसे महान मंतव्य पर हुआ कि जिससे उनके पद पर बड़ा असर पड़नेवाला था । जिनको भारतवर्षकी शासन-पद्धतिका कुछ ज्ञान नहीं है, वे भले ही इस बातको न जान सकें कि इससे ह्यूम साहबको कितना भारी धक्का लगा होगा । यह बात किसीसे अप्रगट नहीं है कि भारत सरकारके मंत्रीका पद बड़ा प्रभावशाली और उत्तम होता है । मंत्री अपने विभागमें सबसे चतुर और दक्ष समझा जाता है और सरकारी मामलोंमें सबसे पहले उसीकी पूछ होती है । उसको सदैव लाट साहबके पास रहना पड़ता है और वह एक प्रकारसे लाट साहबका दाहना हाथ होता है । उसे उस महासत्ताका एक मुख्य अंग समझना चाहिए जो पालिसीको निश्चित करती है और शिमलेकी ठंडी चोटियोंसे नीचे मैदानके लोगों पर हुकूमत करती है । ह्यूम साहबके अलग होनेका यों तो कोई कारण मालूम नहीं होता । हॉ कागजोंसे एक कारण अवश्य मालूम होता है और वह उस चिट्ठीमें दिया हुआ हे जो लार्ड लिटनके प्राइवेट सेक्रेटरी ने १७ जून सन् १८७९ ई० को उनको लिखी थी । उसमें लिखा है कि यह फैसला सर्वथा राज्य-सेवा-(Public Service) के हित पर निर्धारित है । यह बात ह्यूम साहबके उस पत्रके उत्तरमें थी जिसमें उन्होंने बड़ी नम्रतासे अपने निकाले जानेके कारण पूछे थे । न उन पर किसी कार्यकी ढीलका दूषण लगाया गया था और न अयोग्यताका ही । इस प्रकारका उत्तर देना वैसा ही है जैसा यह कह देना कि कुछ उत्तर नहीं देते । वाइसराय महोदय और उनके

सलाहकारोंने तो कुछ उत्तर नहीं दिया; परंतु लोकमत समाचार पत्रों द्वारा भलाई बुराई प्रगट किये बिना न रह सका। सर विलियम वडेरबर्न लिखते हैं कि जो उत्तर मिला था वह यह था कि किसी भारी राजकीय विषयके कारण ह्यूम साहब निकाले गये हैं; परंतु मेरे पास कुछ मुख्य मुख्य अंग्रेजी पत्रोंके ऐसे अंश मौजूद हैं जिनसे विदित होता है कि उनका अपराध केवल यह था कि वे हदसे ज्यादह सच्चे और स्वतंत्र थे। इन पत्रोंको ह्यूम साहबके साथ कुछ आधिक सहानुभूति भी नहीं थी। पायनियर (Pioneer) ने इनके निकाले जानेको एक बड़ा जबर्दस्तीका काम बतलाया था। इंडियन-डेली-न्यूज (Indian Daily News) ने लिखा था कि यह बड़ी भारी भूल हुई। स्टेटस्मैन (Statesman) ने लिखा था कि निःसन्देह उनके साथ बड़ी निर्लज्जता और निर्दयताका व्यवहार हुआ है। इस विषयका सब से अच्छा हाल २७ जून सन् १८७९ ई०के इँगलिशमैन (English man) के एक लेखमें था। यह किसी प्रसिद्ध वकीलकी लेखनीसे निकला हुआ मालूम होता है। और ह्यूम साहबके मित्रोंको इसके पढ़नेसे कुछ खुशी जरूर होगी। इस लेखमें ह्यूम साहबके एकदम निकाले जानेकी तजवींजके विषयमें लिखा था कि " उनको इस कारणसे निकाल दिया गया कि वे अपनी सम्मति हर एक विषयमें बड़ी स्वतन्त्रतासे दिया करते थे और इस बातकी कोई परवा नहीं करते थे कि उनके उच्च कर्मचारियोंकी क्या इच्छा और मंशा है। यदि वे किसी बातको गलत समझते थे, तो बिना किसी रुकावटके उसके प्रतिकूल साफ साफ कह डालते थे। इसके सिवाय और कोई अपराध उन पर नहीं लगाया गया। सब जानते है कि ह्यूम साहब कैसे परिश्रमी थे। सरकारको ऐसा आदमी आसानीसे नहीं मिल सकता जो उनके विभागके कामोंमें उनके समान योग्यता रखता हो। उनमें एक दोष यह भी था कि वे आज्ञाकारी नहीं थे । आज्ञाकारी न होनेसे सरकारकी शायद यह मंशा तो नहीं है कि वह सरकारी हुक्मोंका

पालन करनेसे इन्कार करता है अथवा जिन हुक्मोंको वह स्वयं पसंद नहीं करता है, उनके पालन करनेमें यथाशक्ति उत्तम रीतिसे उद्योग नहीं करता है; किंतु यह है कि हो तो वास्तवमें अशांति, परंतु सरकार कह रही हो शांति और वह शांति कहनेसे इकार करता हो। सरकारके हुक्मोंकी तामीलमें तो ह्यूम साहब कमी नहीं चूकते थे; परंतु उनसे यह नहीं हो सकता था कि हो तो दिन और अफसरोंको खुश करनेके लिए वे रात बतलादें। आज कल आज्ञा-पालन करनेवाला वही है कि जो न केवल आज्ञाओंका पालन करता हो; और न केवल उनके पालन करनेमें यथेष्ट उद्योग करता हो; किंतु चाहे वह हृदयसे किसी बातको मिथ्या ही जानता हो, परतु यदि उसे यह मालूम हो जावे कि अफसर लोग इस बातको चाहते है, तो वह उसीको सच्चा कहने लगे। लार्ड डलहौजी, लार्ड मेयो तथा लार्ड कैनिंगके जमानेमें मंत्रियों और उपमंत्रियोंको केवल राय देनेकी ही आज्ञा नहीं थी; किन्तु उनसे कहा जाता था कि स्वतन्त्रतासे राय दो। सरकारी गोष्ठीके बाहर किसी सरकारी बातका विरोध करना तो पहले भी बुरा और अपराध समझा जाता था; परंतु गोष्टीके अन्दर स्वतंत्र सम्मति देनेके वास्ते केवल आज्ञा ही नहीं थी, किंतु कहा भी जाता था। उस लेखमें लिखा है कि लार्ड नार्थब्रूकके समयमें इस बातमें परिवर्तन शुरू हुआ। जिन बातोंको वह स्वयं पसंद करते थे, उनके विरुद्ध वे अपने अधीनस्थ कर्मचारियोंसे सुनना नहीं चाहते थे। लार्ड लिटनके समयमें यह बात और भी बल पकड़ गई। अब सरकारी कर्मचारियोंके बचावका कोई ठिकाना नहीं रहा। यदि कोई कर्मचारी स्वतंत्रताका पक्ष रखता हो और उच्चाधिकारीको प्रसन्न रखनेकी शक्ति न रखता हो तो कोई भी चीज उसे एकदम सेवासे निकाले जाने अथवा पदसे गिराये जानेसे नहीं रोक सकती थी, न योग्यता और न दीर्घसेवा। भारतवर्ष जैसे देशमें इस

बातकी बहुत ज्यादह चाह होती है कि अधिकारी वर्गको प्रसन्न रक्खा जाय। जिस पर वाइसराय महोदयकी कृपा हो जाती है वह अच्छे पद पर हो जाता है और उसको धन, वैभव आदि सभी सुख प्राप्त हो जाते है। फिर क्यों न लोगोंको यह इच्छा हो कि वे किसी प्रकार अफसरोंको प्रसन्न करना सीखें। इस बातके लिए किसी खास मेहनतकी जरूरत नहीं है। यह स्वयं दूसरोंकी देखा देखी आ जाती है; परंतु स्मरण रहे ऐसी नीति और सम्मति, जो सच्ची स्वाधीनताका घात करे और नीच और *स्वार्थयुक्त वासनाओंको घटानेके स्थानमें बढ़ावे, बड़ी हानिकर है।* इससे सम्पूर्ण सेवा नष्ट हो जावेगी और लोगों पर भी इसका बहुत बुरा असर पड़ेगा। कारण कि उनकी वृत्ति कुछ ऐसी होती है कि वे नियमों और प्रस्तावोंका कुछ विचार नहीं करते और न घोषणाओं और कानूनोंका उन्हें कुछ ध्यान होता है। वे तो केवल यह देखते है कि किस प्रकार यश, कीर्ति, लक्ष्मी और अधिकार मिल सकते हैं। जिन बातोंसे ये मिलें उन्हींको वे करने लगते है और जिनसे अपयश और दरिद्रताकी संभावना होती है, उनको वे छोड़ देते हैं। इन बातोंसे लोग अपना मार्ग निश्चित कर लेते हैं। यदि किसी राज्यकी इच्छा हो कि उसकी प्रजा अच्छी बातें ग्रहण करे और बुरी बातोंसे घृणा करे, तो उसे चाहिए कि अच्छी बातोंवालोंको पद दे और उनके वास्ते यश, कीर्ति और लक्ष्मीका मार्ग खोले।" इस लेखकी बातों पर विचार कर पाठक स्वयं देखलें कि ह्यूम साहबने अच्छा किया या बुरा। उन्होंने मंत्रीके उच्च पदको त्याग देना उचित समझा, परंतु उस पालिसीको स्वीकार नहीं किया कि जो गवर्नरों, वाइसरायों तथा राजमंत्रियोंके दृढ़ निश्चयी, निःस्वार्थी सलाहगीरोंके लिए हानिकर है।

पक्षि-विज्ञानकी उन्नति।

सन् १८७९ ई० में ह्यूम साहबकी शिमलेसे इलाहाबाद बदली हो

गई, इससे उनको भारी हानि पहुँची । एक यही बात नहीं हुई कि वे उच्च पद्से गिर गये, किंतु उनके वैज्ञानिक अध्ययन और अन्वेषणमें भी बड़ा धक्का लगा । एक पत्रमें उन्होंने अपना शोक इस प्रकार प्रगट किया था कि “ एशिया महाद्वीपमें जहाँ जहाँ बृटिश राज्य है, उन सब स्थानोंके पक्षियोंकी खोजमें मैने गत २५ वर्षोंमें ३०००००) रु० के लगभग खर्च किये, उनका एक बड़ा अजायब-घर और पुस्तकालय स्थापित किया तथा अजायब-घरके वास्ते जो चीजें एकत्रित की गई हैं, उनको उपयोगी बनानेके लिए ऐसी ऐसी जगह मंडलियाँ भेजी जहाँ पहुँचना बड़ा कठिन था । मै स्वयं भी जब कभी अवकाश मिला छुट्टी लेकर इन मंडलियोंके काममें शामिल हुआ । इस तमाम मेहनत और खर्चेका फल शिमलेमें मौजूद है । इन सब चीजोंका वहाँसे हटाना असम्भव है । मैने सब चीजे भारत-सरकारको देदी है और केवल इस शर्त पर कि उनको शिमलेसे हटानेका खर्चा सरकार उठाले । पश्चिमोत्तर प्रांतमें तबदील हो जानेके कारण मैं सदैवके वास्ते अपने अजायब-घरसे पृथक् हो गया और अब न तो मै उसकी सँभाल ही कर सकता हूँ और न मंडलियोंकी कार्यवाहीको ही पूर्ववत् पत्र द्वारा प्रकाशित कर सकता हूँ” । ह्यूम साहब (Stray Feathers) 'स्ट्रे फेदर्स' नामकी एक मासिक पत्रिका निकालते थे । उनके शिमलेसे बदल जानेके कारण पक्षि-सम्बधी विज्ञानमें भारी धक्का तो लगा ही, साथमें उनकी महान पुस्तक Game Birds of India (हिन्दुस्तानकी शिकारी चिड़ियाँ) का निकलना भी कुछ कालके लिए रुक गया । इस पुस्तक पर उनके ६००००) रु० खर्च हो चुके थे । यारकंदकी चढ़ाईके वैज्ञानिक परिणाम भी, जिनको वे सम्पादन कर रहे थे, बंद करने पड़े । पक्षियोंका अजायब-घर बनानेके लिए रथनी कैसल (Rathney Castle) पर उनके २२५०००) रु० खर्च हो चुके थे ।

भारतके पक्षियोंके विषयमें जितना ह्यूम साहब जानते थे, इतना और कोई न जानता होगा। जबसे उनकी रुचि इस विद्याकी ओर हुई, उन्होंने इस महान कार्यकी सामग्रीके एकत्र करनेमें कुछ भी नहीं उठा रक्खा था। तन, मन, धन, से वे इस कार्यके लिए उपस्थित रहते थे। जो समय उनको दफ्तरके कामसे मिलता था, वह सब इसी कार्यमे लगाते थे।

ह्यूम साहब बहुत काल तक नमकके महकमेमें कमिश्नर रहे थे। और विशेष कर उस समय जब नमककी रोकका भारी काम चल रहा था। बहुतसे लोग उनके नीचे काम करते थे। उन्हें एक स्थानसे दूसरे स्थान पर जाना होता था। उनमेंसे बहुतसे उनके सहकारी बन गये। वे स्वयं भी देख-भालके लिए दौरा किया करते थे और जिनके पास खर्च न होता था, उनको अपने पाससे रुपया दे देते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतवर्षमें उनके ५० से ज्यादह सहकारी हो गये। वे इस बात पर बड़ा जोर देते थे, कि हर एक बातकी ठीक ठीक खोज और जॉच की जाय। हर एक पक्षीकी खालमें टिकट लिख कर लगा दिया जाता था जिससे यह विदित हो जाय कि वह नर है या मादा, उसके अवयवोंका कैसा रंग है, उसकी नाप कितनी है, और वह कब और कहॉ शिकार किया गया है। कोई अंडा जब तक कि उस पर उसकी जाति, स्थान और तारीख न लिख दी जाये उनके यहॉ नहीं रक्खा जाता था। प्रायः अंडेके साथ पक्षी भी आता था, जिससे यह विश्वास हो जाय कि यह किस पक्षीका अंडा है।

जो लोग ह्यूम साहबके साथ काम करते थे, उनसे वे बड़ा प्रेम रखते थे। वे बड़े उत्साही थे। उनके उत्साहको देख कर सबका उत्साह चढ़ जाता था। उनका ज्ञान भी इस विषयमें बहुत बढ़ा चढ़ा था। उनके सहकारी उनको पक्षि-विज्ञान-विशारद(The Pope of Ornithology)

कहा करते थे। शिमलेमें उनके राथनी केसलमें पक्षियोंका एक अपूर्व संग्रह था। उनके सहकारियोंके लिए वह महल मक्केके सदृश था। लोग जब कभी उनके मकान पर जाते थे, तब बिना कुछ सीखे कभी लौट कर न आते थे। सब लोग उनको अपना नेता, तत्त्वज्ञानी और मित्र समझते थे। हिन्दुस्तानके भिन्न भिन्न भागोंसे आये हुए पक्षि-विषयक नोटोंकी संख्या उनके पास बहुत बढ गई थी और उनसे किताबेंकी किताबें भर गई थीं। २५ ही वर्षमें उनके अजायब-घरमें ६३००० पक्षियोंकी खालें और १९००० अंडे जमा हो गये। इन सब बातोंसे आशा होती थी कि किसी समयमें पक्षियोंके विषयमें एक बड़ी भारी किताब और एक अजायब-घर बन जावेगा, पर शोक! अभाग्यसे वह काम पूरा न हो सका। और ह्यूम साहबको शिमला छोड़ना पड़ा।

एक और आपत्ति आई। सन् १८८४ ई० की शरदृतुमें जब ह्यूम साहब सर्दीके कारण पहाड़ परसे नीचे उतर आये थे, तब वे सब कागज-पत्र अजायब-घरके एक कमरेमें बन्द कर आये थे। जब वे लौटे उनको पता लगा कि चोरी हो गई। यह अवश्य किसी दुष्ट नौकरकी करतूत होगी; परंतु बहुत कुछ उद्योग करने पर भी कुछ पता न चला। २५ वर्षकी मेहनत पर यकायक पानी फिर जानेसे उनके दिल पर कैसा धक्का लगा होगा, एवं वे कैसे निराश हो गये होंगे, इसका पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं। अब उसके लिए कोई उपाय और किसी प्रकारकी आशा न रही और वह अद्वितीय पुस्तक अधूरी ही रह गई। अब सिवाय इसके कि वे इस कार्यको छोड दें, और कोई अवलम्बन नहीं रहा। जब ह्यूम साहबने निराश होकर कामको छोड़ बैठनेका विचार किया, उस समय उनको जो दुःख हुआ होगा उससे बहुत कम लोग परिचित हैं। कारण कि उन्होंने यद्यपि कभी किसीसे कुछ नहीं कहा सुना तथापि पक्षियोंको देख कर उनको अपनी हानिकी याद आ जाती थी। इस लिए उन्होंने बड़े शोकके साथ दृढ़ संकल्प किया कि अपने

विशाल संग्रहसे वे सम्बन्ध ही तोड़ दें। यदि वे चाहते तो उसे १५००००) रु० में अमेरिकावालोंके हाथ बेंच देते; परंतु उनको बेंचनेका स्वप्नमें भी खयाल नहीं आया। उनकी यह इच्छा थी कि ये चीजें यदि जायें तो उनकी जन्म-भूमिके सिवाय और कहीं न जायें। सन् १८८५ ई० में उन्होंने ८२००० पक्षी और अंडे, जो कि सब अच्छी हालत में थे, बृटिश म्यूजियम (अजायब-घर) की भेंट कर दिये। यह भेंट बड़े धन्यवादके साथ स्वीकार की गई। उनकी यह भेंट ऐसी बहुमूल्य समझी गई कि पक्षि-विभागके प्रधान कर्मचारी डाक्टर (Bowdler Sharp) स्वयं उन चीजोंको लंदन लानेके लिए शिमला भेजे गये। जो विद्यार्थी अजायब-घरमें काम करने जाते हैं, वे अब तक ह्यूम साहबको आशीर्वाद देते हैं।

सन् १८७२ ई० में ह्यूम साहबने कलकत्तेमें अपने खर्चसे ही पक्षियोंके संम्बधमें एक त्रिमासिक पत्रिका निकालना शुरू की। उसका नाम 'Stray Feathers' रक्खा। ह्यूम साहब स्वयं उसके सम्पादक हुए। उसका प्रत्येक अंक उनकी ओजस्विनी लेखनीसे विभूषित होता था। लोगोंको यह पत्र बड़ा पसन्द आया, और उपयोगी भी सिद्ध हुआ। सन् १८९९ ई० तक वे अकेले उसको निकालते रहे। पर बादमें उनके इँगलेंड चले जानेके कारण वह बंद हो गया। और किसीको ऐसी सामर्थ्य नहीं थी कि उनके बाद भी उसे जारी रखता। सन् १८७३ ई० में उन्होंने एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसका नाम 'भारतवर्षके पक्षियोंके घोंसले और अंडे' रक्खा। जिन लोगोंकी इस विषयमें रुचि है, उनके लिए यह पुस्तक बड़ी ही उपयोगी है। सन् १८७९ ई० में उनकी सुंदर सचित्र पुस्तक (The game birds of India भारतके शिकारी पक्षी) तीन जिल्दोंमें निकली। उसमें १४४ रंगीन चित्र थे। ह्यूम साहब तथा कप्तान मारशल दोनोंने मिल कर इसका सम्पादन किया था; परंतु इसका अधिकांश ह्यूम साहबकी ही ओजस्विनी लेखनीका फल है, और वे ही प्रशंसाके पात्र है। ऐसी पुस्तककी शिकारियोंको

बड़ी आवश्यकता थी और इसके छपनेसे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। कमी केवल इतनी थी कि खर्च अधिक होनेके कारण उसकी केवल १००० जिल्दें छप सकीं और इसी कारण अब उसका मिलना दुर्लभ हो गया है।

जब ह्यूम साहबने निराश होकर पक्षियोंकी खोजका काम छोड़ दिया तब इस विद्याको भारी धक्का पहुँचा। उन्होंने इस सम्बन्धमें इतना नाम पैदा कर लिया है कि इस विषयके विद्यार्थी सदैव उनको याद करेंगे। इस विषयसे अपने चित्तको हटाने और किसी दूसरे काममें अपने समयको लगानेके लिए, अब ह्यूम साहबने पौधे पालनेका कार्य शुरू किया। इस कामको भी उन्होंने उत्साह और श्रमसे किया। शिमलेवाले मकानमें बड़े बड़े बाड़े बनवाये और उनमें उत्तमोत्तम पुष्प लगवाये तथा काम करनेके वास्ते चतुर अंग्रेज माली नियत किये। इस ओर रुचि हो जानेका यह परिणाम हुआ कि जब वे भारतसे लौट कर विलायत गये तब वनस्पति-विज्ञान (Botany) की उन्नति करने लगे।

पक्षियों और पौधोंके अतिरिक्त, ह्यूम साहबने विलायतके अजायब-घरको और भी अनेक चीजें भेंट कीं। भारतके शिकारी जानवरोंके मस्तक और सींग भी उन्होंने बड़े बड़े विचित्र एकत्रित किये थे। इन वस्तुओंका कुछ भाग तो उन्होंने सन् १८९१ ई० में दे दिया था और शेषकी वसीयत करदी थी। पहली नवम्बर सन् १८९२ ई० को टाइम्ज नामक पत्रने इन दी हुई चीजोंकी बड़ी प्रशंसा की थी। उसने लिखा था कि विलायतके अजायब-घरमें भारतके बड़े बड़े जानवरोंकी पहले बड़ी कमी थी; परंतु ह्यूम साहबकी प्रदान की हुई वस्तुओंके पहुँचने पर, वह ऐसा हो गया कि उसकी बराबरीका अजायब-घर और कहीं नहीं रहा। ह्यूम साहबने कितने ही विचित्र पशुओंके मस्तक और सींग भेजे। केवल भारतके ही पशु नहीं, किंतु हिमालय, तुर्केस्तान, पामीरके पहाड़ों तथा बरमाके मुल्कके ऐसे ऐसे पशुओंके सर और सींग इकट्ठे किये थे कि जो

कभी देखनेमें नहीं आये। जब तक ये चीजें अजायब-घरमें मौजूद हैं, तब तक ये बतलाती रहेंगी कि इनका एकत्र करनेवाला कैसा गुणी और श्रमी था और उसमें उदारता किसी दरजे पर पहुँची हुई थी। ह्यूम साहबकी कृपा और उद्योगसे लन्दनका अजायब-घर ऐसा किसी अन्य प्रकारसे होना असम्भव था।

सन् १८८२ ई० में इस्तीफा।

थोड़े दिन हुए पायनियर नामक दैनिक पत्रमें एक चिट्ठी निकली थी जिसके नीचे ह्यूम साहबके मित्र कप्तान बेनानके हस्ताक्षर थे। उसमें लिखा था कि एक समय लार्ड लिटनने ह्यूम साहबको पंजाबको लॅफ्टेंट गवर्नरीका पद प्रदान किया था; परंतु ह्यूम साहबने स्वीकार नहीं किया था और कह दिया था कि इस पद पर रहकर अफसरोंकी आव-भगत बहुत करनी पड़ेगी और इसके लिए न मैं तैयार हूँ और न मेरी पत्नी। मुझे होम मेम्बरके पद पर रहना ही पसन्द है। लार्ड लिटनने फिर इनके वास्ते होम मेम्बरीकी सिफारिश की थी और के. सी. एस. आई. की उपाधिके लिए लिखा था; परन्तु लार्ड सैलिसबरीने, जो उस समय भारत-सचिव थे, लार्ड लिटनकी सिफारिश नहीं मानी और न माननेकी वजह बह बतलाई कि ह्यूम साहबने लार्ड नार्थब्रूकको रुईकी चुंगी हटानेकी तजवीजमें बड़ी उल्टी पट्टी पढ़ाई थी।

इसमें संदेह नहीं कि यदि ह्यूम साहब पंजाबकी लॅफ्टेंट-गवर्नरी स्वीकार कर लेते, तो उनका शासन बड़ा ही अपूर्व होता, और उससे लोगोंको बड़ा लाभ पहुँचता; परंतु यह बात भारतके भविष्यके लिए बड़ी अच्छी हुई कि वे उस समय राजकीय सेवासे निवृत्त हो गये। कारण कि उनको भारतके लिए और अधिक उपयोगी कार्य करना था। भारतके शिक्षित मनुष्योंमें जो एक नया जोश पैदा होता जाता था, उसके सम्हालनेके वास्ते ऐसे मनुष्यकी बड़ी आवश्यकता थी।

इंडियन नेशनल कांग्रेस ।

सन् १८८२ ईस्वीमें ह्यूम साहब सरकारी नौकरीसे अलग हो गये और उसी समयसे उनके जीवनका महान कार्य आरम्भ हुआ। यह कार्य भारतवासियोंके हितके लिए था और इण्डियन-नेशनल-कांग्रेस उस कार्यका एक अंग था। उन्होंने स्वयं लिखा है कि सभ्य मनुष्योंका एक समूह, जिसमें अधिकतर भारतवासी हैं, आपसमें मिल कर शांतिसे भारतके हितके लिए उद्योग कर रहा है। कॉंग्रेस उनके श्रमका एक परिणाम है। इस जातीय कार्यके मुख्य उद्देश तीन हैः—पहला यह कि भारतवासियोंमें, जो भिन्न भिन्न जत्थे हैं, उन सबको मिला कर एक भारतीय जाति बनाना। दूसरा यह कि इस बनी हुई जातिकी धार्मिक, सामाजिक, शरीरिक और नैतिक आदि सर्व प्रकारकी उन्नति करना। तीसरा इँगलैंड और भारतवर्षके परस्पर सम्बन्धको दृढ़ करना और उसके निमित्त उन बातोंमें परिवर्तन करना जो न्याय रहित हैं अथवा और तरहसे हानिकर है। ये तीन उद्देश थे जिनके सहारेसे ह्यूम साहब चाहते थे कि पुनः भारतवर्षमें प्राचीन वैभव स्थापित हो जाये और अंग्रेजों और भारतवासियोंमें अधिक आनन्ददायक सम्बंध कायम हो जाय। यह कार्य बड़ा कठिन था, परंतु ह्यूम साहब इसके लिए अपनी पूर्ण विद्वत्ता काममें लाये। उन्होंने उच्च उद्देश बनाये और उन उद्देशोंको अपार श्रम और शांतिसे काममें लानेका प्रयत्न किया। वे स्वयं ऐसे प्रतिभाशाली मनुष्य थे कि उनकी उपस्थिति मात्रसे कठिनसे कठिन कार्यमें सफलता हो जाती थी। वे सच्ची आर्य्य-जातिकी संतान थे और चरित्र तथा शारीरिक आकृतिमें पश्चिमीय ढॉंचेके थे। उत्तरीय समुद्र (North Sea) के किनारे स्काटलेंडमें जो नसल मनुष्योंकी

रहती थी उसीमेंसे वे थे । वे गौरवर्ण, नीलनेत्र, हृष्ट-पुष्ट, चुस्त, चालाक, और स्वतंत्रताके परम भक्त थे । उनकी आन्तरिक शक्ति प्रबल थी, परंतु युद्धसे उन्हें घृणा थी । वे धैर्य्य और शांतिके उपदेशक थे। ह्यूम साहब पूर्वीय आर्य्य-जातिसे भी पूर्णतया भ्रातृभाव रखते थे और इस बातसे उनको बड़ा दुःख होता था कि पश्चिमीय जाति भारतवासियोंको उस स्वाधीनताके आनन्दसे बंचित रक्खे हुए है जिस पर पूर्व पश्चिम दोनोंका हक है।

जापानमें लोगोंने शांति पूर्वक प्रतिकूलता की थी। उसका परिणाम यह हुआ था कि नियम रहित राज्यकी जगह नियमानुसार प्रजासत्तात्मक राज्य स्थापित हो गया। भारतवर्षमें भी ह्यूम साहबके अनुयायियोंने इसी अभिप्रायसे काम करना आरम्भ किया था। उनका उद्देश यह था कि शांतिसे काम करते हुए ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि जिससे बृटिश राज्यकी छत्र-छायामें रह कर भारतवासियोंको स्वराज्य-प्राप्त हो। इस प्रकार स्वराज्य प्राप्त करके भारतवर्ष बृटिश राज्यके लिए एक प्रबल सहायक बन जावेगा और दोनों देशोंमें घनिष्ट सम्बन्ध पैदा हो जायगा। ऐसा होनेसे ही भारतवर्ष वास्तविक आनन्द और उन्नतिको प्राप्त कर सकेगा।

ह्यूम साहबने उक्त आशाओंको हृदयमें रख कर इंडियन-नेशनल-कांग्रेसकी स्थापना की और 'भारतवासियों पर विश्वास करो' इसी पर उसकी बुनियाद रक्खी गई। लगातार २५ वर्ष तक कांग्रेस बड़ी मजबूतीसे कायम रही। यद्यपि बड़ी बड़ी कठनाइयाँ उपस्थित हुईं, परंतु सबको सहन किया गया। बड़ी बड़ी आँधियाँ कांग्रेस पर चलीं, परंतु उसकी जड़ मजबूत चट्टान पर जमाई गई थी इस कारण वह जरा भी न हिली। लार्ड मारलेने सन् १९०७ ई० में ह्यूम साहबको लिखा था कि मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आपने भारतीय राज्यनीतिकी उपयोगिता बतानेमें

कैसा काम किया है। भारतीय राज्यनीतिके इतिहासमें आपका नाम बहुत ऊँचा है। सन् १९०९ ई० में मारले साहबने कुछ सुधार किये और वे कांग्रेसके उद्योगका ही परिणाम थे। इस प्रकार ह्यूम साहबने अपने जीवन में ही अपने जमाये हुए वृक्षका पहला फल देख लिया।

कांग्रेसका २५ वर्षका सविस्तर इतिहास राज्यनीतिक उन्नतिके लिए बहुत उपयोगी है। उससे मालूम होता है कि कांग्रेसके नेताओंने अपना कार्य-क्रम बनानेमें कैसी असाधारण दूरदर्शितासे काम किया और अपने उद्देशोंमें वे कैसे दृढ़ और स्थिर रहे। उनका उद्देश्य यह था कि भारत-वासियोंको राज्य-कार्योंमें सम्मालित किया जाये। इस २५ वर्षके वृत्तान्त-से यह भी ज्ञात हो जायगा कि ह्यूम साहबने महामंत्रीके पद पर रह कर कैसी बुद्धिमानीसे इतने बड़े कार्यका सम्पादन किया। परंतु इन सब बातोंका उल्लेख करना इस छोटीसी पुस्तककी सीमासे बाहर है। यहाँ पर कांग्रेसकी केवल निम्न लिखित प्रसिद्ध प्रसिद्ध बातें लिखी जाती हैं। आशा है कि इनसे ह्यूम साहबके सिद्धांतों और उनके कार्य सम्पा-दनकी शैलीका भलीभाँति ज्ञान हो जायगा।

१—दृढ़ नींव पर कांग्रेसकी जड़ जमानेके लिए सन् १८८३ ई० में प्रयोग किये गये प्रारम्भिक प्रयत्न। २—सन् १८८५ ई० में इंडि-यन-नेशनल-कांग्रेसका पहला वर्ष। ३—सन् १८८८ ई० में भारतवा-सियोंको कार्यका प्रचार करनेके लिए शिक्षा। ४—उसी साल ह्यूम साहबका सर आकलेंड कालविनसे पत्र व्यवहार। ५—इँगलेंडमें कांग्रेसके कार्यका प्रचार। सरकारी तौरसे सन् १८९० ई० के दिसम्बर महीनेमें लार्ड लैंसिडोनने फर्माया कि कांग्रेस एक राज्यनीतिक जत्था है और पूर्णरूप-से कानूनके अनुसार है। उसी समयसे कांग्रेसको सरकार मानने लगी और अंतमें सन् १९१० ई० में लार्ड हार्डिजने कांग्रेसके डिपुटेशनका नियमानुसार स्वागत किया।

कांग्रेसके संगठनका प्रारम्भिक प्रयत्न।

सन् १८७८ और १८७९ ई० के बीचमें जब कि लार्ड लिटनकी गवर्नर जेनरलीका समय समाप्त होनेवाला था, ह्यूम साहबको इस बातका दृढ़ विश्वास हो गया कि भारतवर्षकी बढ़ती हुई अशांतिको रोकनेके लिए कोई निश्चित कार्य होना चाहिए, नहीं तो अशांति दिन दिन बढ़ती जायगी। देशके भिन्न भिन्न भागोंसे भी अनेक शुभचिन्तकोंने ह्यूम साहबको लिखा कि जन साधारणके आर्थिक कष्टों तथा शिक्षित पुरुषोंके मन-मुटावके कारण सरकारको हानि पहुँचनेका भय है, तथा भारतकी भावी उन्नतिमें भी खटका है। भाग्यसे उसी समय लार्ड रिपन आ गये। उनके आ जानेसे लोगोंमें आशाका नवजीवन उत्पन्न हो गया और शांतिका साम्राज्य स्थापित हो गया। ह्यूम साहबने भी विचारा कि सरकारी नौकरीसे निवृत्त हो कर ही कार्य आरम्भ करेंगे, जिससे स्वतंत्रतासे कार्य हो सके तथा लार्ड रिपनकी सौम्य मूर्तिसे लोगोंकी जो कुछ उन्नति हो सकती हो, उससे भी लाभ उठाया जावे।

सबसे पहले इस मामलेमें ह्यूम साहबने पहली मार्च सन् १८८३ ई० को एक पत्र कलकत्ता-यूनीवर्सिटीके ग्रेज्यूएटोंको लिखा। उसके आरम्भमें ये शब्द लिखे थे "कि तुम लोग भारतवर्षके सभ्य और शिक्षित पुरुषोंका एक समुदाय हो, अतएव तुमको उचित है कि भारतवर्षकी उन्नतिके लिए तुम उपयोगी बनो। तुम लोगोंको मानसिक, नैतिक, सामाजिक सभी प्रकारकी उन्नतिके स्रोत बन जाना चाहिए, चाहे एक व्यक्तिकी हो चाहे सारी जातिकी, सर्व प्रकारकी उन्नतिका भण्डार अंतरंगमें है। इस कारण तुम्हारा देश भारतवर्ष उन्नतिके कार्यके वास्ते तुम्हारी ओर टकटकी लगा कर देख

रहा है । तुम्हीं लोग भारत-माताके प्यारे सपूत हो । तुम्हींको उन्नतिका बीढ़ा उठाना चाहिए । हम लोग जो विदेशी हैं, कदापि भारतवर्षसे इतना प्रेम नहीं रख सकते, जितना तुम रख सकते हो । विदेशी लोग भारतके लिए चाहे जितना द्रव्य व्यय करें, चाहे जितना कष्ट उठावें, और चाहे जितना लड़ें-झगड़ें; परंतु जो जातीय भाव तुम लोगोंमें हो सकता है वह उनमें कदापि नहीं हो सकता । वे तुम्हें सहायता दे सकते हैं, सलाह दे सकते हैं, उनके ज्ञान, विज्ञान और अनुभवसे तुम लाभ उठा सकते हो; परंतु असली कार्य तो तुम लोगोंको ही करना होगा । इधर उधर फैले हुए पृथक् पृथक् व्यक्ति चाहे कितने ही योग्य हों, चाहे उनका उद्देश कितना ही उच्च हो; परंतु वे अकेले कुछ नहीं कर सकते । आवश्यकता इस वातकी है कि सब एकत्रित हों और एक जत्था बनाया जाय और साथ ही यह भी निश्चय हो कि किस प्रकार और क्या कार्य करना है । ऐसे जत्थेका कर्तव्य है कि विशेष रूपसे सावधानी रक्खे और भारतवासियोंके लिए सर्व प्रकारकी उन्नतिके उपाय सोचता रहे । " ह्यूम साहब आगे लिखते है कि " हमारी सभ्यशिक्षित सेना अपने ढंगकी निराली होनी चाहिए । देखना यह है कि तुम लोगोंमेंसे कितने ऐसे निकलते हैं कि जिनमें पाठशालाओंकी विद्याके अतिरिक्त स्वार्थ-त्याग, आत्म-बल, इंद्रिय-दमन और उदारता आदि गुण पाये जाते हों । इन गुणोंके धारी ही उक्त मंडली-के सदस्य हो सकते हैं । " ह्यूम साहबका प्रस्ताव था कि ५० सदस्योंकी मंडलीसे कार्य आरम्भ कर दिया जाय । उन्होंने लिखा था कि ५० पुरुष भी यदि सच्चे और उत्साही मिल जायँ और एक मन होकर कार्य करें, तो कांग्रेसकी जड़ जम जायगी और फिर आगामी उन्नतिमें अधिक कठिनाई न होगी । उनकी सम्मति थी कि संगठन-सम्बंधी छोटी छोटी बातोंको सदस्य गण स्वयं विचार लेंगे । उन्होंने बतला भी दिया था कि किस प्रकार कार्य होना चाहिए और सदस्योंको क्या क्या करना

चाहिए। सबसे ज्यादह जोर उन्होंने इस बात पर दिया था कि जन साधारणकी सम्मतिसे कार्य किया जाय। किसी एक व्यक्तिकी सम्मति पर कार्य निर्भर न रहे। प्रधानमें और साधारण सदस्योंमें केवल इतना अंतर रहे कि वह प्रधान सेवक रहे और शेष साधारण सेवक। पीछे यही सिद्धांत स्वर्गीय गोखले महाशय अपनी भारत-सेवक-समिति (Servants Of India Socity,) में रक्खा। यह सिद्धांत इस कहावतको चरितार्थ करता है कि 'वह जो तुममें सबसे ऊँचे पद पर है, तुम्हारा सेवक है। इस पत्रके अंतमें ह्यूम साहबने नवयुवकोंसे एक बड़ी जोशीली और मर्मभेदी अपील की थी। उन्होंने लिखा था "जैसा मै पहले कह आया हूँ तुम लोग देशके रत्न हो। यदि तुममेंसे ५० भी ऐसे मनुष्य नहीं मिल सकते, जिनमें आत्म-त्यागका अंश हो, देशभक्ति और उन्नतिका उत्साह हो, देशके लिए काम पड़ने पर अपने सर्वस्व और जीवन तकको अर्पण कर सकते हों, तो फिर भारतके लिए कोई आशा नहीं है। भारतवासी सदा विदेशी शासकोंके हाथमें कट-पुतलीकी तरह रहेंगे। यदि तुम स्वतंत्रताके इच्छुक हो, तो तुम्हें स्वयं कार्य करना चाहिए। यदि उच्च शिक्षित मनुष्य भी ऐसे बलहीन है कि कुछ नही कर सकते, अथवा ऐसे स्वार्थी हैं कि देशहितके काममें कुछ सहायता नही दे सक्ते तो यह ठीक ही है कि वे विदेशियोंके दास बने हुए है। वे दासत्वसे निकलनेके अधिकारी नहीं हैं। हर एक जातिको उतना ही अच्छा राज्य मिलता है जितनी उस जातिमें योग्यता होती है। यदि तुम गिने चुने लोग भी, जो देशमें सबसे शिक्षित हो, स्वार्थ और भोग-विलासको त्यागकर अपने तथा अपने देशके लिए अधिकतर स्वतंत्रता, निष्पक्ष राज्य तथा राज्यकार्यमें अधिकतर भाग लेनेके हेतु दृढ़ होकर उद्योग नहीं कर सकते तो हम लोग भूल करते हैं कि जो तुमको सलाह देते हैं। इस दशामें तुम्हारे प्रतिकूल कहनेवाले सच कहते हैं। यदि ऐसा है, तो

लार्ड रिपनके तुम्हारे प्रति उच्च उद्देश्य और शुभ विचार निष्फल और स्वप्नवत् हैं और भारतकी उन्नतिकी आशा करना फिजूल है। भारतको उत्तमतर राज्यकी कोई आवश्यकता नहीं है और न भारत उसके योग्य ही है। तुम्हें चाहिए कि अब आगे कोई भी ऐसी शिकायत न करो कि हम पर सख्ती की जाती है, अथवा हमारे साथ बच्चोंकी भाँति व्यवहार किया जाता है, कारण कि तुम स्वयं सिद्ध करते हो कि तुम इसी योग्य हो। बुद्धिमान मनुष्य जानते है कि कार्य किस ढंगसे होना चाहिए। अब तुम यह शिकायत कभी न करना कि अंग्रेजोंको पद मिल जाते हैं और हमको नहीं मिलते। क्योंकि यदि तुममें उन बातोंकी कमी है, जो अंग्रेजोंमें हैं, तो अवश्य वे तुमसे ज्यादह योग्य हैं और तुम इसी योग्य हो कि दूसरोंके सेवक बने रहो और दूसरे तुम्हारे ऊपर राज्य करते रहें। याद रक्खो, दूसरे लोग तुम पर राज्य करते रहेंगे और तुमको पीड़ा भी देते रहेंगे, जब तक कि तुममें स्वयं बुद्धि उत्पन्न न होगी और तुम इस विश्वव्यापी सिद्धांतके अनुसार कार्य करनेके लिए तैयार न होगे कि चाहे एक व्यक्ति हो चाहे जाति हो, आनंद और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए यह आवश्यक है कि उसमें आत्मत्याग और निस्वार्थताके गुण हो।"

यह अपील एक ऐसे पुरुषकी ओरसे थी कि जिसको समस्त भारतवासी हृदयसे प्रेम करते थे और जिस पर उनको पूर्ण विश्वास था। अतएव यह व्यर्थ नहीं गई। भारतवर्षके समस्त प्रदेशोंसे इस कार्यका बीड़ा उठानेके लिए लोग उपस्थित हुए और कांग्रेसकी स्थापना हो गई।

यह निश्चय हुआ कि पूनामें एक सभा की जाय जिसमें सबको एक दूसरेकी राय मालूम करनेका मौका मिले और सब मिल कर यह तय करलें कि किस प्रकार काम चलाया जावे। यह कार्य ऐसा होना चाहिए, कि जिसको सब स्वीकार करें। इस सभाके होने तक एक

प्रारम्भिक रिपोर्ट मेम्बरोंके पास भेजी गई जिसमें कुछ तो प्रस्ताव थे और कुछ वे बातें थीं जो भारतके बड़े बड़े राजनीतिज्ञोंने सोच विचार कर निकाली थीं। पहली बात उसमें यह थी कि सम्पूर्ण मंडली इस बातमें एकमत है कि इस मंडलीका पहला उद्देश्य 'राज्यभक्ति' होगा और सब बातें राज्यभक्ति पर निर्भर होंगी। कोई बात ऐसी न की जायगी जो राज्य-विरुद्ध हो। दूसरी बात थी कि यदि कोई राज्य कर्मचारी चाहे वह छोटा हो, चाहे बड़ा, चाहे भारतमें हो, चाहे इंगलेंडमें, कोई ऐसा काम करे कि जो भारत-सरकारके उन सिद्धांतोंके विरुद्ध हो जिनको बृटिश पारालियामेंटने समय समय पर प्रगट किये है और जिनकी स्वयं सम्राट् महोदय पुष्टि कर चुके हैं अथवा कोई कर्मचारी ऐसा कार्य करना छोड़ दे जो उन सिद्धान्तोंके अनुसार होना चाहिए था, तो कांग्रेस कानूनकी सीमामें रहती हुई उन कामोंका विरोध करेगी। तीसरी बात यह थी कि हमारी (भारतवर्षकी) जाति उन्नतिके वास्ते यह आवश्यक है कि भारत और इंगलेंडमें सदाके लिए मेल बना रहे।

कांग्रेसके सभासद वे ही मनुष्य हो सकते थे कि जिनके चाल-चलन पर किसी प्रकारका धब्बा न हो। जिनके हृदयमें इस बातकी इच्छा हो कि मानसिक, नैतिक, आर्थिक सर्व प्रकारसे भारतवासियोंकी उन्नति हो, जो तीक्ष्ण-बुद्धि और उच्च शिक्षा-प्राप्त हों, जो आवश्यकता पड़ने पर देशके लिए स्वार्थका त्याग कर सकते हों, जो अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ हों और साथमें बातको परखनेकी बुद्धि रखते हों। जिन पुरुषोंमें ये बातें पाई जाती थीं, वे ही सदस्य होनेके योग्य समझे जाते थे। पूनामें सभा होनेसे पहले कराँची, अहमदाबाद, सूरत, बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, बनारस, पूना, इलाहाबाद, लखनऊ, आगरा, लाहोर आदि अनेक स्थानोंमें चुने चुने लोगोंकी स्थानीय कमेटियाँ बन गई और

सबने चाहे स्वयं चाहे अपने प्रतिनिधि भेज कर पूनाकी सभामें सम्मिलित होनेका वादा कर लिया। यह भी तजवीज हुई कि जब सेंट्रेल-कमेटी (Central Committee) बने तो सम्पूर्ण मंडलीका एक जेनरेल सेक्रेटरी (महामत्री) रहे । महामंत्रीका काम केवल यही नहीं था कि वह स्वयं अधीनस्थ कमेटियोंको समय समय पर जाकर देखे और एक कमेटीको दूसरी कमेटीके अनुभवका ज्ञान कराये; किंतु यह भी उसका काम था कि वह सभाके कार्यकी छोटी छोटी बातोंकी देख-भाल रक्खे, कमेटियोंकी कार्यवाहीकी रिपोर्ट लेकर दूसरी कमेटियोंको सूचित करे और मंडलीके दफ्तरके कामकी जॉच पड़ताल किया करे। इतना काम करनेवाला ह्यूम साहबसे बढ़ कर योग्य पुरुष और कौन मिल सकता था। अतएव ह्यूम साहब ही महामंत्री नियत हुए।

इस प्रकार कांग्रेसकी बुनियाद डाल कर ह्यूम साहब विलायत पधारे कि जिससे वहॉ अपने मित्रोंकी सम्मति लेकर वे इस बातको निश्चित करें कि किन उपायोंसे भारतवासियोंकी प्रार्थना बृटिश पारलियामेंट और बृटिश जातिके कानों तक पहुँच सकती है। पहले पहले ह्यूम साहब सर जेम्स कैर्डके पास गये और उन्हींके स्थान पर उनको महाशय जान ब्राइट भी मिले। इस मुलाकातके वास्ते उनको बड़ा श्रम उठाना पड़ा था। भारतके इन बुद्धिमान और विश्वास-पात्र मित्रोंसे बहुत पूछ ताछ करनेके पश्चात् ह्यूम साहब लार्ड रिपनके पास गये। तत्पश्चात् पारलियामेंटके कई मेम्बरोंके पास गये। तथा और भी अनेक मित्रोंसे मिले। इन समस्त भेटोंका परिणाम उन्होंने अपनी उन चिट्ठियोंमें लिखा है जो उन्होंने अपने भारतीय मित्रोंको सन् १८८५ ई० में लिखी थीं। सबसे पहली बात यह थी कि कोई यत्न ऐसा किया जाय कि जिससे भारतके समाचार ठीक ठीक अँग्रेजी प्रेसमें पहुँचे। अब तक इंगलैंड-वासियोंको, जो हिंदुस्तानके विषयमें समाचार मिलते थे, वे सब रूटर-

के तारों द्वारा मिलते थे। और कोई उपाय समाचार पहुँचानेका न था। यह शिकायत हिन्दुस्तानियोंको बहुत दिनोंसे थी कि रूटर ठीक ठीक समाचार नहीं पहुँचाता। जो समाचार जाते थे, वे ऐंग्लो-इंडियन रूपमें जाते थे और भारतवासियोंका असली अभिप्राय इंगलैंडवासियोंके कानों तक नहीं पहुँच पाता था। इसके अतिरिक्त यदि भारतवासियों-की कोई शिकायत लिखी भी जाती थी, तो वह कुछ ऐसे ढँगसे लिखी जाती थी कि उसका उल्टा प्रभाव पड़ता था। जो झूठे समाचार इंगलैंड-में छपते थे, उनको ठीक करनेका कोई उपाय नहीं था। पूनामें जो सभा होनेवाली थी, उसके कारण यह मामला और भी जोरदार हो गया था। क्योंकि यह आवश्यक था कि कांग्रेस जैसी सभाका वृत्तांत अपने असली स्वरूपमें इंगलैंड पहुँचे। इस कारण ह्यूम साहबने बम्बई छोड़नेसे पहले 'इंडियन-टेलीग्राफ-यूनियन' का प्रबंध किया। इस सभाका उद्देश्य यह था कि वह इंगलैंड और स्काटलैंडमें आवश्यक समाचार भेजनेके प्रबंधके वास्ते द्रव्य जमा करे और उन पत्रोंको, जो भारतीय समाचार छापना स्वीकार करें, समाचार भेजनेका प्रबंध करे। ह्यूम साहबने स्वयं पत्र-सम्पादकोंको चिट्ठियाँ लिखीं और उनके उद्योगसे बहुतसे सम्पादक इस कामके लिए तैयार भी हो गये; परतु दुर्भाग्य-वश रुपयोंकी कमीसे यह काम बहुत दिनों तक न चल सका। दूसरा प्रश्न यह था कि इंगलैंडकी पारलियामेंट तथा वहाँके लोगों पर किस तरह प्रभाव डाला जाय। इस प्रश्न पर सब मित्रोंकी सम्मति थी कि चुनाव-के समय भारतवासियोंके दुःखोंका वृत्तान्त किसीने नहीं सुना। इसका प्रबंध यह सोचा गया था कि जो पारलियामेंटकी मेम्बरीके उम्मेदवार हों, उनसे इस बातका वचन लिया जाय कि वे भारतीय विषयोंका ध्यान रक्खेंगे। मिस्टर रीड महोदयने; जो उस समय पारलियामेंटके मेम्बर थे, ह्यूम साहबको एक सलाह बतलाई थी। वह यह थी कि विलायतके

कुछ बड़े बड़े लोगोंको इस बात पर तैयार कर लिया जाय कि वे चुनावके समय उम्मेदवारोंसे केवल इतना लिखा लिया करें कि हम भारतीय विषयोंकी ओर ध्यान रक्खेंगे और फिर उस पत्र-व्यवहारको समाचार-पत्रोंमें छपवा दिया करें। किसी उम्मीद-वारको ऐसी आसान बातके स्वीकार करनेमें कुछ शंका न होगी। इस-का असर यह होगा कि लोग यथाशक्ति अपने वचनोंको पूरा करेंगे यदि सब नहीं, थोड़ेसे तो अवश्य ही करेंगे। पत्र-व्यवहारके सर्व साधा-रणमें प्रकाशित होनेसे मेम्बरोंको अपने शब्दोंका अवश्य कुछ खयाल रहेगा। इस प्रकार भारतीय विषयोंको इंगलैंडकी पारालियामेंटमें पहुँचने-का द्वार खुल जायगा। उसी पत्रमें रीड महाशयने ह्यूम साहबको दो और मामलोंमें राय दी थी। एक तो पारालियामेंटके बृटिश मेम्बरोंको भारतीय बातें समझाना और दूसरे हाउस-आफ-कामंसमें एक भारतवासीके लिए स्थान प्राप्त करना। रीड महाशयने लिखा था कि पार-लियामेंटमें तुम्हें मदद देनेवाले अवश्य होने चाहिए। यदि इंगलैंडमें आप जैसे दो चार मनुष्य भी काम करनेवाले हों, तो पारालियामेंटमें सहायक और मित्र अवश्य मिल जायँगे। क्योंकि यहाँके मनुष्योंकी इच्छा भारतीय विषयोंमें न्याय और उदारतासे काम करनेकी है; परंतु मेम्ब-रोंको कुछ भी हाल मालूम नहीं है। तुम्हारे साथ कुछ ऐसे प्रतिष्ठित व्यक्ति होने चाहिए, जो मेम्बरोंको हालत बता सकें। इस देशमें इतने स्वार्थी और मायाचारी लोग मेम्बरोंके पास जाते है कि वे बेचारे नहीं जान सकते कि किसका विश्वास करें। परिणाम यह होता है कि वे किसीके भी कहने पर उस समय तक काम नहीं करते, जब तक कि उनको यह पूर्ण विश्वास न हो जाय कि बात कहनेवाला ठीक सच्चा आदमी है। इस कारण मेम्बरोंको बातें समझाने और बतानेके वास्ते प्रतिष्ठित व्यक्तियोंकी जरूरत है और यदि वे शुद्ध अंतःकरणसे काम

करेंगे तो सहायता बहुत मिल जायगी। पारलियामेंटके मेम्बर ऐसे भारतवासीकी बातको अवश्य सुनेंगे जो विश्वासके योग्य होंगे और यदि तुम्हें पारालियामेंटमें केवल भारतवर्षका पक्ष लेनेके लिए भारतीय मेम्बरके वास्ते जगह मिल गई, तो उसकी बातकी अवश्य सुनवाई होगी और शुभ कार्यके लिए बल भी बढ़ जायगा। इन सम्मतियोंके अतिरिक्त भारतके समस्त अंग्रेज शुभचिंतकोंकी यह राय थी कि यदि भारतकी उन्नतिका अंकुर विलायतके लोगोंके हृदयमें उत्पन्न करना है तो इस विषयका लेखों, व्याख्यानों, सभाओं और समाचार-पत्रोंके द्वारा बराबर आंदोलन जारी रक्खा जाय तथा स्थानीय सभा-सोसायटियों और बड़े बड़े माननीय पुरुषोंकी सहानुभूति प्राप्त की जाय। इस बातकी विशेष आवश्यकता थी कि एक बृटिश कमेटी बनाई जाय जिससे इस कार्यके सम्पादनमें सहायता मिलती रहे। परंतु उस समय ऐसा विचार हुआ कि अभी ऐसी कमेटी बनानेके लिए उचित समय नहीं आया है।

कांग्रेसका पहला अधिवेशन।

इंगलेंडमें अपना काम पूरा करके और वहाँके मुख्य मुख्य उन्नति करनेवालोंसे सम्बंध पैदा करके, ह्यूम साहब पूनामें होनेवाली इंडियन-कांग्रेसके पहले अधिवेशनका प्रबंध करनेके लिए भारतवर्षमें लौट आये। यह अधिवेशन सन् १८८५ ई० में २५ दिसम्बर से ३० दिसम्बर तक होनेवाला था। पूनाकी स्वागतकारिणी-समिति (Reception Committee) ने बहुत अच्छी तैयारियाँ की थीं। प्रतिनिधियोंके ठहरनेके वास्ते पूनाकी सार्वजनिक सभाने हीराबागका पेशवा महल दे दिया था। यह सुन्दर महल पारबती गिरिके मन्दिरोंके नीचे एक झीलके किनारे बना हुआ है। इस सभाके साथ भारतवासियोंने कितनी सहानुभूति प्रगट की थी और सामाजिक दृष्टिसे इस सभाकी कितनी आवश्यकता कथा थी। इन बातोंको देख कर यह निश्चित किया गया कि

इस सभाका नाम बाकायदा इंडियन-नेशनल-कांग्रेस (Indian National Congress) रक्खा जाय। दुर्भाग्यसे सभाके समयसे कुछ दिन पहले पूनामें हैजेसे कुछ आदमी मर गये और यह उचित समझा गया कि पूनाके बदले सभा बम्बईमें हो । बम्बई प्रेसीडेन्सी एसोसियेशन (Bombay Presidency Association) के अपार परिश्रम तथा गोकुलदास तेजपाल, संस्कृत-विद्यालय व बोर्डिंग-हाउसके प्रबंधकोंकी उदारतासे, जिन्होंने गोवालिया तालाबके ऊपरकी विशाल इमारत एसोसियेशनको सौंपदी थी, २७ दिसम्बर सन् १८८५ ई०के सबेरे तक सारी तैयारी हो गई । उसी दिन प्रतिनिधिगण आने शुरू हो गये । इस प्रकार बम्बईको यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि इंडियन-नेशनल-कांग्रेसका सबसे पहला अधिवेशन वहाँ पर हुआ और कलकत्तेको यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि वहाँके डब्ल्यू. सी. बनरजी महाशय सबसे पहले सभापति चुने गये । बनरजी महोदय बड़ी ही प्रखर बुद्धि और प्रबल शक्तिके मनुष्य थे । वे ही प्रथम सभापति बन कर इस नौकाके खेवटिया बने ।

इस पहली सभाकी प्रार्थना यह थी कि भारतीय व्यवस्थापक-सभाओं (Indian Legislative Councils) में भारतवासियोंकी भी ओरसे प्रतिनिधि चुने जाया करें । इस विषयका एक प्रस्ताव भी पास हुआ । इस प्रस्तावमें जैसी सफलता हुई है उसे देख कर आश्चर्य होता है । यही बात समस्त प्रस्तावोंका सार थी । इसमें समय तो अवश्य बहुत लगा, परंतु सफलता पूर्ण प्राप्त हो गई । इस प्रस्तावको माननीय के. टी. तेलंगने उपस्थित किया था, माननीय एस. सुब्रह्मण्ण अइयरने इसका समर्थन किया था और माननीय दादाभाई नौरोजीने इसका अनुमोदन किया था । कांग्रेसके कार्यक्रम (प्रोग्राम) में यह प्रस्ताव तीसरे नम्बर पर था और निम्न लिखित शब्दोंमें था—

"Resolued–That this Congress considers the reform and expansion of the supreme and existing Local Legislative Councils, by the admission of a considerable proportion of elected members (and the Ceation of similar councils for the North West provinces and oudh and also for the Punjab) essential; and holds that all budgets should be refered to these councils for consideration: theis members being moreover empowered to interpellate the Executive in regard to all branches of the administration; and that a standing committee of the House of Commons should be constituted to receive and consider any formal protest that *may be recorded by majorities of such councils against* the exercise by the execvtive of the power which would be vested in it of over-ruling the decisions of such majorities."

अर्थात् यह सभा इस बातकी आवश्यकता समझती है कि वर्तमानमें जो भारतीय तथा प्रांतीय व्यवस्थापक-सभायें हैं, उनमें सुधार किया जाय। बहुतसे लोक-निर्वाचित मेम्बर बना कर मेम्बरोंकी संख्या बढ़ाई जाय, पश्चिमोत्तर और अवध प्रदेश तथा पंजाबमें भी ऐसी कौंसिलें बनाई जायँ, समस्त बजट उन कौंसिलोंमें विचारार्थ रक्खे जावें और मेम्बरोंको अधिकार हो कि प्रत्येक राज्यकार्यके सम्बन्धमें प्रश्न कर सकें। तथा हाउस-आफ-कामन्समें एक ऐसी कमेटी बनाई जावे जो उन विषयों पर भी विचार करनेके लिए तैयार हो जिनमें सभापति बहुमतके विरुद्ध होकर अपने बहुमत खंडनके अधिकारको प्रयोगमें लावे।

यही वह प्रस्ताव है जिसके विषयमें ह्यूम साहबने कहा था कि यह

उस महान कार्यको सूचित करता है जिसके लिए भारतवासी जातीय रूपमें दृढ़ रूपसे तैयारी कर रहे हैं। यह प्रश्न बहुत दिनों तक चलता रहा। अंतमें १९०९ ई० में लार्ड मारलेने इस प्रार्थनाको स्वीकार कर लिया। यदि राज्य-कर्मचारी यथा समय ठीक मार्ग पर आ जाते और नियम-निष्ठ राज्य-भक्त लोगोंकी शुभ सम्मतिको उचित समय पर सुन लेते, तो वे कितनी ही कठिनाइयोंसे बच जाते। न भारतवासियोंको राज्यके विरुद्ध झगड़े उठानेकी नौबत आती और न राज्यको उनके दबानेके लिए सख्ती करनी पड़ती।

परंतु स्मरण रहे कांग्रेसकी कार्यवाहीको केवल वे ही कर्मचारी विरोधकी दृष्टिसे देखते थे, जो सदासे शिक्षित और स्वाधीन भारतवासियोंसे विरोध रखते आये हैं। उच्चाधिकारियों तक यह विरोध नहीं पहुँचा था। शुरूमें विशेष कर यही हालत थी। इस राष्ट्रीय आंदोलनके चलानेके लिए ह्यूम साहबने उस समयके बड़े लाट लार्ड डफरिनसे सम्मति लेली थी। सामाजिक सुधारका काम स्वयं लार्ड डफरिन अपने हाथमें लेनेवाले थे। मालूम होता है कि ह्यूम साहबको यह सलाह लार्ड डफरिनने ही दी थी कि राजनीतिक सुधार वे अपने हाथ में लेलें और सामाजिक सुधारसे पहले राजनीतिक सुधार हो। जान पड़ता है कि उक्त लार्ड महोदयने ही ह्यूम साहबसे कह दिया था कि जब किसी कार्यके वास्ते लोगोंकी वास्तविक इच्छा मालूम करनी होती है, तो हमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। यदि कोई ऐसी सभा हो कि जिसके द्वारा सरकारको भारतवासियोंकी सम्मति मालूम होती रहे, तो वह राज्य के लिए तथा सर्व साधारणके लाभके लिए बहुत उपयोगी होगी। लार्ड महोदयने यह भी कहा था कि भारतवर्षमें इतनी जातियाँ, उपजातियाँ और मतमतांतर हैं कि सामाजिक सुधार प्रत्येक स्थानका पृथक् पृथक् ही होना उचित है। यह ठीक नहीं कि

वह कांग्रेस जैसी जातीय सभाके हाथमें दे दिया जाय । जिन पुरुषोंका इस कार्यसे सम्बंध था उन्होंने इन प्रेम-भरी शिक्षाओंको सादर स्वीकार किया । वास्तवमें लाट साहब और प्रजाके बीचमें ऐसा अच्छा सम्बंध था कि लोग लाट साहबके पास इस आशासे गये कि बम्बईके गवर्नर लार्ड रेको कांग्रेसका सभापति बनानेकी आज्ञा मिल जाय । लाट साहबने इस प्रस्तावसे बड़ी प्रसन्नता प्रगट की। कारण कि इससे प्रगट होता था कि कांग्रेस राज्यके बिलकुल अनुकूल चलना चाहती है; परंतु उन्होंने विचार किया कि यदि कोई उच्च कर्मचारी ऐसी सभाका सभापति होगा तो बड़ी कठिनाइयाँ उपस्थित हो जायँगी । अतएव यह विचार छोड़ देना पड़ा तथापि जब कांग्रेसका कार्य आरम्भ हुआ तो राज्यके उच्चतम कर्मचारियोंकी उससे सहानुभूति थी ।

सन् १८८८ ई० का कार्य ।

दूसरी कांग्रेस कलकत्तेमें हुई । वहाँ लार्ड डफरिनने कांग्रेसके मेम्बरोंको गवर्नमेंट हाउसमें गार्डन-पार्टीमें निमंत्रित करके कांग्रेसके साथ बड़ी सहानुभूति प्रगट की । अगले साल मद्रासके गवर्नर लार्ड कानेमराने भी ऐसा ही सत्कार किया । परंतु इसके बाद परिवर्तन हो गया, कारण कि कई वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी कोई चिन्ह सफलताका नहीं दीख पड़ता था । ह्यूम साहब जैसे सच्चे हृदयके मनुष्यको कोरी सहानुभूतिकी बातें, जब तक कि उनको कार्यरूपमें न लाया जाय, हास्यप्रद मालूम होती थीं । कारण कि जन साधारणको ऐसे दुःखमें देख कर, जो बहुत कुछ दूर हो सकता है, उन्हें स्वयं बहुत दुःख होता था । ह्यूम साहब भारतवर्षके ग्रामीण लोगोंके वास्तविक जीवनसे भली भाँति परिचित थे। उन्होंने स्वयं अपनी आँखोंसे लगातार अकालों और उनके भयंकर दृश्योंको देखा था । वे जानते थे कि बेचारे गरीब किसानोंको कैसे कैसे दुःख भोगने पड़ते हैं । इन

सब बातोंको जतानेके वास्ते ही उन्होंने इंगलैंडके सुख-चैनसे रहनेवाले लोगोंको सम्बोधन करके एक छोटीसी पुस्तकमें लिखा था:—"ऐ सुख-चैनसे रहनेवालों और आनंदसे जीवन वितानेवालो तुमको कभी उन करोड़ों भारतवासियोंके दुःखों और कष्टोंका भी कुछ खयाल होता है, जो जन्मके दिनसे लेकर मृत्यु पर्यंत दुःख ही दुःखमें अपना समय व्यतीत करते हैं। एक क्षणके लिए भी जिन्हें सुख नसीब नहीं होता। हा, प्रकाशमय सूर्यकी एक किरण भी उनके अंधकारमय मार्गको प्रकाशित नहीं करती। रात दिन घोर परिश्रम करते, विपत्ति पर विपत्ति सहते और भूखकी वेदनाको झेलते हुए ही उनके शोकमय लघु जीवनका अंत हो जाता है।" ह्यूम साहबको रात दिन इन्हीं भारतवासियोंके दुःखोंकी चिंता रहती थी। हे जगदीश, जगत्पिता, अपनी प्रिय सन्तानकी रक्षा करो। हे दीनबन्धु करुणाकर, इन्हें जीवन दान दो। यही प्रार्थना अहिर्निश उनके मुखसे निकलती थी और इसी धुनमें वे सदा तन्मय रहते थे।

जिस मनुष्यक ऐसे भाव हों और जिसके हृदयमें ऐसी चोट लगी हो वह कुछ न होता हुआ देख कर कैसे शांतिसे बैठ सकता है। उपाय तो सब कुछ किये जाते थे, परंतु सफलता कुछ नहीं होती थी। समय बीत रहा था और निराशासे कार्यके बंद हो जानेका भय था। ह्यूम साहबने विचार किया कि चाहे जो हो, राज्य-कर्मचारियोंको इस विषयकी आवश्यकता जतानी चाहिए। उनका कथन था कि इस बातसे कोई भी इंकार नहीं कर सकता कि ब्रिटिश राज्यसे भारतको अपार लाभ हुआ, देशमें सदा शांति बनी रही और लोगोंके जीवन और धनकी पूरी पूरी रक्षा हुई; परंतु प्रजाकी आर्थिक कठिनाइयाँ दूर नहीं हुईं। ऋणके भारसे दबे हुए और जीवनसे निराश हुए किसानोंके रोग और दुर्भिक्षसे बचनेका कोई उपाय नहीं हुआ। इसका कारण यह

नहीं कि बृटिश राज्य ऐसा करना नहीं चाहता; किंतु यह है कि राज्य-कर्मचारियोंको प्रजाकी वास्तविक दशाका ज्ञान नहीं है। भारतवासियोंके सम्पूर्ण दुःखोंका कारण उनकी निर्धनता है और यह निर्धनता उस समय दूर हो सकती है जब सरकार अनुभवी प्रजा-प्रतिनिधियोंकी अनुमतिसे काम करे। वे लोग प्रजाके वास्तविक दुःखोंको जान सकते हैं; परंतु सरकारने इनकी कुछ भी पुकार नहीं सुनी। तब ह्यूम साहब फिर विचार करने लगे कि क्या करना चाहिए। काम बड़ा जरूरी था, कारण कि सुकालके न होने और रोगके बढ़नेके कारण सैकड़ों और हजारों ही नहीं, बल्कि करोड़ों मनुष्य मृत्युको प्राप्त हो रहे थे। ह्यूम साहबने सोचा कि सरकारका ध्यान इस ओर आकर्षित करनेके लिए यह आवश्यक है कि खूब जोर शोरसे काम किया जावे और वे ही उपाय काममें लाये जावें जिनका इंगलेंडमें ब्राइट और काबडनने प्रयोग किया था। और जिनसे उन्हें सफलता हुई थी। इंगलेंडमें अन्न-सम्बंधी कानून (Corn law) में जो उद्योग हुआ था, उससे ह्यूम साहब भली भाँति परिचित थे। उन्होंने स्वयं अपनी आँखोंसे सब काम होता हुआ देखा था। जब हाउस-आफ-कामन्सने उक्त कानून सम्बंधी सभाके प्रतिनिधियोंकी बातको नहीं सुना, तो काबडनने प्रतिनिधियोंसे कहा था कि "हम सरकारको सब हाल सुनाना चाहते थे, पर सरकारने नहीं सुना। अब हमको उचित है कि हम लोगोंको ही सचेत करें। इसी उपायसे सफलता होती दीखती है।" ह्यूम साहबने कहा कि हमारे साथ भी ऐसा ही हुआ है। हमारे शिक्षित पुरुषोंने, समाचार पत्रोंने, कांग्रेसके प्रतिनिधियोंने—सबने सरकारको हाल बतलाने और समझानेका उद्योग किया; परंतु सरकार नहीं सुनती है। इस कारण अब हमको चाहिए कि हम भी लोगोंको समझावें। जो लोग इंगलेंडमें रहते हैं उनको भी समझावें और जो भारतवर्षमें रहते हैं उनको भी

सचेत करें, कि जिससे हर एक भारतवासी हमारा सहायक और साथी वन जावे और आवश्यकता पड़े तो हमारे साथ उस युद्धमें भी सम्मिलित हो सके जो हम काबडन और उसके अनुयाइयोंके समान न्यायके वास्ते, स्वाधीनताके वास्ते और अपने स्वत्वोंके वास्ते करेंगे।

भारतवर्षमें इस रूपसे कार्य करनेके लिए ह्यूम साहव अपनी स्वाभाविक शक्तिसे काम करने लगे। भारतकी सभी जातियोंसे रुपयोंके लिए अपील करना, छोटे छोटे ट्रेक्ट और इश्तहार छपवा कर बाँटना, स्थान स्थान पर व्याख्यान दाता भेजना और जगह जगह सभायें करना उन्होंने शुरू कर दिया। भारतवर्षमें १००० से अधिक सभायें हुईं। कितनी ही सभाओंमें ५००० से भी अधिक श्रोतागण उपस्थित हुए। लग भग ५००००० ट्रेक्ट बाँटनेका प्रबंध किया गया। उनमेंसे २ ट्रेक्टोंका तो १२ भाषाओंमें अनुवाद हुआ।

स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि ऐसे प्रबल राजनीतिक आंदोलनके प्रति गवर्नमेंटकी उस समय कैसी दृष्टि थी। इस प्रश्नका उत्तर स्वर्गीय गोखले महोदयने अपनी उस वक्तृतामें दिया था जो उन्होंने ६ अगस्त सन् १९१२ ई० को लंदनमें ह्यूम साहबकी स्मारक-सभामें दी थी। उनके शब्दोंसे स्पष्ट विदित होता है कि ऐसी दशामें गवर्नमेंटकी क्या राय थी गोखले महाशयने कहा था कि "कोई भारतवासी इंडियन-नेशनल-कांग्रेसको स्थापित नहीं कर सकता था। इतने बड़े कार्यके चलानेके लिए ह्यूम साहव जैसी जादू भरी शक्तिका होना ही आवश्यक था। यदि कोई भारतवासी ऐसी शक्ति और ऐसे गुण रखता भी होता और भारतवर्षमें कांग्रेस जैसी सभा स्थापित करना चाहता तो भारतवर्षके राज्य-कर्मचारी कदापि ऐसी सभाको स्थापित न होने देते। उन दिनोंमें राजनीतिक आंदोलनको गवर्नमेंट इतने संदेहकी दृष्टिसे देखती थी कि यदि कांग्रेसका चलानेवाला एक बड़ा अँग्रेज न होता और अँग्रेज़ भी वह जो पहले एक

उच्च पद पर रह चुका था, तो राज्य-कर्मचारी किसी न किसी प्रकार उसकी गतिमें रुकावट डाल देते।" स्वर्गीय गोखले महाशयका यह विचार बिल्कुल ठीक था और यह निश्चित बात है कि उस प्रबल कार्य-प्रणालीके लोगोंको बतलाये जानेके बाद गवर्नमेंटके भावमें परिवर्तन हो गया। पहले तो मित्रताका व्यवहार था; परंतु पीछे विरोध भाव हो गया। ह्यूम साहब स्वयं इस बातको जान गये थे और उन्होंने कहा था कि हमारे मित्र बड़ी गम्भीरतासे हमसे कहते हैं कि "तुम्हारा अभिप्राय तो अच्छा है, परंतु तुम लोगोंको भड़का रहे हो और उनमें एक ऐसा जोश पैदा कर रहे हो कि जिसका परिणाम तुम इस समय नहीं सोच सकते। तुम ऐसी शक्तियाँ फैला रहे हो,. कि जिनका रोकना तुम्हारे काबूसे बाहर है।" ह्यूम साहबने ३० अप्रेल सन् १८८८ ई० को इलाहाबादमें एक विराट सभामें अपनी सफाई पेश की और कांग्रेसके विषयमें एक वक्तृता दी, जिसमें उन्होंने कांग्रेसकी उत्पत्ति क्यों हुई, उसके क्या उद्देश्य हैं और वह क्या कार्य करना चाहती है, इन सब बातोंको बतलाया। कांग्रेससे जो जोश लोगोंके दिलोंमें पैदा होगा, उसके विषयमें उन्होंने कहा था कि "कांग्रेसमें जो बात तय होती है, वह किसी एक या दो व्यक्तियोंकी सम्मतिसे नहीं होती; किंतु भारतके सभी योग्य अनुभवी और विचारशील मनुष्योंकी बहु सम्मतिसे होती है। कांग्रेस एक या दो मनुष्योंकी सभा नहीं है; किंतु सम्पूर्ण भारतवासियों-की है। कांग्रेसका काम यह है कि भारतवासियोंकी अधिकतर संख्याके लाभका विचार करे और स्थानीय लाभ और स्वार्थके अर्थ जो उद्योग होता है, उसे घटा कर सम्पूर्ण भारतकी जातीय उन्नतिके वास्ते उद्योग किया जाय तथा जो लोग उस उद्योगमें योग ले सकते हैं उनको केवल सर्व साधारणमें बोलना और वाद-विवाद करना ही न सिखलाया जाय और केवल यही नहीं कि वे अपने विचार दूसरों पर ठीक ठीक प्रगट

कर सकें, किंतु उन्हें संयम और आत्म-त्यागकी शिक्षा भी दी जाये और उत्तम रूपसे व्यवहार करना बतलाया जाय। असलमें लोगोंको ऐसी शिक्षा दी जाय कि जिससे उनको प्रतिनिधि-सभाओंके कार्योंका भली भाँति ज्ञान हो जाय। कांग्रेसका उद्देश्य यही है कि जब भारतवासी उक्त आदर्शके अनुसार हो जावें, तब गवर्नमेंट तथा इंगलैंडवासियोंसे कहा जावे कि अब भारतवर्ष इस योग्य हो गया है कि इसमें उस कामको जारी कर दिया जाय जिसके लिए देशके सभी विद्वान इतनी उत्कट इच्छा कर रहे हैं।"

इस प्रकार कांग्रेसका आंतरिक भाव बतला कर ह्यूम साहबने दिखलाया कि कांग्रेसकी शिक्षासे कोई राजनीतिक भय नहीं है। कांग्रेसमें लोगोंको सिखलाया जाता है कि ब्रिटिश राज्यसे भारतवर्षको जो जो लाभ हुए हैं, उनको जानों और याद रक्खो कि देशमें शांति और उन्नतिकी सम्पूर्ण आशा एक मात्र ब्रिटिश राज्यके जारी रहने पर निर्भर है। कांग्रेसमें लोगोंको बतलाया जाता है कि जिन कमियों और कठिनाइयोंकी तुम शिकायत करते हो, यद्यपि वे ठीक हैं, तथापि उन सुखोंके सामने वे कुछ भी नहीं हैं जो तुमको ब्रिटिश राज्यमें मिल रहे हैं और जो कठिनाइयाँ हैं वे सब दूर हो सकती हैं और जो कमियाँ हैं वे भी पूरी हो सकती हैं, यदि तुम सब लोग मिल कर धीरेसे भारत सरकार तथा इंगलैंडवासियोंसे निवेदन करो। कांग्रेसमें लोगोंको समझाया जाता है कि कानूनके प्रतिकूल चलना और गड़बड़ फैलाना महान पाप है। यदि तुम मिल कर शांतिके साथ कानूनकी सीमामें रहते हुए उद्योग करते रहोगे तो अंतमें अवश्य तुम्हारे साथमें न्यायका व्यवहार किया जायगा और जो उचित होगा वह तुम्हें मिल जायगा; परंतु यदि तुमने जल्दी की और हल-चल मचाई, तो तुम्हारी उन्नतिकी जड़ कट जायगी और तुम लोग भारी मुसीबतमें फँस जाओगे।

इसके बाद ह्यूम साहबने बड़े प्रभावशाली शब्दोंमें गवर्नमेंटसे प्रार्थना की कि सन् १८३३ और १८५४ ई० की शिक्षा-सम्बंधी नीतिको बराबर जारी रक्खा जाय। उन्होंने कहा कि यह ब्रिटिश गवर्नमेंट ही है जिसने भारतवासियोंको अविद्या-अंधकारसे निकालनेके लिए शिक्षाका प्रबंध किया है और उनमें पश्चिमीय शिक्षा द्वारा स्वाधीनता, प्रजा-स्वत्व और देशभक्तिके विचार फैला कर ऐसी शक्तियोंको रोक कर ठीक मार्ग-पर लगावें जिससे देशकी प्रगति हो और कोई भयानक दृश्य देखनेमें न आवे। गवर्नमेंटने कभी पूरे तौरसे इस बातको नहीं विचारा है कि उस पालिसीसे, जिसका सन् १८३३ ई० में लार्ड मैकालेने इतने जोरोंसे समर्थन किया था, एक बड़े भारी तूफानकी सम्भावना हो गई है। कांग्रेसवाले हम लोग तूफानसे पहले ही ऐसा उद्योग कर रहे हैं कि जिससे वह तूफान ठीक ठीक रास्तेसे होकर निकल जावे और हानि पहुँचानेकी जगह अच्छा फल उत्पन्न करे। काम करनेमें हम लोग इस बातकी कोई परवाह नहीं करते कि लोग हमें बुरा कहेंगे या भला। यदि हमारा उद्देश्य अच्छा है और ईश्वर हमें सफलता प्रदान करे, तो लोग चाहे जो कहा करें, हमें उसकी कोई चिंता नहीं है।

सर आकलैंड कालविनसे पत्र-व्यवहार।

ह्यूम साहबकी अलाहाबादकी वक्तृतासे, जिसमें उन्होंने कांग्रेसकी कार्य प्रणालीको ठीक सिद्ध किया था, "राज्य-कर्मचारियोंका ध्यान कांग्रेसकी ओर आकर्षित हुआ; परन्तु देहातमें कांग्रेसवालोंने जो कार्यवाही की, उसके कारण उनके हृदयमें कुछ भय सा हो गया। कुछ कर्मचारी गुप्त रूपसे खबरें मँगाने लगे और उन पर भरोसा भी करने लगे। कुछने मुसलमानोंको भड़काया कि तुम कांग्रेसका विरोध करो, कुछने कांग्रेसको दबाना और तोड़ना चाहा और कुछ यहाँ तक बढ़े कि उन्होंने यह सम्मति

थी कि ह्यूम साहबका भारतसे देश निकाला कर दिया जाय। इन सब बातोंको बढ़ा कर कहना व्यर्थ है। क्योंकि उच्च कर्मचारियोंने इन पर कोई ध्यान नहीं दिया; परन्तु सर आकलैंड कालविन और ह्यूम साहबके बीचमें जो अक्टूबर सन् १८८८ ई० में पत्र-व्यवहार हुआ था और जो पृथक् पुस्तकरूपमें सर आकलैंडकी स्वीकारतासे प्रकाशित भी हो गया था, वह कांग्रेसकी बुराई भलाईको अच्छी तरहसे समझनेके लिए बहुत काफी है। सर आकलैंड कालविन सिविल-सार्विसके बड़े प्रसिद्ध पुरुष थे और पश्चिमोत्तर प्रान्तके लेफ्टिनेन्ट गवर्नर थे। वे स्वतन्त्र विचार दलके थे और तीसरी कांग्रेससे पहले, जो मदरासमें हुई थी, उनकी कांग्रेससे पूर्णरूपसे सहानुभूति भी थी। अतएव कांग्रेससे अपनी नापसन्दीके जो कारण उन्होंने शान्ति और नम्रतापूर्वक लिखे हैं वे बहुत ही विचारणीय हैं। उनका पत्र बहुत ही अच्छे समयमें ह्यूम साहबके पास पहुँचा। कारण कि उस पत्रसे ह्यूम साहबको जन-साधारणमें अपनी सफाई पेश करने और सर आकलैंड कालविन जैसे माननीय प्रतिष्ठित समालोचककी शंकाओंका विशदरूपसे उत्तर देनेका अच्छा अवसर मिल गया। सर आकलैंड और ह्यूम साहबके पत्र इतने उपयोगी हैं कि हम उन्हें ज्योंके त्यों उद्धृत कर देते; परन्तु वे इतने बड़े हैं कि इस छोटीसी पुस्तकमें नहीं समा सकते। उदाहरणके लिए सर आकलैंडका पत्र २० मुद्रित पृष्ठोंसे भी अधिक है और ह्यूम साहबका उत्तर ६० पृष्ठके लगभग है। अतएव यहाँ पर उनका केवल अभिप्राय दिया जाता है तथा जगह जगहसे अनेक भागोंका अनुवाद भी दिया जाता है। इन दोनों पत्रोंसे कांग्रेसकी भलाई, बुराई विदित हो जायगी। कालविन साहबका विचार था कि जिस तरह इङ्गलैंडमें ब्राइट और कावडनने कार्य किया था, उसी ढंगसे हिन्दुस्तानमें जन साधारणको जोश दिलाना समयसे पूर्व है और भयंकर है; परन्तु ह्यूम साहबका

विचार था कि इसमें कोई भय नहीं है। यह सुराक्षित मार्ग है और राष्ट्रीय दुःख निवारणके लिए केवल यही एक मार्ग है।

इस विषयमें सर आकलैंड कालविनका कथन यह था कि कांग्रेसके उद्देश्योंसे तो मैं सहमत हूँ, परन्तु जिस रीतिसे वे उद्देश्य कार्यरूपमें लाये जा रहे हैं, उससे मैं सहमत नहीं हूँ। वे कहते थे कि लैजिस्लेटिव कौंसिल (व्यवस्थापक सभा) के मेम्बरोंकी संख्या बढ़ानेके वास्ते उद्योग करना तो ठीक है, और जो ढंग बम्बई और कलकत्तेकी कांग्रेस में सन् १८८५ व १८८६ में रक्खा गया वह भी ठीक था, परन्तु १८८७ ई० की मद्रासकी कांग्रेसके बाद उनकी सहानुभूतिमें बड़ी भारी टक्कर लगी। उनकी राय यह थी कि जो ढंग कांग्रेसने 'ऐन्टी कार्न ला (Anti Corn law) के सदृश रक्खा है वह भारतकी वर्तमान राजनीतिक अवस्थाके अनुसार ठीक नहीं है। ऐसे ढंगके वास्ते अभी समय नही आया है और ऐसा करनेमें इस बातका भय है कि कहीं उद्देश्य ही नष्ट न हो जाय। उनका यह भी विचार था कि ह्यूम साहबकी इस कार्यवाहीसे लोगोंके हृदयमें ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी ओरसे घृणा उत्पन्न हो जायगी और उसका परिणाम यह होगा कि परस्परमें विरोध बढ़ कर देशमें एक दूसरेके प्रतिकूल दो मंडलियाँ बन जायँगी। जो छोटी छोटी पुस्तकें उस समय निकली थीं, उनकी शैली और भावको भी कालविन साहबने पसन्द नहीं किया। उनका विचार था कि इन पुस्तकोंमें गवर्नमेन्टकी पालिसी और कार्यवाहीको मिथ्या रूपसे दिखलाया गया है। उन्होंने अपने विचारोंमें यह भी प्रगट किया था कि कांग्रेसवाले भारतवर्षके जनसमुदायके प्रतिनिधि होनेका झूठा दावा करते हैं। अन्तमें कालविन साहबने यह सलाह दी थी कि सुधारकोंको चाहिए कि लोक हितके अर्थ पहले सामाजिक सुधारकी ओर ध्यान दें जिनकी राजनीतिक सुधारोंकी अपेक्षा अधिकतर आवश्यकता है। जो शंकायें कालविन साह-

बने कीं वे निःसन्देह भारी थीं; परन्तु सन्तोष इस बातका है कि वे सब कार्य-प्रणालीके सम्बन्धमें थीं। कांग्रेसके उद्देश्यों या सिद्धान्तोंके विषयमें नहीं थीं। कांग्रेसके उद्देश्योंमें कालविन साहब जैसे निष्पक्ष समालोचक और दूरदर्शी शासकने कोई बात भी अपनी सम्मतिके प्रतिकूल नहीं पाई; बल्कि कांग्रेसके लेजिस्लेटिव कौंसिलके प्रसारवाले प्रस्तावसे उन्हें पूर्ण सहानुभूति थी।

यह प्रस्ताव ऐसा था कि इसकी उपयोगितामें किसीको भी कोई शंका नहीं थी। इसका लाभ जो कुछ है, वह सब बादमें प्रगट ही हो गया। क्योंकि इसीके अनुसार दादाभाई नौरोजी, माननीय रानडे, सर फीरोजशाह मेहता, डब्ल्यू. सी. बनर्जी, माननीय बदरुद्दीन तैयबजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, भूपेन्द्रनाथ बसु, गोपालकृष्ण गोखले, कृष्णस्वामी ऐयर जैसे महानुभाव सरकारके सच्चे सलाहकार नियत हुए और अपनी योग्यताके बलसे बड़े बड़े पदों पर पहुँचे। इससे बढ़ कर कोई अधिक सच्ची कहावत नहीं है कि यंत्र-विज्ञानके सदृश जीवनमें भी विना रुकावटके सहारा नहीं मिल सकता। सरकारको भी इन दृढ़ और स्वतंत्र विचारोंके मनुष्योंकी कदर मालूम करनेमें देर नहीं लगी, कारण कि ये लोग कष्ट और आपत्तिके समयमें सरकारके पूर्णरूपसे सहायक बने रहे।

इतना तो कांग्रेसके उद्देश्योंके विषयमें कहा गया। अब कुछ कांग्रेसकी कार्य-प्रणालीके अनुभवके विषयमें भी कहना है। इस प्रश्नका तुरन्त ह्यूम साहबने सर आकलैंड कालविनको उत्तर दिया था। कांग्रेस पर एक दोष यह लगाया था कि जो पुस्तकें कांग्रेसने प्रकाशित करके बाँटी हैं, उनको पढ़ कर लोगोंके हृदयमें गवर्नमेन्टकी ओरसे घृणा हो जानेकी सम्भावना है। ह्यूम साहबने इसके उत्तरमें लिखा था कि किसान लोगोंकी शिकायतोंके छिपानेसे कुछ लाभ नहीं है। जो मनुष्य देहातके जीवनसे परिचित है, वह जानता

है कि किसान लोग जब आपसमें बातें करते है तब कैसी कैसी शिकायतें करते हैं। दीवानीकी कचहरियोंमें खर्चेका बढ़ना, पुलिसके अत्याचार, भारी भूमिकर; शस्त्र तथा जङ्गलात सम्बन्धी कानून ये तमाम बातें ऐसी हैं कि जिनके कारण किसान लोग बड़े दुखी हैं। जरूरत इस बातकी है कि प्रत्येक बातमें न्याय हो, परन्तु जल्दी हो और उसमें अधिक खर्चा न हो। पुलिस ऐसी हो कि जिसे लोग अपना मित्र और सहायक समझ सकें। जमीनका कर हलका हो और शस्त्र और जंगलात सम्बन्धी कानूनोंमें सख्ती न हो। इस कारणसे कांग्रेसकी पुस्तकें और व्याख्यानोंमें इनके दूषणोंको छिपाया नहीं गया। इसमें कोई सन्देह नही कि हर एक घरमें ऐसे मनुष्य मौजूद है कि जो सरकारकी अनेक उत्तम बातोंको मानते हैं और सरकारने जो उपकार किये है, उनके कारण सरकारके कृतज्ञ है; परंतु सरकारकी अज्ञानतासे जो दुःख उठा रहे हैं उनको भी वे खूब जानते हैं और उन्हींके लिए चिल्लाते हैं। इसी कारणसे हम अपनी पुस्तकोंमें उन लोगोंसे सहानुभूति रखते हैं। उनकी शिकायतोंको मानते हैं, परन्तु उन्हें मुलायमीसे समझाते है। हम उन लोगोंसे कहते है कि ब्रिटिश गवर्नमेन्टसे बढ़ कर कोई भी गवर्नमेन्ट दुनियामें नही है, कारण कि उसका मूल सिद्धान्त यह है कि लोगोंकी इच्छानुसार काम हो। बड़े जोरसे हम उनसे कहते है कि राज्यकार्यमें यदि कुछ त्रुटियाँ रह जाती हैं, तो उसका दोष कर्मचारियों पर डालना उचित नहीं है। वह दोष किसी व्यक्तिका नहीं है, किन्तु पद्धतिका है। और यदि आप लोग कानूनकी सीमाके भीतर रहते हुए उद्योग करते रहोगे तो पद्धतिमें भी परिवर्तन हो जायगा।

दूसरा दोष कांग्रेसके सिर यह लगाया गया था कि देशमें एक दूसरेके विरुद्ध दो मंडलियाँ बन जायँगी। सर सैय्यद अहमद और उनके

मित्रोंने जो बातें कांग्रेसके विरुद्ध कही थीं, उनके यहाँ उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है ।

इसके विषयमें ह्यूम साहबने लिखा था कि उनका विरोध कुछ महत्त्वका नहीं है । कारण कि यह निश्चय है कि थोड़ेसे आदमियोंको छोड कर भारतके सभी विद्वान कांग्रेसकी ओर है । कांग्रेससे विरोध रखनेवाली मडली (Anti Congress party) को ह्यूम साहबने बडे कडे हाथों लिया । उन्होंने कहा कि यह मडली केवल थोडेसे अंग्रेजों (And be Indians) की है जिनमें बहुतसे राज्य-कर्मचारी हैं और जिन्हें कुछ एङ्गलो इन्डियन पत्रोंका सहारा है । ह्यूम साहबने लिखा कि कांग्रेससे विरोध रखनेवाली मण्डलीमें कुछ तो ऐसे भारतवासी शामिल है कि जिनमे समझ ही नही है, कुछ ऐसे है कि जो हृदयसे अंग्रेजी राज्यके विरुद्ध है, या गुप्त रूपसे इंगलेंडके शत्रुओंकी सेवामें है और कुछ ऐसे हवाके बन्दे है कि जो हृदयसे तो कांग्रेसके विरुद्ध नहीं है, किन्तु प्रत्यक्षमे इस वास्ते विरोध रखते है कि ऐसा करनेसे उन्हें कुछ प्राप्ति हो जायगी । उन्होंने यह भी बतलाया कि कांग्रेस लोगोंको पृथक् नहीं करती, किन्तु आपसमे मिलाती और प्रेम और एकताके सूत्रमें बाँधती है । जो लोग पहले कभी नहीं मिलते थे या मिलते भी थे तो लडाई झगडा करते थे, ऐसे लोगोंको कांग्रेस सिखलाती है कि मिलजुल कर काम करना चाहिए । हिन्दू मुसलमानोंका परस्परका विरोध भी कांग्रेसके कारण दूर होता जाता है ।

ह्यूम साहब इस बातमें मुसलमानोंकी बड़ी प्रशसा करते थे कि उनमें साहस और पुरुषार्थ है और वे जन साधारणकी सम्मतिका पक्ष रखते है । इस कारणसे उनको कभी विश्वास नहीं हुआ कि वे हृदयसे कांग्रेसके विरोधी है । उनकी रायमे विरोधके कारण कुछ बाह्य थे । या तो कुछ अदूरदर्शी कर्मचारी गण विरोध रखते थे जो भारतमें फूट डाल कर

राज्य करना चाहते थे या गवर्नमेन्टके शत्रुगण जो इस बातको नही देख सकते थे कि पृथक् पृथक् मंडलियाँ एकत्रित हो जायँ और ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी शरणमें रह कर मिल-जुल कर कार्य करें। अतएव ह्यूम-साहबने कांग्रेससे विरोध रखनेवाली मंडलीको केवल कल्पित माना और उसे कोई वास्तविक वस्तु नहीं समझा । उन्होंने यहाँ तक लिखा कि सबसे अधिक मुसलमानोंको ही मिल कर काम करनेसे लाभ होगा। इससे वे समयानुकूल अपनी उन्नति कर लेंगे। उनको विश्वास था कि मुसलमान लोग हमारी इस बातको समझ जायँगे और तीन वर्षके अन्दर कांग्रेसकी विरोधी मंडली नाशको प्राप्त हो जायगी और फिर आशा है कि कुछ समयमें कांग्रेसका विरोध भी बिल्कुल मिट जायगा । परन्तु साथमें यह भी बात है कि सर आकलैंड कालविनने जिस भयका संकेत किया था उसकी भी कुछ न कुछ बुनयाद अवश्य थी । इसमें सन्देह नहीं कि कांग्रेसकी उक्त कार्य-प्रणालीसे किसी अंश तक धार्मिक खेंचतान अवश्य हो गई थी । इस खेंचतानके दो कारण थे । एक तो यह कि कांग्रेसमें हिन्दुओंकी संख्या अधिक थी, कारण कि कांग्रेसके सहायक अधिकतर अंग्रेजी जाननेवाले थे और अंग्रेजी शिक्षाको सबसे पहले हिन्दुओंने ही ग्रहण किया था। दूसरा कारण यह था कि मुसलमान लोग पुरानी शिक्षा-प्रणालीके अनुसार चलनेके कारण पढ़ने लिखनेके कामोंमें हिन्दुओंसे बहुत पीछे रह गये थे और इसी कारणसे राज्य-दरबारमें भी बहुत कम मुसलमान उच्च पदों पर नियुक्त थे। इन बातोंको देखते हुए कोई भी आश्चर्यकी बात नहीं थी, यदि मुसलमान कांग्रेसको ईर्षा और द्वेषकी दृष्टिसे देखने लगे । यह नहीं कहा जा सकता कि आजकल मुसलमानोंमें ऐसा विचार बिल्कुल नहीं है, परन्तु सन्तोषकी बात यह है कि पढ़े लिखे मुसलमानोंका तथा हिज हाइनेस आगाखाँ जैसे नेताओंका अब यह विचार बिल्कुल

नहीं है। ह्यूम साहब स्वयं इस विचारके विरुद्ध थे कि मुसलमान लोग योग्यतामें कम है। उन्होंने कहा था कि मेरी रायमें लोगोंका यह कथन, कि मुसल्मान योग्यतामें हिन्दुओंसे इतने कम है कि यदि सब जातियों-को बराबर बराबर उन्नति करनेका मौका दिया जावे तो वे बिल्कुल पीछे रह जावेंगे, सर्वथा मिथ्या है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि कोई भी सच्चा विचारशील मुसलमान अपने सहधर्मी पर ऐसा दोषारोपण करनेके लिए तैयार नहीं हो सकता। स्वयं मेरी दृष्टिके सामने सैकडो हिन्दू मुसलमान रहे हें और सैकडों मुसलमानोंसे मेरी मित्रता है। मैं कभी भी इस बातको नहीं मानूंगा कि मुसलमान योग्यतामें कम हे। सर सालार जंग, जस्टिस बदरुद्दीन तय्यबजी, जस्टिस सैय्यद महमूद तथा और कितने ही माननीय पुरुषोंको मे जानता हूं। मुसलमानों पर यह झूठा दोष लगाया जाता है। ये लोग पहले समयमें भी और हालमे भी बराबर अपनी योग्यता प्रगट करते रहे हैं। मैं विश्वास दिलाता हूं कि ब्रिटिश शासनसे जितने भी लाभ मिल सकते हैं, उन सबको ये लोग प्राप्त कर सकेंगे। कारण कि इनमें सदैवसे कार्य करनेकी शक्ति और, योग्यता पाई जाती है। अन्तमें ह्यूम साहबने लिखा कि मे इस विषय-पर इस कारण बल पूर्वक कहता हूँ कि मुसलमानों पर अयोग्य होनेका दोष लागाना मानों मेरा अपमान करना हे। क्योंकि गत वर्षोंमें मैं इन लोगोंका बडा कृतज्ञ रहा हूं और बहुतसे मुसलमान अब भी मेरे मित्र है। मै उन वीर मित्रों और सहायकोंको कदापि नहीं भूल सकता जिन्होंने भय, आपत्ति और दुःखके समयमें मेरी सहायता और रक्षा की और जो मेरे साथ और मेरे लिए सन् १८५७ ईस्वीमें शत्रुओंसे लडे। केवल इतना ही नहीं, किन्तु जिनमेंसे अनेकोंने मित्रता और भक्तिके कारण अपने प्राणों तकको न्योछावर कर दिया। ऐसे मित्रोंको मे कदापि नहीं भूल सकता।

कालविन साहबने जो और छोटे छोटे दाप निकाले थे, उन सबके उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं है। परन्तु उन्होंने जो काग्रेस पर यह दोप लगाया था कि काग्रेस भारतवासियोंकी प्रतिनिधि सभा नही है, इसके उत्तरमें ह्यूम साहबने लिखा था कि ग्रेट-ब्रिटिनमे जो सबसे पहले पालियामेन्ट बनी थी, वह कतिपय मनुष्याकी सम्मति प्रगट करती थी और एवरडीन जैसे उन्नतिशाली शहरों और प्रदेशोंमे भी चुनाव में १० सैकडेसे भी कम मनुष्य योग लेते थे। यदि काग्रेस जन साधारणकी प्रतिनिधि सभा नहीं है तो न सही, इतना तो अवश्य है कि शिक्षित पुरुषोंकी प्रतिनिधि सभा है। इस बातकी पुष्टि लार्ड लैन्सिडानने भी बादमें की थी। उन्होंने कहा था कि काग्रेस स्वतत्र और उदार विचारवाली सभा है। कालविन साहबका जो यह कहना था कि काग्रेसको राजनीतिक सुधारको छोड कर समाज सुधारका काम अपने हाथमें लेना चाहिए सो इसके उत्तरमें ह्यूम साहबने कहा कि हम लोगोंके सामने आदर्श बहुत ऊँचा है। हमारा उद्देश्य धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक सभी दृष्टियोंसे देशकी उन्नति करनेका है। काग्रेस जो राजनीतिक सुधार चाहती है उसकी केवल एक शाखा है। काग्रेसने इस कार्यको इस वास्ते अपने हाथमें लिया है कि यह सम्पूर्ण भारतके लिए समान है। सामाजिक सुधार प्रत्येक जाति और प्रत्येक प्रान्तमे भिन्न भिन्न प्रकारका है, अतएव उस कार्य पर पृथक् पृथक् सभायें विचार करेंगी, परन्तु साथमें यह बात है कि जितने लोग राजनीतिक सुधार चाहते हैं, वे सब सामाजिक सुधारके पक्षपाती हैं और उसके लिए निरन्तर उद्योग भी करते रहते हैं।

अब हम उस विषय पर विचार करते हैं जिसमें ह्यूम साहब और कालविन साहबका झगडा था। कालविन साहब कहते थे कि काग्रेस अभी समयसे बहुत पहले है। अभी इसके लिए उचित समय

नहीं आया है तथा कांग्रेसके होनेसे लोग गड़बड़ करेंगे; परन्तु ह्यूम साहबका विचार था कि राज्य-स्थितिके वास्ते कांग्रेसका होना आवश्यक है। अब प्रश्न यह है कि इन दोनोंमेंसे कोनसी बात ठीक है। जिन लोगोंको भारतवर्षका असली हाल मालूम नहीं है उनको यह देख कर बड़ा आश्चर्य होगा कि इन दोनों महाशयोंकी सम्मतिमें ऐसा अन्तर क्यों है? वास्तवमें जब दोनों अनुभवी कर्मचारी थे, दोनों भारतकी उन्नतिके हृदयसे इच्छुक थे और दोनों ही सर्व साधारणके शुभचिन्तक थे, तब दोनोंकी सम्मतियोंमें ऐसा अन्तर होना अवश्य आश्चर्यकी बात है। परन्तु इस बातका समझना कुछ कठिन नहीं है। प्रत्येक भारत-वासीको इसका कारण मालूम है। यह मतभेद दूर होना असम्भव है, कारण कि अंतर, दृष्टिका है। कालविन साहब लेफ्टिनेन्ट गवर्नर थे और ह्यूम साहब कांग्रेसके नेता थे। अतएव कालविन साहब प्रत्येक बातको राजनीतिक दृष्टिसे देखते थे और ह्यूम साहब जन साधारणके लाभकी दृष्टिसे। ह्यूम साहबने कालविन साहबसे कहा था कि आप अभी गवर्नमेंटको अफसरीकी निगाहसे देखते हैं। पहले मेरा भी यही हाल था, परंतु जब आप सरकारकी नौकरी छोड़ देंगे, सर्व साधारणसे मिले जुलेंगे और लोग भी निर्भय होकर अपना सब हाल आपसे कहेंगे, तब आपको असली बातोंका ज्ञान हो जायगा और फिर आपकी सम्मतिमें अवश्य परिवर्तन हो जायगा। ह्यूम साहब कहते थे कि लोगोंका ठीक ठीक हाल मालूम करनेके लिए सबसे उत्तम रीति यही है कि उनसे मिला-जुला जाय। जब तुम उनका विश्वास करोगे तो वे भी तुम्हारा विश्वास करेंगे। जो बात मालूम करनी हो, वह लोगोंसे स्वयं मिलके मालूम करनी चाहिए। केवल इसी रीतिसे असली हाल मालूम होगा; परन्तु अंग्रेज अफसरोंको यह बात बहुत कम नसीब होती है। इसका कारण यह है कि बहुतसे स्वार्थी मनुष्य अपने मतलबके लिए उन्हें घेरे रहते है, उनकी

खुशामद करते रहते है और कोई ऐसी सच्ची बात उनसे नहीं कहते जो उन्हें बुरी लगे। ये लोग अपने स्वार्थके वास्ते अफसरोंको जिलेके स्वतंत्र विचारवाले मनुष्योंसे भी नहीं मिलने देते, यही नहीं किन्तु उनसे कहते रहते है, कि वे राज्यके मित्र नहीं किन्तु राज्यके द्रोही हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बहुतसे अच्छी प्रकृतिवाले अफसर भी अच्छे आदमियोंसे विरोध रखने लगते हैं और खुफिया पुलिस और नीच लोगोंके फंदेमें पड़ जाते है। स्वतंत्र विचारोंके मनुष्य प्रत्येक प्रान्तमें और प्रत्येक जिलेमें पाये जाते है; परन्तु उन्हें ध्यानसे खोजनेकी आवश्यकता है। वे लोग स्वयं अपनी इच्छासे अफसरोंके घरों पर नहीं जाना चाहते, कारण कि वे इस बातको नहीं सह सकते कि अफसर लोग उन्हें सन्देहकी दृष्टिसे देखें और छोटे छोटे आदमी उनका अपमान करें। ऐसे स्वतंत्र विचारके मनुष्योंसे ही, जो भारत और इंगलेंड दोनोंके सच्चे मित्र हैं, ह्यूम साहबने सम्बन्ध किया था और उन्हींसे ह्यूम साहब सलाह लेते थे। इन सबकी राय थी। कि जन साधारणके दुःख और उस पर शिक्षित लोगोंकी नाराजगीके कारण भविष्यमें भयकी आशंका मालूम होती है और यदि इस भयको दूर करना है तो शीघ्र ही इसका प्रतिकार होना चाहिए। इन्हीं बातोंको ध्यानमें रखते हुए ह्यूम साहबने कालविन साहबको उत्तर दिया था कि हम मानते हैं कि कांग्रेसके चलानेमें कुछ भय अवश्य है और भारतवर्षमें यह आन्दोलन नवीन है और यदि संभव होता तो हम बड़ी खुशीसे कुछ दिनके लिए इस कार्यको और भी न उठाते; परन्तु क्या करें उस समय ऐसा ही करना उचित समझा गया। पश्चिमीय शिक्षा, विचारों, आविष्कारों और नई नई बातोंने लोगोंके दिलों पर विचित्र प्रभाव डाल दिया था। यदि इस प्रभावको इसी तरह छोड़ दिया जाता और इसके वास्ते अच्छा मार्ग न निकाला जाता तो बड़े भयकी सम्भावना थी। हम मानते हैं कि किसी किसी प्रांतमें और किसी दृष्टिसे कांग्रेस समयसे

कुछ पहले बनी मालूम होती है, परन्तु जब ब्रिटिश राज्यकी भावी स्थिरताकी ओर देखते हैं तो विदित होता है कि कांग्रेस स्थापित होनेके समय यह सवाल नहीं था कि कांग्रेस समयसे पहले बनी; किन्तु हमें यह भय था कि बहुत देर तो नहीं हो गई और देश इसको स्वीकार भी करेगा कि नहीं । स्वयं गवर्नमेंटके कार्योंसे भारतवासियोंमें शक्ति उत्पन्न हो गई थी और इस बातकी आवश्यकता थी कि उस शक्तिको सीमाके अंदर रक्खा जाय, नहीं तो विद्रोह हो जानेकी सम्भावना है । उस शक्तिको ठीक ठीक सीमाके अंदर रखनेके वास्ते कांग्रेससे बढ़ कर और कोई वस्तु नहीं हो सकती थी। ह्यूम साहब इस मामलेमें जी-जानसे उद्योग कर रहे थे। वे भारतवासियोंको भली भाँति जानते थे । उनको मालूम था कि ये लोग पुरानी बातोंको एकदम नहीं छोड़ देते, राज्यभक्त और नियम निष्ठ हैं, और धैर्य और शांतिमें बड़े पक्के हैं और जब तक इनकी शांतिमें कोई विघ्न न डाला जाय ये कभी हा-हू नहीं मचाते । इन सब बातोंको जानते हुए ह्यूम साहबका विश्वास था कि जो कुछ मैं कर रहा हूँ वह ठीक है। और शांतिपूर्वक नियमानुसार कार्य्य करनेसे भारतवासियोंका दुःख अवश्य दूर हो जायगा। ह्यूम साहबकी शिक्षासे भारतवासी बड़ा लाम उठा सकते हैं। उनकी शिक्षासे विदित होता है कि भारतवर्षमें भय किस कारणसे हो सकता है । भारतमें भयके दो ही कारण हो सकते हैं । एक तो जन साधारणका दुःख, दूसरे असन्तुष्ट शिक्षित लोगोंकी अशान्ति। एक कारण और भी है जो बातको और अधिक भयंकर बना देता है। वह यह है कि भारतवासियों पर राज्य करनेवाले कतिपय विदेशी लोग हैं, जिनकी भाषा, जाति, धर्म इत्यादि सब बातें भिन्न हैं और जो दूसरोंके भावों और विचारों तथा दुःख-सुखकी कुछ भी परवा नहीं करते। वे अपनी ही मतिसे सम्पूर्ण भारतमें राज्य-कार्य चला रहे हैं । यदि

भारतवासियोंमें कहीं दुःखकी पुकार होती भी है, तो उनके कान तक नहीं पहुँचती। उनको पता भी नहीं रहता कि अंदर ही अंदर क्या हो रहा है। यही कारण है कि जब कभी सन् १८५७ ईस्वी जैसी आपत्ति आती है, तो वे देखते के देखते रह जाते हैं कि यह क्या हो गया। इस लिए यह आवश्यक है कि उन लोगोंकी बातोंको ध्यान पूर्वक सुना जाय जो सब बातोंसे परिचित हैं। ऐसा करना ही भारतमें ब्रिटिश राज्यकी स्थिरताके लिए लाभदायक है। इतिहास भी यही कहता है कि–निःसन्देह वेनिसकी राज्य-व्यवस्था भी यहाँकी राज्य-व्यवस्था जैसी थी और वह राज्य भी बहुत दिनों तक स्थिर रहा; परन्तु उसमें भेद यह था कि वहाँके सब आधिकारी उसी देशके वासी थे और राज्यनीति-में बड़े निपुण थे। प्रत्येक बातकी वे खबर रखते थे और विद्रोहके आरंभ हीको देख कर पहलेसे ही उसके पैर तोड़ डालते थे। भारतमें यह बात नहीं है। इस लिए वेनिससे इसका मिलान नहीं किया जा सकता। हाँ १८ वीं शताब्दिके अन्तमें बोरबोन लोगों (Bourbons) के राज्यसे यहाँकी अवस्था मिलती है। न तो वे किसी बातको देखते थे और न सुनते थे। उसीका यह परिणाम हुआ कि उनका राज्य एकदम नाशको प्राप्त हो गया। बुद्धिमानोंकी उनके प्रति घृणा और जनसाधा-रणकी निराशा उनको ले डूबी। इसमें सन्देह नहीं कि कठिनाईके समय अंग्रेज लोग बड़ी सावधानीसे काम करते हैं और अन्तमें प्रायः विजय प्राप्त करते हैं; परंतु बहुतसी जानों और बहुतसे श्रमका व्यर्थ व्यय होता है। यदि वर्तमानका अटकल पच्चू मार्ग छोड़ कर उत्तम रीतिसे राज्य किया जाय, तो कुछ भी हानि और कठिनाई न हो।

भारतके साधु-महात्मा।

ह्यूम साहबके सन् १८५७ ई० के विद्रोहके अनुभव पर दृष्टिपात करते हुए तथा यह देखते हुए कि उन्होंने उस समय किस वीरता और

योग्यतासे काम किया, इस बातमें कुछ भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि ह्यूम साहबको जो भावी भय था वह वास्तवमें ठीक था। उनके इस विचारकी कांग्रेसके कितने ही सदस्योंने, जो सम्पूर्ण भारतमें फैले हुए थे, पुष्टि की थी। परन्तु इसके अतिरिक्त ह्यूम साहबको एक और खास जरियेसे अर्थात् भारतके सभी प्रदेशोंके साधु-महंतोंसे बहुत कुछ पता लगा था। उनके कागजोंमें एक पत्र मिला है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि साधु-लोगोंसे, जो लाखोंकी संख्यामें भारतमें पाये जाते हैं, मामलेको समझनेमें बड़ी सहायता मिल सकती है। इसमें सन्देह नहीं जो लाखों साधु, फकीर, वैरागी फिरते हैं उनमेंसे अधिकतर गुंडे और बदमाश है; परन्तु पाँचों उँगलियाँ एक सी नहीं होतीं। जहाँ मैल है, वहाँ सोना भी है। इनमें भी बहुतसे साधु-बड़े स्वच्छ हृदय और गुणोंकी खान हैं, जिन्होंने सांसारिक इच्छाओंको बिल्कुल दमन कर लिया है और जिनकी इच्छा सदैव भलाईकी ओर रहती है। इनको अपने चेलोंके द्वारा लोगोंका सब गुप्त हाल मालूम होता रहता है। लोगोंकी सम्मति पर इनका प्रभाव भी बहुत पड़ता है। ह्यूम साहबने इन महंतोंसे ही मिलने जुलनेका ढंग लगाया। महंतोंको ह्यूम साहबसे सहानुभूति होनेका एक कारण तो यह था कि ह्यूम साहब पूर्वीय देशोंके धर्मोंके पक्के जानकार थे—उनसे धर्म सम्बंधी बातें होती थीं; परन्तु वास्तवमें महंत लोगोंके इनसे खुल जानेका कारण यह था कि इन लोगोंको यह भय लगा हुआ था कि समस्त भारतमें अशांतिके चिन्ह प्रगट हो रहे हैं और छोटे छोटे आदमियों तकके मन बिगड़े हुए हैं। यदि किसी प्रकार यह बढ़ती हुई अशांति न रुकी तो एक दिन अवश्य विद्रोह हो जावेगा। महंतोंने विचार किया कि यदि कोई मनुष्य इस कार्यको कर सकता है तो वह ह्यूम साहब ही हैं; क्योंकि उनकी पहुँच गवर्नमेंट तक है। उन लोगोंने ह्यूम साहबसे कहा था कि, "साहब! जंगल सब सूखा है और जब हवा चलती है तो आग एकदम फैल जाती है।

आज कल ऐसी ही हवा बड़े वेगसे चल रही है।" ह्यूम साहबने लिखा है कि इस ढंगसे यह बात मेरे सामने लाई गई। चूंकि मै भारत-वर्षसे और यहाँकी बातोंसे भली भाँति परिचित था और १८५७ ई० के विद्रोहमें इसी प्रकारका अनुभव भी प्राप्त कर चुका था और उस समयकी अवस्थासे ये सब बातें सच्ची भी मालूम होती थीं। अतएव मुझे पूर्ण विश्वास हो गया था कि जो कुछ महंत लोग कहते हैं वह बिल्कुल ठीक है और इस बातमें चरा भी सन्देह नहीं है कि उस समय भारतमें भयंकर विद्रोहके फूट पड़नेका पूरा पूरा भय था।

किन बातोंसे ह्यूम साहबको उस समयकी हालतका विश्वास हुआ, उसके विषयमें स्वयं ह्यूम साहबने लिखा है कि "जिस बातने मुझे लार्ड लिटनके हिन्दुस्तानसे जानेके लगभग १५ मास पूर्व विश्वास दिलाया था कि एक भयंकर विद्रोहकी संभावना है, वह यह है कि मुझे सात किताबें दिखलाई गई। सात प्रदेशोंके नामसे सात किताबें थीं। उनमें बहुतसी बातें लिखी हुई थीं। कहीं अंग्रेजी लिखी थी, कहीं देशी रिपोर्टोंसे अनुवाद किया हुआ था, कई और नाना प्रकार तरहकी सूचनायें थीं। ये पृथक् पृथक् जिले, हिस्से जिले, नगर, कस्बे और ग्रामके अनुसार थीं; परन्तु इनके जिले हमारे जिलोंसे नहीं मिलते थे। इन पुस्तकोंमें बहुत कुछ लिखा हुआ था और कहा जाता था कि तीस हजारसे अधिक समाचार देनेवाले थे। मैंने उनको गिना नहीं; क्योंकि वे असंख्यात मालूम होते थे, परन्तु पश्चिमोत्तर प्रान्तके एक जिलेके कस्बों और ग्रामोंकी, जिससे मैं खूब परिचित था, तीनसौके लगभग लिखावटें थीं। उनमेंसे बहुतसे नामोंको मैने कुछ कुछ पहचान भी लिया था।" इसमें सन्देह नहीं कि जिस जिलेके विषयमें कहा गया है वह इटावा ही था। इस जिलेमें ह्यूम साहब कई वर्ष तक कलेक्टर मेजिस्ट्रेट रह चुके थे। उन्होंने लिखा है कि पुस्तकें

एक सप्ताह तक मेरे पास रहीं। उनमेंसे छः पुस्तकोंको तो मैंने केवल एक दृष्टिसे देखा; परन्तु उस पुस्तकको, जिसमें पश्चिमोत्तर प्रांत अवध और विहारके अधिकतर भाग तथा बुंदेलखंड और पंजावके कुछ भागोंका हाल था, मैंने बहुत बारीकीसे देखा और जिन स्थानोंसे मैं परिचित था उनकी लिखावटोंका उनसे मिलान भी किया। इन लिखावटोंमें बहुतसी ऐसी थी कि जिनमें नीच जातिके लोगोंकी आपसकी बातचीत थी। इनसे विदित होता था कि निर्धन लोगोंके हृदयमें उस समयकी अवस्थाको देख कर एक प्रकारकी निराशा हो गई थी और उनको विश्वास हो गया था कि हम भूखों मर जावेंगे। अतः वे चाहते थे कि कुछ उपाय करें और जो कुछ भी करें उसमें एकत्र होकर काम किया जाय। कुछसे तात्पर्य यही है कि विद्रोह करें, कारण कि सैकड़ों जगह उक्त पुस्तकोंमें लिखा था कि प्राचीन तलवारों, भालों और बंदूकोंको छिपा कर रक्खा जावे और जब आवश्यकता पड़े तो तैयार मिलें। यह नहीं खयाल किया जाता था कि इसका परिणाम एकदम राज्यके विरुद्ध विद्रोह होगा; किंतु यह भय था कि पहले तो लोग मारधाड़ मचावेंगे, जिन लोगोंसे दुःख पहुँचता है उनको मारे काटेंगे, साहूकारों पर डाका डालेंगे और बाजारोंको लूटें खसोटेंगे। भूखों मरनेवाली नीची जातियोंमें ऐसा विचार हो रहा था कि एक, दो आदमियोंको ऐसा करते हुए देख कर और भी बहुतसे लोग उनमें मिल जावेंगे और इस प्रकार बड़ी गड़बड़ मच जावेगी, जिससे गवर्नमेंट तथा सभ्य लोगोंको बड़ी हानि पहुँचेगी। यह बात निश्चित जान पड़ती थी कि सब जगह छोटी छोटी मंडलियाँ मिल कर बड़े झुंड बन जावेंगे। देशके समस्त बदमाश मिल जावेंगे और जब ये समूह भयंकर रूपमें बढ जावेंगे, तो कुछ पढ़े लिखे लोग भी, जो पहलेहीसे गवर्नमेंटके विरुद्ध हैं, उनमें मिल कर उनको मार्ग बतलाने लगेंगे और वह विद्रोह अन्तमें जातीय विद्रोह-

का रूप धारण कर लेगा। इस प्रकारकी सूचनायें ह्यूम साहबको मिली थीं। वे लिखते है कि वास्तवमें बम्बई प्रांतमें ऐसा ही मेरे देखनेमें आया। जगह जगह डाके पड़ने लगे और साहूकारोंके यहाँ लूट खसोट होने लगी। धीरे धीरे डाकुओंकी संख्या बढ़ती गई और उनका सामना करना पुलिसके लिए दुष्कर हो गया। तब पूनाकी सम्पूर्ण सेना पैदल, घुड़सवार तथा तोपखानेको उनका मुकाबिला करना पड़ा। फौजके सामने तो ये सब लोग इधर उधर तितर बितर हो गये; परंतु जल्दी ही फिर आपसमें मिल गये। उनके नेताने अपनेको द्वितीय शिवाजीके नामसे प्रसिद्ध कर रक्खा था। उसने ५००) रु० का इनाम उस मनुष्यके लिए बोल रक्खा था जो बम्बईके गवर्नर सर रिचर्ड टेम्पिलका सर उसे लाकर दे।

इस विषयको समाप्त करनेसे पहले यह बात ध्यान देने योग्य है कि ह्यूम साहबको विश्वास था कि महतोंकी सात किताबोंमें जो बातें लिखी थीं वे अवश्य सच्ची थीं, कारण कि वे बातें वे ही थीं जो चेलोंने अपने गुरुओंसे कही थीं। यह बात इस मामलेको भी साफ कर देती है और इससे यह भी विदित हो जाता है कि ह्यूम साहबकी प्रकृति किस प्रकारकी थी, जिसके कारण उनको भारतीय धर्म-सम्बंधी विचारोंमें इतनी रुचि थी। उन्हें इस बातका क्यों विश्वास था कि चेला अपने गुरुसे झूठी बात नहीं कह सकता, इसका उत्तर वे स्वयं देते है। उन्होंने लिखा है कि चेले और गुरुका सम्बध ऐसा होता है जैसा पिता पुत्रका, शिक्षक ओर शिष्यका। अंग्रेजी भाषामें कोई भी एक शब्द चेलेके पूर्ण अभिप्रायको प्रगट नही करता। चेले और गुरुके बीचमें जो धार्मिक सम्बन्ध होता है वह किसी एक शब्दसे ठीक ठीक प्रगट नहीं हो सकता। कोई मनुष्य उस समय तक सच्चा चेला नहीं हो सकता जब तक कि संसारकी समस्त बातोंको त्याग कर अपनी आत्मोन्नतिके वास्ते

अपनी समस्त शक्तियों और उद्योगोंको अर्पण न करदे और अपनी आशाओंको उसी उद्देश्यकी पूर्तिमें न लगा दे। महंतोंके पास जो चेले होते हैं वे भी अपने गुरुकी सेवा करने और उनसे द्वेष न रखनेके लिए प्रण किये हुए रहते हैं। मुख्य चेलोंके बंधन तो और भी अधिक होते हैं। कोई चेला कभी अपने गुरुको धोखा नहीं दे सकता, कारण कि वह जानता है कि उसकी सम्पूर्ण उन्नति गुरुको प्रसन्न करनेमें ही है। यदि कोई गुरु किसी चेलेको अनाधिकारी समझ कर निकाल दे तो फिर उस चेलेको कोई गुरु नहीं रखता। इस दशामें कोई सच्चा चेला अपने गुरुसे जो कुछ कहता है, उसे बिल्कुल सच्चा मान लेना चाहिए। यह तो सम्भव है कि वह भूल कर जाय, परंतु गुरुके समीप झूठ कभी नहीं बोल सकता। कुछ समाचार देनेवाले ऐसे भी थे कि जो पहले चेले रह चुके थे, परंतु पीछे साधारण गृहस्थ हो गये थे—बहुतसे लोग प्रतिष्ठित गृहस्थ थे, परंतु वे ऐसे थे कि जो पहले चेले रह चुके थे और अनेक प्रकारके व्रत और प्रतिज्ञायें कर चुके थे। पीछे किसी कारणसे उन्हें छोड़ कर गृहस्थीमें आ गये थे; परंतु अधिक समाचार देनेवाले प्रत्येक मत और सम्प्रदायके साधु लोग थे। ये लोग कभी अपने प्रणको नहीं तोड़ सकते थे। ह्यूम साहब आगे चल कर लिखते हैं कि इन साधुओंके जीवनकी यह मुख्य बात है कि ये अपनी बातोंको बड़ी गुप्त रख सकते हैं और यही कारण है कि बहुत कुछ जाननेवाले यूरोपियन लोगोंको तथा अधिकतर शिक्षित भारतवासियोंको इन अनेक सम्प्रदायोंके अस्तित्व तकका पता नहीं। ह्यूम साहबसे जो उन्होंने अपना भेद खोल दिया, इसके विशेष कारण थे। सबसे प्रबल कारण यह था कि वे भावी आपत्तिको दूर करना चाहते थे। ह्यूम साहब किस प्रकार उनसे मिलते थे उसको वे स्वयं बतलाते हैं:–

"मैंने इस बातकी प्रतिज्ञा कर ली थी कि जो कुछ महंत लोग

मुझसे कहेंगे, उसे मैं करता रहूँगा जब तक कि मुझे इस बातका विश्वास न हो जाय कि जो कुछ वे कहते हैं उसमें कोई बुराईकी बात है और जिस बातके गुप्त रखनेके वास्ते वे मुझसे कहेंगे मैं उसे कभी प्रगट नहीं करूँगा जब तक कि मुझे प्रत्यक्ष रूपसे यह ज्ञात न हो जाय कि उसका गुप्त रखना हानिकर है। "

उपर्युक्त बातोंसे विदित होता है कि ह्यूम साहब केवल एक जिलेके अफ़सर ही नहीं थे, किंतु उनकी दृष्टि इस बात पर रहती थी कि भारतवासियोंके वास्तविक भावोंको वे मालूम करें और फिर उन्हींके अनुसार उनसे व्यवहार करें, कि जिससे किसी विषयके समझनेमें कोई भारी भूल न हो जावे और कोई ऐसी बात भी न हो जावे जो ब्रिटिश राज्य और भारतवर्ष दोनोंको हानिकर हो।

इंगलेंडमें कार्य।

अब पाठक गण अपने खयालोंको जरा भारतसे हटा कर इंगलैंडकी ओर ले चलें। यह पहले बतलाया जा चुका है कि कांग्रेसको प्रारम्भ करते हुए यह विचारा गया था कि इसके दो विभाग होने चाहिए और दोनों पूर्ण हों। कोई दूसरे पर निर्भर न हो। जैसा भारतमें कार्य होना आवश्यक है, वैसा ही इंगलैंडमें भी होना चाहिए। भारतमें सुधारोंका क्रम और ढाँचा तैयार हो रहा था। इंगलैंडमें भी इस बातकी आवश्यकता थी कि पार्लियामेंट और वहाँके लोगोंका ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाय। ह्यूम साहबको पूर्ण विश्वास था कि अंग्रेज लोग भारतके वास्ते न्याय मार्गकी इच्छा रखते हैं और चाहते हैं कि वहाँ कोई अन्याय न हो। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि उनको मामलेका पूरा पूरा हाल मालूम हो। इसमें संदेह नहीं कि शुरूमें ये लोग केवल स्वार्थवश भारतमें आये थे; परंतु बादमें धीरे धीरे जातीय विवेककी इनमें उत्पत्ति हो गई और कर्त्तव्यकी ओर इनका ध्यान गया। इस

-लिए भारतको इस बातकी आवश्यकता है कि अपने दुःख अपने बड़े भाई इंगलैंडसे कहे और जरा जोरसे आवाज लगावे कि जिससे वह इंगलैंडके कानोंमें पहुँच जावे।

ह्यूम साहबके उपर्युक्त विचार थे। उन्होंने भारतके सुधारकोंसे कहा था कि अंग्रेज लोगोंके चित्तको अपनी ओर आकर्षित करनेके लिए अत्यन्त उद्योग करते रहना उचित है। ऐसा करनेसे ही वे लोग एडमंड बर्क, लार्ड मेकाले, जान ब्राइट जैसे महानुभावोंके विचारोंको कार्यरूपमें लाते रहेंगे। सन् १८३३ ई० के कानूनमें जो कुछ लिखा है अथवा विक्टोरिया महारानीने जो घोषणा सन् १८५८ ई० में की थी, वह पूर्ण रूपसे तभी उपयोगमें आती रहेगी कि जब भारतवासी अपने दुःखोंको इंगलैंडके भाइयोंके कानोंमें डालते रहेंगे।

स्मरण होगा कि कांग्रेसके पहले वर्ष अर्थात् १८८५ ई०में ह्यूम साहब इंगलेंड गये थे और वहाँ पर उन्होंने अपने पार्लियामेंटके मित्रों-से सम्मति लेकर इंगलेंडमें कार्य करनेके वास्ते एक तजवीज बनाई थी। अब देखना यह है कि इस ओर क्या कार्य हुआ। प्रथम तो उनको यह आशा थी कि भारतमें ही वाइसराय महोदयसे विनय प्रार्थना करनेसे कुछ सफलता प्राप्त हो जावेगी; परंतु जब वर्षों बीत गये और कांग्रेसकी कोई सुनवाई नहीं हुई, तब उनको निश्चय हो गया, कि अब वाइ-सराय अथवा उनके सहकारियोंसे कोई सुधारकी आशा नहीं है। अब यदि कुछ सुधार होना है, तो इंगलेंडसे ही होना चाहिए। अतएव उन्होंने अपनी चिट्ठीमें, जो १० फरवरी सन् १८८९ ई० को कलकत्ते-से लिखी थी, कांग्रेसके कार्य-कर्त्ताओंसे इस बातकी आवश्य-कता प्रगट की कि इंगलेंडमें पूर्णरूपसे कार्य प्रारम्भ होना चाहिए। उन्होंने इस बातको बतलाया कि भारतवर्षमें तो कांग्रेसको सर्व साधारणकी सम्मति एकत्रित करनेमें पूर्णरूपसे सफलता प्राप्त

हो गई और सभी लोग जो उन्नतिकी इच्छा रखते हैं इस बात पर सहमत होते हैं कि भारतवासियोंके दुःख दूर करनेके लिए अमुक अमुक सुधार होने चाहिए; परंतु यूरोपियन कर्मचारी गण हमारी बातोंको नहीं मानते, और जो कुछ हम कहते हैं, उस पर उनका विश्वास नहीं होता। पर ऐसा होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है और न इसके लिए हम उन्हें दोष लगाते हैं। कारण कि जो सुधार हम चाहते हैं वे सब उनके अधिकारोंको कम करनेवाले हैं। अपना अधिकार कम करना कौन चाहता है! इस बातको दृष्टिमें रखते हुए उन लोगोंका हमारे प्रतिकूल होना कोई अचम्भेकी बात नहीं है। इसमें संदेह नहीं कि हमारे यूरोपियन कर्मचारी गण बड़े ही योग्य पुरुष हैं और कार्यको समझने भी लगे हैं; परंतु इसमें भी संदेह नहीं कि जब तक हम केवल उन्हींसे कहते रहेंगे तब तक हमें उन सुधारोंके चलानेमें सफलता भी नहीं हो सकती, जो न केवल हमारी उन्नतिके लिए, किंतु ब्रिटिश-राज्यकी स्थिरताके लिए आवश्यक है। अब तो हमारी आशा केवल इसीमें है कि ब्रिटिश जातिको अपने दुःख स्पष्ट रूपसे सुनाये जावें और वर्तमान राज्य-पद्धतिमें जो कुछ त्रुटियाँ है वे भी प्रगट कर दी जायँ। जब तक इंगलैंडवासियोंको सारा हाल न सुनाया जायगा, तब तक सफलताकी कोई आशा नहीं हो सकती। जो कुछ हम कर सकते हैं, वह यह है, कि बहुतसा धन एकत्रित करलें कि जिससे सदैव अच्छे अच्छे व्याख्याता इंगलैंड जाकर व्याख्यानों द्वारा अपनी बातोंको इंगलैंडवासियों पर प्रगट करते रहें। लगातार वहाँ पर सभायें होती रहें जिनमें भारतके सच्चे समाचार स्पष्ट रूपसे प्रगट किये जावें। छोटे छोटे ट्रैक्टों, लेखों और पत्रों द्वारा जिस प्रकार बन सके पूर्णरूपसे आंदोलन किया जाय और आंदोलनको उसी प्रकार बराबर जारी रक्खा जाय जिस प्रकार एंटी कार्नेला (Anti-corn law) के समयमें इंगलैंडमें हुआ था। यह

बात ह्यूम साहबने बड़े जोरोंसे लिखी थी। यदि सब लोग उनकी रायसे कार्य करते तो बहुत लाभ होता। उस समय इस बातकी तो कोई आशा नहीं थी कि सरकारी कर्मचारियोंसे, जो लोगोंको सदा दबाने पर तुले रहते थे, कह सुन कर कोई कार्यवाही कराली जाय। वे लोग तो, कुछ सुननेको तैयार नहीं थे; परन्तु दूसरी तरहसे सफलताकी सम्भावना थी। वह दूसरी तरकीब यह थी कि इंगलैंडमें राय (वोट) देनेवालोंसे प्रार्थना की जाय। इंगलैंडमें प्रधानमंत्री (Prime minister) को राय देने-वाले ही चुनते हैं। यदि राय देनेवाले ऐसे महाशयको प्रधान मंत्री चुनें जो भारतके हितकी ओर ध्यान रक्खे तो आशा है कि भारतका सुधार हो जावे। प्रधानमंत्री ही भारत-सचिवको नामजद करते हैं और भारतमें वाइसराय महोदय तथा अन्य समस्त कर्मचारी भारत-सचिवके अधीन हैं। इस प्रकार ऊपर असर डाल कर कार्यवाही हो सकती है; परंतु दुर्भाग्यसे भारतवासियोंने उपर्युक्त युक्ति पर पूर्ण रीतिसे विचार नहीं किया। वर्षों तक वाइसराय इत्यादिसे सुधारके वास्ते सरपच्ची करते रहे, पर इंगलैंडमें कुछ भी उद्योग नहीं किया। इसका परिणाम यह हुआ कि परिश्रम व्यर्थ गया और कुछ भी सुधारकी सूरत नहीं निकली। यदि थोड़ासा भी व्यय और उद्योग करके इंगलैंडवासियोंको अपनी ओर कर लिया जाता तो अवश्य सफलता होती और कुछ भी कष्ट न होता।

इंगलैंडमें कांग्रेसकी कमेटी।

कांग्रेसके संगठनके सम्बंधमें इंगलैंडमें सबसे पहली बात यह हुई थी कि १८८७ ई० में श्रीयुत दादाभाई नौरोजीने, जो उस समय इंगलैंडमें ही रहते थे, अपनेको कांग्रेसका एजंट बननेके वास्ते उपस्थित किया; परंतु उनके पास रुपया नहीं था और वे अपने कामके कारण बहुत थोड़ा समय दे सकते थे। इससे बहुत काम कार्य हुआ; परंतु १८८८ ई०में एक बड़ी उन्नतिका काम हुआ। डबल्यू. सी. बनर्जी तथा अर्डले

नार्टन भी दादाभाई नौरोजीके सहकारी बन गये और मिस्टर चार्ल्स ब्रेडलाको, जो जन साधारणका भारी पक्ष रखते थे, अपनी ओर कर लिया। मिस्टर डबल्यू डिगबी सी. आई. ई. की देख-भालमें एक एजंसी भी कायम की गई और उसमें वैतनिक कर्मचारी रख कर २५ नवम्बरको क्रेवन स्ट्रीट स्ट्रैंड (creven street strand) में दफ्तर खोला गया। ऐसा प्रबंध होने पर इंगलेंडमें जोरोंसे काम होने लगा। तीसरी कांग्रेसकी रिपोर्टकी १००० प्रतियाँ तथा व्याख्यानों और ट्रेक्टोंकी हजारों प्रतियाँ छपाई गईं और वितरण की गईं। मिस्टर बनर्जी और मिस्टर नार्टनने एजंसीके सम्बंधमें कई वक्तृतायें दीं और मिस्टर ब्रेडलाने इंगलेंडके अनेक स्थानोंमें भारतीय विषयों पर व्याख्यान दिये। विज्ञापन, और मकानके किराये वगैरहमें एजेंसीका खर्च तो अवश्य होता था, परंतु व्याख्यान मिस्टर ब्रेडला मुफ्त बिना कुछ लिये दिये देते थे। भारत-हितके अर्थ वे यह सब कष्ट उठाते थे। तो भी सात महीनेमें लगभग २५५००) रु० के खर्च हुए। अतएव सन् १८८९ ई०के वास्ते ३७५००) रु० के खर्चका अनुमान किया गया। ह्यूम साहबने भारतवासियोंसे इस रकमके इकट्ठा करनेके वास्ते प्रार्थना की। अपने पत्रके अंतमें उन्होंने लिखा था कि "पहले तो इस एजंसीके कार्यके चलानेके वास्ते फिर उसके हिसाब इत्यादिकी जॉच करनेके लिए लंदनमें प्रतिष्ठित मनुष्योंकी एक प्रभावशाली कमेटी बनाई जा रही है। इस मामलेमें और ज्यादह बादमें लिखा जावेगा। इस समय मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि सर विलियम वेडरबर्न, दादाभाई नौरोजी और मि० ब्रेडला इस कमेटीमें अवश्य होंगे और हमारे इंगलेंडवासी अन्य मित्रोंमेंसे भी बहुतसे होंगे।

इस तजवीजके अनुसार कार्य प्रारम्भ किया गया और २७ जुलाई सन् १८८९ ई० को उक्त कमेटीका निर्माण किया गया। इस कमेटीमें

सर विलियम वेडरबर्न, दादाभाई नैरोजी, मिस्टर डबल्यू एस. केन, और मिस्टर डबल्यू एस. ब्राइट मैकलेरन थे, और मिस्टर डबल्यू डिगवी मंत्री नियुक्त हुए। पीछेसे जान एलिस, डाक्टर जी. बी. क्लार्क और मिस्टर मार्टन वुड भी शामिल हो गये। इस कमेटीके संगठनकी स्वीकारता सन् १८८९ ई० की कांग्रेसके एक प्रस्तावसे हुई और इसके चलानेके वास्ते ४५०००) की मंजूरी भी हुई और यह निश्चय हुआ कि कांग्रेसकी प्रांतीय कमेटियोंसे हिस्सेरसदीसे वसूल किया जाय। इस कमेटीका नाम कांग्रेसकी ब्रिटिश कमेटी (The British Commitee of the Indian national Congress) रक्खा गया। सितम्बर सन् १८९२ ई० में डिगवी महाशयने मंत्री पदसे इस्तीफा दे दिया और दफ्तर नं० ८४ वा ८५ पैलेस चेम्बर वेस्ट-मिनिस्टर (Palace chamber Westminister) में चला गया। यह जगह बड़ी अच्छी थी। कारण कि पार्लियामेंटके मकान इसके सामने ही थे। कमरे खूब सजा दिये गये थे। दिवारों पर कांग्रेसके योग्य पुरुषोंके चित्र लटका दिये गये थे और एक पुस्तकालय भी था, जिसमें दादाभाई और अन्य मित्रोंने पुस्तकें प्रदान की थीं। यह जगह कांग्रेसके प्रचारके वास्ते बड़ी ही अच्छी थी। ऐसा दस्तूर हो गया था कि जो कोई कांग्रेस-हितेच्छु इंगलैंड जाता था वह आरजी तौरसे कमेटीका मेम्बर बना लिया जाता था। ऐसा करनेसे कमेटीको भारतकी नई नई बातें मालूम होती रहती थीं और कामकी शक्ति भी बढ़ती जाती थी। कारण कि उन महाशयोंकी, जो इस तरह आरजी तौरसे मेम्बर हुए, सूची देखनेसे मालूम होता है कि उन लोगोंके होनेसे कमेटीने अवश्य लाभ उठाया। उस सूचीमें निम्न लिखित महाशय भी थे। सर फीरोजशाह मेहता, मिस्टर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, सुब्रह्मण्य अइयर, मि० मधोलकर, मिस्टर गोखले, मिस्टर डी. इ. वाच्छा, मि० रमेशचन्द्रदत्त, मिस्टर एच. ए. वाडिया, मि. एच. एन. हरीदास, मि०

ए. चौधरी, मि० एम. ए. जिना और मि० भूपेन्द्रनाथ वसु। भारतमें वहुत दिन रहनेके कारण ह्यूम साहब स्वयं वहुत शीघ्र इस कमेटीके सदस्य न बन सके। ६ मई सन् १८९० ई० को पहला मौका उन्हें उस कमेटीमें शामिल होनेका मिला और उसी समय वे कमेटीके मेम्बर हो सके।

मिस्टर डब्ल्यू सी. बनर्जी ब्रिटिश कमेटीमें भी और कांग्रेसमें भी सबसे बढ़े चढ़े थे। उनकी सम्मति विचार पूर्वक होती थी। साथमें ही वे अपार उद्योगी और उदार-चित्त भी थे। उनकी मृत्यु २१ जुलाई सन् १९०६ ई० को हुई। ह्यूम साहबने लिखा है कि वे मेरे एक बड़े अच्छे और सच्चे मित्र थे। उन्होंने उनके कार्यकी इस प्रकार प्रशंसा की है— 'आरंभसे ही बनर्जी महाशय बिना हिच-किचाहटके कांग्रेसमें शामिल थे। वे कांग्रेसके स्थापित करनेवालोंमेंसे थे। १८८५ ई० से लेकर अंत समय तक, इस बातकी कुछ भी परवा न करते हुए कि कांग्रेसकी ओर लोगोंकी दृष्टि अच्छी है या बुरी, वे तन-मन-धनसे कांग्रेसके कार्यमें तत्पर रहे तथा अपने विशुद्ध चरित्र-बल, स्थिति, योग्यता और विस्तृत प्रभावसे कांग्रेसकी शक्तिको बढ़ाते रहे। किसी भी भारतवासीका अपने देशवालों पर इतना प्रभाव नहीं, किंतु सम्पूर्ण भारतमें उनकी धाक बँध रही थी। जिस दिनसे उन्होंने १८८५ ई० में सुधारके कामको हाथमें लिया था, कभी भी उन्होंने अपने समयका, धनका अथवा श्रमका जब कभी और जहाँ कहीं भारतकी उन्नतिके अर्थ आवश्यकता समझी, संकोच नहीं किया।

जैसे जैसे समय बीतता गया, कमेटीके मेम्बरोंमें परिवर्तन होता गया। पुराने कई मेम्बर अलग हो गये; और नये आकर शामिल हो गये। सन् १९०३ ई० में सर हैनरी काटन, के. सी. एस. आई.के शामिल हो जानेसे कमेटीमें अपूर्व बल आ गया। समय समय पर पार्लियामेंटके और भी अनेक सदस्य आते गये। कुछ महाशय ऐसे भी थे

जो कांग्रेसकी कमेटीके वास्ते बहुत कुछ करते थे; परंतु मेम्बर होना इस कारणसे उचित नहीं समझते थे, कि उनका खयाल था कि हम लोग कमेटीसे अलग रह कर भारतके वास्ते पार्लियामेंटमें और अधिक काम कर सकेंगे। .

अब देखना यह है कि ब्रिटिश कमेटीको अपने कार्यमें कहाँ तक सफलता हुई। इस सम्बंधमें यह स्मरण रखना योग्य है कि भारतीय विषयोंके लिए इंगलेंडमें जो सबसे बड़ी कठिनाई है, वह इंडिया ऑफिस (India office) के विरोधकी है। भारत-साचिवकी कौंसिल सदैव रुकावटें डालती रहती है। ह्यूम साहबकी राय थी कि इंडिया ऑफिस भारतीय विषयोंमें सरकारी रायको जनतामें फैलाता रहता है। यदि भारतकी शिकायतोंको दूर करना है, तो पार्लियामेंटमें, तथा व्याख्यानों और लेखों द्वारा आंदोलन किया जाय। इन उपायोंसे हम अपना वास्तिविक हाल इंगलेंडवासियों पर प्रगट कर सकते है। इसी कारण ह्यूम साहब और उनके सहकारियोंने तजवीज की कि एक इंडियन पार्लियामेन्टरी कमेटी (Indian Parliamentary Committee) बनाई जावे। व्याख्यानोंके लिए सर्वत्र देशमें आम सभायें की जायें और लेखोंके लिए इंडिया नामका एक पत्र निकाला जाये। इन तीनों बातोंके विषयमें थोड़ा थोड़ा कह देना आवश्यक है, क्योंकि इंगलेंडमें जो कुछ हुआ वह इन्हींकी बदौलत हुआ।

इंडियन पार्लियामेंटरी कमेटी।

ह्यूम साहबके ५ सितम्बर सन् १८८५ ई० के पत्रके अनुसार कार्य किया गया और सन् १८९३ ई० में इंडियन-पार्लियामेंटरी कमेटी स्थापित की गई। इस कमेटीका मुख्य कार्य यह था कि भारतके लाभका ध्यान रक्खे और यह देखती रहे कि कोई अन्याय तो नहीं होता। इसी

कार्यके लिए शुरूमें जो बातें हुई थीं वे बड़ी ही रोचक हैं। भारत-सुधार-समिति (India Reform Society) के नामसे सन् १८५३ ई० में एक जत्था बनाया। इसके बनानेमें केवल मिस्टर जान डिकंसनने उद्योग किया था। इसका काम यह था कि भारत-हितैषियोंमें मिलकर ठीक रीतिसे काम करनेका उत्साह बढ़ावे। उस समय ईस्ट-इंडिया कम्पनी (East India Company) के पिछले आज्ञापत्रकी अवधि पूरी होनेवाली थी और नया आज्ञापत्र मिलनेवाला था। इस सोसायटीके मेम्बरोंका इस समय यह कर्तव्य था कि पार्लियामेंटको इस बात पर तैयार करें कि दूसरे आज्ञापत्रके देनेसे पहले जो पूछताछ और देखभाल हो वह पूरी तौरसे हो और सच्ची सच्ची हो। जो बातें इस तरहसे इकट्ठी हुई और जान डिकंसनके द्वारा जो मि० ब्राइटको मालूम हुई उनसे ही ब्राइट साहबने भारत पर बड़े बड़े उत्तम व्याख्यान दिये और यह उन्हीं व्याख्यानोंका परिणाम था कि १८५८ ई० में विक्टोरिया महारानीने भारत-शासनको अपने हाथमें लेनेकी जन-साधारणमें घोषणा की और उन्हीं व्याख्यानोंसे लार्ड कैनिंगने भारतके लिए अपनी दयालुता और बुद्धिमत्ताकी नीति बनाई जो विद्रोहके बाद काममें लाई गई। सन् १८८३ ई० में जान ब्राइटने इस बातको स्वीकार किया कि एक भारतीय जत्था बनाया जावे और उसका कर्त्तव्य यह हो कि पार्लियामेंटमें भारतीय कार्योंमें एकता रक्खे। पार्लियामेंटके ८० मेम्बर ऐसे मिल गये कि हम भारतकी ओर न्याय और सहानुभूतिकी दृष्टि रक्खेंगे और यह निश्चय हुआ कि इन मेम्बरोंमेंसे पाँच या छः की एक प्रबंधकारिणी कमेटी बनाई जाय। और इस कमेटीका सभापति बनना मिस्टर ब्राइटने स्वीकार किया। इसी कमेटीका सहारा लेकर मिस्टर जान स्लैगने, जो मेंचस्टरके मेम्बर थे, सन् १८८५ ई० में प्रस्ताव किया कि भारतकी शासन-प्रणालीके सम्बंधमें पार्लियामेंटको पूरी पूरी देख

भाल रखनी चाहिए। सन् १८५८ ई० में भारतीय गवर्नमेंटने जो कानून पास किया था, उसकी तहकीकातके लिए उन्होंने पार्लियामेंटमें प्रश्न भी रक्खा और लार्ड रेंडोल्फ चर्चहिलने उसका समर्थन भी किया; परंतु दुर्भाग्यसे राज्य परिवर्त्तन होनेके कारण वह प्रश्न उठाया नहीं गया और अवसर जाता रहा।

सन् १८८३ ई० की कमेटीमें, जो कुछ समयके लिए निर्जीव हो गई थी, सन् १८९३ ई० में फिरसे जान आ गई। उस समय सर विलियम वेडरवर्न और केन साहबने कई एक मुख्य स्वतंत्र मेम्बरोंको हाउस-आफ कामन्समें भोज्यमें शामिल होनेके वास्ते न्योता दिया कि जिससे भारतीय विषयों पर विचार किया जाय। उस समय वेडरवर्न साहबने थोडासा हाल कहनेके बाद निम्न लिखित प्रस्तावको उपस्थित किया:—

That it is desirable to form an Indian Parliamentary Committee for the purpose of promoting combined and well directed action among these interested in Indian affairs.

अर्थात् भारत-हितैषियोंमें मिल-कर ठीक रीतिसे काम करनेके लिए एक भारतीय पार्लियामेंटरी कमेटी बनाई जावे। इस प्रस्तावका केन साहबने समर्थन किया, मिस्टर जे. ई. एलिसने अनुमोदन किया और सर्व सम्मतिसे यह पास किया गया। मिस्टर जेकब ब्राइटने फिर प्रस्ताव किया कि इस कमेटीके निम्न लिखित महाशय सदस्य बनाये जायें और उनको अधिकार हो कि वे अपनी संख्याको बढ़ा सकें—मिस्टर जेकब ब्राइट, मिस्टर केन, मिस्टर जोन ई. एलिस, डाक्टर डबल्यू ए. हंटर, मिस्टर इलिंगवर्थ, मि० विलफिड लासन, मि० वाल्टर बी. मेकलारेन, मि० स्विफ्ट माकनील, मिस्टर दादाभाई नौरोजी, मिस्टर हर्बर्ट पाल,

सर जोजेफ पीस, मिस्टर जे. हर्बर्ट रोबर्ट्स, मिस्टर आर. टी. रीड, मिस्टर सेमुअल स्मिथ, मिस्टर सी. ई. स्कान, मिस्टर यूगनी वासन, मिस्टर एल्फ्रेड वैब और सर डबल्यू वेडरबर्न।

इस समय भारतकी आर्थिक अवस्था बड़ी ही शोचनीय थी। लार्ड-लेंसडाउनने उसके सम्बंधमें लिखा था कि यदि जैसी हालत है, वही बनी रही, तो सरकारको भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ेगी जिसकी पूर्तिकी कोई आशा नहीं रहेगी, कर देनेवालोंको भारी बोझा उठाना पड़ेगा और देशकी सम्पूर्ण उन्नति रुक जायगी।

ऐसी दशाको देख कर कमेटीने पहली जुलाई सन् १८९४ ई० को एक चिट्ठी मिस्टर हेनरी फाउलरको, जो उस समय भारत-सचिव थे, लिखी। उस चिट्ठीमें बजटकी खूब छान बीन की गई थी। इस विषयमें हाउस-आफ-कामन्समें भी कुछ कार्यवाही हुई और भारतीय बजट पर वाद-विवाद भी हुआ। इन सब बातोंका परिणाम यह हुआ कि श्रीयुत दादाभाई नौरोजीने इस विषयमें देख-भाल होनेका प्रश्न पार्लियामेंटमें रख दिया और उसके प्रभाव या दबावसे फाउलर साहबने तहकीकातके वास्ते वेल्बी-रायल-कमीशन (Welbey Royal Commission) नियत किया।

अगले दस वर्षमें जो पार्लियामेंटके वास्ते नवीन सदस्य चुने गये, उनमेंसे भारतके कई शुभचिंतक अलग हो गये; परंतु अंतमें यह उल्टा प्रभाव बंद होकर सुलभ प्रभाव जारी हो गया। जनवरी सन् १९०६ के चुनावमें टोरी दलका नाश हो गया और अधिकार उन लोगोंके हाथमें आ गया जो सर्वजनोंकी सम्मतिका राज्य चाहते थे। यह समय भारतके वास्ते बड़ा अच्छा था। इंडियन पार्लियामेंटरी कमेटीको फिरसे जीवित किया गया। सर डबल्यू वेडरबर्नके बुलाने पर, २८ फरवरी सन्

१९०६ ई० को पार्लियामेंटके मेम्बरों तथा भारतके अन्य शुभचिंतकोंकी एक मंडली वैस्ट-मिनिस्टर-पैलेस-होटल (West minister palace Hotel) में एकत्रित हुई और बादमें फिरसे इंडियन-पार्लियामेंटरी कमेटीने इस बात पर विचार करनेके लिए—कि किस रीतिसे काम करना चाहिए जिससे नवीन पार्लियामेंटसे भारतवर्ष उचित लाभ उठा सके, एक कांफरेंस हुई । मिस्टर ल्योनार्ड कर्टनी इस कांफरेंसके सभापति थे । उन्होंने कार्य प्रारम्भ किया और अनेक महाशयोंने व्याख्यान दिये । सर्व-सम्मतिसे प्रस्ताव किया गया, तदनुसार कमेटी फिरसे बनाई गई और होते होते २०० के लगभग पार्लियामेंटके मेम्बर इस कमेटीके सदस्य हो गये ।

इंडिया पत्र ।

समाचार पत्रोंके विषयमें भारतके सुधारकोंको याद रखना चाहिए कि इंगलैंडमें किसी भी कार्यमें सफलता नहीं हो सकती जब तक कि किसी पत्र द्वारा उसका आन्दोलन न किया जाय । चाहे जो सुधार हो, सुधारकोंको अपने विचारोंको फैलानेके वास्ते कोई न कोई पत्र अवश्य निकालना पड़ता है और उसमें बहुत कुछ खर्च भी करना पड़ता है । भारत-सम्बन्धी बातोंके वास्ते तो इंगलैंडमें इसकी और भी अधिक आवश्यकता है । इसके तीन कारण है—(१) इंगलैंडवासियोंको भारतवासियोंके दुःखोंका कुछ पता नहीं और यह विषय उनकी प्रकृतिके अनुकूल भी नहीं है । (२) लंदनके समाचार-पत्रोंमें जो भारत-सम्बन्धी लेख निकलते हैं, वे सब अंग्रजोंके होते हैं और उनमें भारतके लाभके प्रतिकूल बातें होती है । (३) पार्लियामेंटके मेम्बरोंको चुननेवाले भारतवासी नहीं हैं । यदि ऐसा होता तो पार्लियामेंटमें उनका कुछ जोर और दबाव भी होता ।

सर जोजेफ पीस, मिस्टर जे. हर्बर्ट रोबर्ट्स, मिस्टर आर. टी. रीड, मिस्टर सेमुअल स्मिथ, मिस्टर सी. ई. स्काम, मिस्टर यूगनी वासन, मिस्टर एल्फ्रेड वैब और सर डबल्यू वेडरबर्न।

इस समय भारतकी आर्थिक अवस्था बड़ी ही शोचनीय थी। लार्ड-लेंसडाउनने उसके सम्बंधमें लिखा था कि यदि जैसी हालत है, वही बनी रही, तो सरकारको भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ेगी जिसकी पूर्तिकी कोई आशा नहीं रहेगी, कर देनेवालोंको भारी बोझा उठाना पड़ेगा और देशकी सम्पूर्ण उन्नति रुक जायगी।

ऐसी दशाको देख कर कमेटीने पहली जुलाई सन् १८९४ ई० को एक चिट्ठी मिस्टर हैनरी फाउलरको, जो उस समय भारत-सचिव थे, लिखी। उस चिट्ठीमें बजटकी खूब छान बीन की गई थी। इस विषयमें हाउस-आफ-कामन्समें भी कुछ कार्यवाही हुई और भारतीय बजट पर वाद-विवाद भी हुआ। इन सब बातोंका परिणाम यह हुआ कि श्रीयुत दादाभाई नौरोजीने इस विषयमें देख-भाल होनेका प्रश्न पार्लियामेंटमें रख दिया और उसके प्रभाव या दबावसे फाउलर साहबने तहकीकातके वास्ते वेल्बी-रायल-कमीशन (Welbey Royal Commission) नियत किया।

अगले दस वर्षमें जो पार्लियामेंटके वास्ते नवीन सदस्य चुने गये, उनमेंसे भारतके कई शुभचिंतक अलग हो गये; परंतु अंतमें यह उल्टा प्रभाव बंद होकर सुलभ प्रभाव जारी हो गया। जनवरी सन् १९०६ के चुनावमें टोरी दलका नाश हो गया और अधिकार उन लोगोंके हाथमें आ गया जो सर्वजनोंकी सम्मतिका राज्य चाहते थे। यह समय भारतके वास्ते बड़ा अच्छा था। इंडियन पार्लियामेंटरी कमेटीको फिरसे जीवित किया गया। सर डबल्यू वेडरबर्नके बुलाने पर, २८ फरवरी सन्

१९०६ ई० को पार्लियामेंटके मेम्बरों तथा भारतके अन्य शुभचिंतकोंकी एक मंडली वैस्ट-मिनिस्टर-पैलेस-होटल (West minister palace Hotel) में एकत्रित हुई और बादमें फिरसे इंडियन-पार्लियामेंटरी कमेटीने इस बात पर विचार करनेके लिए-कि किस रीतिसे काम करना चाहिए जिससे नवीन पार्लियामेंटसे भारतवर्ष उचित लाभ उठा सके, एक कांफरेंस हुई। मिस्टर ल्योनार्ड कर्टनी इस कांफरेंसके सभापति थे। उन्होंने कार्य प्रारम्भ किया और अनेक महाशयोंने व्याख्यान दिये। सर्व-सम्मतिसे प्रस्ताव किया गया, तदनुसार कमेटी फिरसे बनाई गई और होते होते २०० के लगभग पार्लियामेंटके मेम्बर इस कमेटीके सदस्य हो गये।

इंडिया पत्र।

समाचार पत्रोंके विषयमें भारतके सुधारकोंको याद रखना चाहिए कि इंगलेंडमें किसी भी कार्यमें सफलता नहीं हो सकती जब तक कि किसी पत्र द्वारा उसका आन्दोलन न किया जाय। चाहे जो सुधार हो, सुधारकोंको अपने विचारोंको फैलानेके वास्ते कोई न कोई पत्र अवश्य निकालना पड़ता है और उसमें बहुत कुछ खर्च भी करना पड़ता है। भारत-सम्बन्धी बातोंके वास्ते तो इंगलेंडमें इसकी और भी अधिक आवश्यकता है। इसके तीन कारण हैं-(१) इंगलेंडवासियोंको भारतवासियोंके दुःखोंका कुछ पता नहीं और यह विषय उनकी प्रकृतिके अनुकूल भी नहीं है। (२) लंदनके समाचार-पत्रोंमें जो भारत-सम्बधी लेख निकलते हैं, वे सब अंग्रेजोंके होते हैं और उनमें भारतके लाभके प्रतिकूल बातें होती हैं। (३) पार्लियामेंटके मेम्बरोंको चुननेवाले भारतवासी नहीं हैं। यदि ऐसा होता तो पार्लियामेंटमें उनका कुछ जोर और दबाव भी होता।

यदि इंगलैंडमें भारतका किसी समाचार-पत्रसे सम्बंध नहीं और भारतका कोई स्वतंत्र पत्र भी न हो, तो समझना चाहिए कि भारत अपनी व्यवस्था ब्रिटिश जाति और ब्रिटिश पार्लियामेंटको नहीं सुनाना चाहता। इसी सिद्धांतके अनुसार सन् १८९० ई० में ब्रिटिश कमेटीने इंडिया (India) नामक एक पत्र निकालना प्रारम्भ किया कि जिससे अंग्रेज लोगोंको भारतके समाचार वास्तविक रूपसे मालूम हों। पहले तो यह पत्र कभी कभी निकलता था; परंतु १८९२ ई० से प्रतिमास निकलने लगा और ७ जनवरी सन् १८९८ से साप्ताहिक हो गया।

भारतकी विकालत करनेके आतिरिक्त इस पत्रका एक उद्देश्य यह भी था कि ब्रिटिश जातिको भारतकी सच्ची सच्ची खबरें पहुँचाई जायँ। पार्लियामेंटवाले, समाचार-पत्रोंवाले तथा व्याख्यान देनेवाले, सदा कमेटीसे प्रार्थना करते रहते थे कि सच्ची खबरें आनी चाहिए। उसकी पूर्ति करनेके वास्ते यह आवश्यक था कि भारत-सम्बंधी समस्त बातोंका संग्रह किया जाये। इस प्रकारकी सामग्री इंडिया पत्रमें रहती थी। इसमें वह गोला-बारूद मौजूद था जिससे जो कोई चाहे, भारतके वास्ते लड़ सकता था।

पत्रके एक मुख्य लेखनने, जो कांग्रेसके विरुद्ध सम्मति रखनेवाला था, इंडियाके विषयमें लिखा है कि चाहे पत्रके पढ़नेवाले अधिक न हों, परंतु यह लंदनके पत्रोंको भारतके समाचार पहुँचानेका बड़ा भारी द्वार है।

पत्रके जारी करनेमें धनके अभावसे बड़ी रुकावट पड़ती है। चाहे नैतिक सुधारके पत्र हों, चाहे सामाजिक सुधारके, सब धनसे चलते हैं। यह मानी हुई बात है कि इंडियाका कार्य इस प्रकारका था; कि उसमें आर्थिक लाभ कदापि नहीं हो सकता था; क्योंकि इंगलैंडवालों-

का स्वार्थ उसमें कुछ भी नहीं था। इस संसारमें ऐसा देखा जाता है कि मिठाई बेचनेवालेकी सब कदर करते हैं; परन्तु बेचारे कड़वी दवा बेचनेवाले डाक्टरके कोई पास भी नहीं फटकता। खास कर भारतीय कांग्रेसके साथ तो इंगलैंडमें वही व्यवहार था जो कड़वी दवावाले डाक्टरके साथ। यदि कोई आशा सफलता की थी, तो इसमें थी।, ब्रिटिश जातिको भारतीय दुःखोंकी ओर आकर्षित किया जाय और यह काम ब्रिटिश कमेटीका था। जब यह दशा थी, तो आवश्यकता इस बात की थी, कि नैतिक प्रभाव फैलानेके वास्ते कुछ उठा न रक्खा जावे। इसी लिए कमेटी प्रति सप्ताह पार्लियामेंटके मेम्बरोंको, समाचार-पत्रवालों को राजनीतिक संस्थाओंको, सभाओं और पुस्तकालयोंको, इंडिया-पत्र बिना मूल्य भेजती रही, जिससे इंगलैंडको भारतकी आवश्यकता और उसके दुःखोंका हाल मालूम होता; परंतु धनके अभावसे इस काममें बड़ी कठिनाई हुई। बड़ी किफायत की गई और बहुतसा काम रोक भी दिया गया। धनके भरोसे तो मिस्टर गोर्डन हेवर्ट और मिस्टर एच ई. ए. काटन जैसे सम्पादक कदापि नहीं मिल सकते थे; परंतु इन महानुभावोंने इस कार्यसे हार्दिक सहानुभूति होनेके कारण अवैतनिक काम किया। यह काम (पत्रका चलाना) बड़ा आवश्यक है। इसके वास्ते उत्तम प्रबंध करना कांग्रेसका मुख्य कर्तव्य है। स्थायी आमदनीका ऐसा प्रबंध अवश्य होना चाहिए कि जिससे इंगलैंडमे ठीक ठीक काम चल सके। धन संचय करनेके अतिरिक्त इस बातकी भी आवश्यकता है कि भारतसे बड़े बड़े कांग्रेसके अनुयायी स्वयं इंगलैंडमें जावें और अपने विचारोंको प्रगट करें।

आम सभायें, व्याख्यान और भेंटें।

अब विचार यह करना है कि व्याख्यानों द्वारा क्या हो सकता है और स्वयं मिलनेसे क्या प्रभाव पड़ सकता है। गत वर्षोंमें इंगलैंडमें

भारतवर्षके हितके वास्ते सभायें की गई, व्याख्यान भी हुए, मंत्रियों, पार्लियामेंटके मेम्बरों, सम्पादकों और अन्य प्रसिद्ध पुरुषोंसे मिला भी गया। इस काममें सबसे अच्छा फल उस समय हुआ जब सर फीरोजशाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, गोपालकृष्ण गोखले तथा भूपेन्द्रनाथ बसु जैसे महानुभाव इंगलैंडवासियोंको अपने देशकी वास्तविक दशा सुनानेके लिए आये। श्रीयुत गोखलेने सन् १९०५ और १९०६ ई० में जो उद्योग किया था, उसका संक्षिप्त परिचय देना आवश्यक है, क्योंकि उससे यह विदित हो जावेगा कि यह कार्य किस प्रकारका था। सन्१९०५ ई० में यह आशा की जाती थी कि भारतसे चार प्रतिनिधि आवेंगे और ब्रिटिश कमेटीने मुख्य मुख्य स्थानों पर ५० व्याख्यानोंका प्रबंध कर रक्खा था, परंतु केवल दो महाशय पहुँच सके। एक तो मिस्टर गोखले और दूसरे लाला लजपतराय। लाला लजपतरायका भी बहुतसा समय अमेरिकामें व्यतीत हो गया। हाँ, मिस्टर गोखलेको यार्कशायर और लेंकशायरमें बड़ी सफलता हुई। लेंकशायरमें उनका आगमन बहुत ही उचित समय पर हुआ। सर चार्ल्स श्वेन और मिस्टर सेमुएस्मिथकी सहायतासे उन्होंने बंग-भंग और मेंचेस्टरके पदार्थोंके बहिष्कार पर व्याख्यान दिये। मेंचेस्टरमें उन्होंने चार बड़ी बड़ी सभामें व्याख्यान दिये। उनमेंसे प्रत्येक सभामें उन्होंने भिन्न भिन्न व्याख्यान दिये और प्रत्येकमें श्रोतागणोंकी आवश्यकताओंके अनुकूल बातें कहीं। ब्रिटिश कमेटीके सभापति स्वयं इस बातकी साक्षी दे सकते हैं कि गोखले महाशयके व्याख्यानोंका उनकी सत्यता और युक्तियोंके कारण श्रोतागण पर बड़ा ही उत्तम प्रभाव पड़ा। लंदनमें भी उनके व्याख्यानोंको सुननेके वास्ते अच्छी अच्छी सभायें हुई और केम्ब्रिजमें युनियन (Union) के अंडर ग्रेज्युएटों (Undergraduate) ने उनका बड़े आदर सत्कारसे स्वागत किया। इस सभामें उन्होंने भारतमें अधिकतर सार्वजनिक संस्थाओं-

के होनेका प्रस्ताव किया और उस प्रस्तावके १६१ व्यक्ति अनुकूल और ६२ व्यक्ति प्रतिकूल थे।

फेबियन सोसायटी (The fabian Society) में भी इनका व्याख्यान सुननेके वास्ते खास सभा की। इस समय कंजरवेटिव गवर्नमेंट (Conservative Government) का जोर था और लार्ड कर्जनको उसकी पालिसीमें उसने सहायता दी, इस लिए गोखले महाशयका इस समय मुख्य कर्त्तव्य यह था कि व्याख्यानों और लेखों द्वारा वे इंगलैंडवासियोंको चेतावें। सन् १९०६ ई० में बनारसकी कांग्रेसमें सभापतिका कार्य समाप्त करनेके पश्चात् मिस्टर गोखले कांग्रेसके फिर प्रतिनिधि होकर इंगलैंड गये; परंतु इंगलैंडकी स्थितिमें अब बहुत कुछ परिवर्तन हो गया था। भारत-हितैषियोंका अब जोर बढ़ गया था। इस कारणसे व्याख्यान वगैरह तो दूसरे नम्बरकी बात हो गई। अब तो प्रारम्भिक बात यह रही कि राज्यमंत्रियों और पार्लियामेंटके मेम्बरोंसे मिला जाय और उनसे सब वृत्तान्त कहा जाय, कारण कि उन्हीं पर भारतका भविष्य निर्भर है। इस लिए मिस्टर गोखलेने केवल कमेटीमें व्याख्यान ही नहीं दिये; किंतु उन्होंने स्वयं जाकर लगभग १५० पार्लियामेंटके मेम्बरोंसे भेंट की और उनसे भारतीय विषयोंमें सहानुभूति रखनेका वचन लिया। राज्य-मंत्रियोंसे जो मिस्टर गोखलेकी मुलाकातें हुई उनमें सबसे महत्त्वकी भेंट मिस्टर मारलेसे हुई। मिस्टर गोखलेने इन नये भारत-साचिवको भारतवासियोंकी सब इच्छायें, आशायें और आवश्यकतायें भली भाँति समझा दीं। मिस्टर एलिस, जो उपभारत-साचिव थे, स्वयं कमेटीके मेम्बर थे। उन्होंने गोखले महाशयकी बड़ी आवभगत की और उनको भोज्यमें भी निमंत्रित किया। और उन्होंने तथा अन्य पार्लियामेंटके मेम्बरोंने उनसे खासी सहानुभूति प्रगट की। अंतमें मिस्टर गोखलेने इंगलैंडके प्रधान मंत्री सर हेनरी केम्बलबेनरमेनसे भेंट की और उन्होंने इनकी बातोंको बड़े प्रेमसे सुना।

कार्यमें सहायता।

इंगलैंडमें काम करनेकी जो तीन रीतियाँ विशेष रूपसे ऊपर बतलाई गई हैं, उसका खास अभिप्राय यह है कि भारतवासियोंको भारतीय हितकी भयानक अवस्था तथा इंगलैंडमें भारतीय कार्योंके लिए उचित प्रबंधकी आवश्यकताका पता लग सके। वर्तमानमें इंगलैंडमें उन्हीं लोगोंका जोर है जो उन्नतिके इच्छुक हैं। अतएव कुछ समय तक भारतके विरुद्ध कुछ नहीं हो सकेगा। पूर्णरूपसे शांति रहेगी; परंतु कौन कह सकता है कि यह शांति कब तक रहेगी। कोई भी व्यक्ति यह नहीं समझ सकता कि विरोधी दलका अंत हो गया है। यदि कुछ समयके लिए वह चुपचाप है, तो इससे यह कदापि नहीं समझ लेना चाहिए कि वह है ही नहीं। स्वयं इंगलैंडके तथा विदेशीके मामलोंमें पेच पड़ जानेसे मंत्रियोंकी अवस्था शोचनीय रहती है। कुछ न कुछ समयके बाद अवश्य परिवर्तन होता है और वर्तमान अवस्थामें जब परिवर्तन होगा तब अवश्य अधिकार विरोधी पार्टीके हाथमें आजावेगा।

भारतवासियोंको याद होगा कि पहले विरोधी पार्टीने क्या क्या किया था। क्या यह उचित है कि भारतवासी चुपचाप बैठे हुए फिर वैसे ही समयके आनेका इन्तजार करते रहें और वैसी ही बातें फिर सहें। भारतवासियोंको इस समय इस बातके समझने और याद रखनेकी आवश्यकता है कि जैसे जैसे नियम और व्यवस्था ब्रिटिश राज्यकी है उससे तो भारतका कदापि कल्याण नहीं हो सकता। भारतका लाभ यदि कुछ हुआ है तो वह इंगलैंडमें अथवा बाहर लोगोंके अविश्रांत उद्योग करनेसे ही हुआ है और वह उद्योग उसी ढंगसे हुआ है जैसा ह्यूम साहबने बतलाया है। जो कुछ थोड़ा बहुत हुआ है वह इंगलैंडवासियोंकी सहायतासे तथा सुधारकोंके उद्योगसे हुआ है। भारतीय गवर्नमेंटके नेताओंसे कुछ नहीं हुआ है। वे तो सदा

रुकावट डालते रहते हैं। केवल सुधारोंको ही नहीं रोकते किंतु पुराने दिये हुए स्वत्त्वोंको भी छीन लेनेको तैयार रहते हैं और जब उन्हें मौका मिलता है, छीन लेते है। पत्रोंकी स्वतंत्रता, आम सभाओंके करनेके अधिकार, म्यूनिसिपालिटीका स्वराज्य और विश्वविद्यालयोंकी स्वतंत्रता ये सब इसी तरह छीन ली गई है। इन रुकावटोंके कारण लार्ड लिटनके समयमें भारतमें गदर कैसे चिन्ह पैदा हो गये थे। ठीक उसी समय ह्यूम तथा उनके भारतवासी सलाहकार बीच बचावेके लिए तैयार हो गये थे। इन लोगोंके पृथक् उद्योगसे राजा और प्रजाके बीचका अंतर कांग्रेसके बन जानेसे बहुत कम रह गया। यद्यपि कांग्रेसने ७ वर्ष तक लार्ड कर्जनके समयमें बड़ी बड़ी मुसीबतें उठाई; परंतु उनसे लार्ड मारलेके १९०९ के सुधार और १९११ के शाही फरमान (Royal Declaration) के वास्ते रास्ता भी साफ हो गया। प्रत्येक विचारशील भारतवासीको सोचना चाहिए कि यदि भारतमें कांग्रेसका रोकनेवाला प्रभाव न होता और यदि भारतके दुःखों और आवश्यकीय सुधारोंका हाल इंगलेंडके जिम्मेवार राजनीतिकोंके सामने पेश न किया जाता तो न जाने लोगोंकी निराशासे क्या क्या भयकी बातें पैदा हो जातीं। पिछली हालतसे अगली हालतको जानना चाहिए। भारतवासियोंको याद रखना चाहिए कि यदि उद्योगमें ढील डाल दी गई और इंगलेंडमें २५ वर्षके अविश्रांत श्रमसे जो ढाँचा बनाया है, उसको बिगाड़ दिया गया, तो फिर आपत्ति आवेगी।

स्मारक।

हमें यह मालूम करके बड़ी खुशी हुई है कि भारतके भिन्न भिन्न मार्गोंके बड़े बड़े आदमी ह्यूम साहबकी यादगारमें कुछ बनाना चाहते हैं। उचित यह मालूम होता है कि इस बातका आरम्भ संयुक्त प्रदेशसे किया जाये। कारण कि इस प्रांतमें ही ह्यूम साहबने वर्षों कार्य किया है

और यहाँके लोगोंका उनसे अधिक परिचय और प्रेम है। यह स्मारक किस प्रकारका होना चाहिए, इसके विषयमें हम पाठकोंको ह्यूम साहब-की उस चिट्ठीकी याद दिलाते हैं जो उन्होंने १६ फरवरी सन् १८९२ ई० को पंडित अयोध्यानाथके स्मारकके विषयमें कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंको लिखी थी। यह बात किसीसे अप्रगट नहीं है कि ह्यूम साहब पंडित अयोध्यानाथसे अधिक और किसीसे प्रेम नहीं रखते थे; परंतु पंडित-जीके लिए भी उन्होंने अपनी चिट्ठीमें लिखा था कि "ईश्वरके वास्ते स्मारकोंमें अथवा और छोटी छोटी बातोंमें रुपया खराब मत करो। यदि एक पैसा भी दे सकते हो तो काममें लगाओ।" जिस कामके लिए वे रुपया माँगते थे वह इंगलैंडमें कांग्रेसका काम था। उन्होंने लिखा था कि हमारी आशा केवल इस बातमें है कि हमारे दुःखोंका पूरा पूरा हाल इंगलैंडवासियोंको मालूम हो जावे। इस बातके देखते हुए ह्यूम साहबके स्मारकके विषयमें हमारा प्रस्ताव यह है कि ह्यूम साहबकी सबसे अधिक इच्छा यह थी कि भारत स्वाधीन हो जावे और उनको विश्वास था कि यह बात तभी संभव है कि जब ब्रिटिश जातिसे बार बार अपील की जावे। अतः भारतके सच्चे मित्रका सर्वोत्तम स्मारक यही होगा कि एलन ह्यूम स्मारक फंड (Allan Hume memorial Fund) खोला जावे और उसका उद्देश यह हो कि ह्यूम साहबके कामको स्थायी बनाया जावे और उनकी प्रियतम इच्छाओं और आशाओंको नष्ट होनेसे बचा-या जाय।

भारतसे विदा।

सन् १८९४ ई० में ह्यूम साहब भारतसे विदा हुए और उसी वर्षके मार्च महीनेकी १८ तारीखको बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसियेशन (Bombay Presidency Association) ने प्रेम और कृतज्ञता सूचक अभि-नंदन पत्र उनको भेंट किया। अभिनंदन पत्र पर एसोसियेशनके

सभापति फीरोजशाह मेहता, तथा दिनशा एडलजी वाच्छा, एन. जी. चंदावरकर और ए. एम. धर्मसी अवैतनिक मंत्रियोंके हस्ताक्षर थे। इसका उत्तर देते हुए ह्यूम साहबने यह बतलाया था कि भारत पर जगत्की राजनीतिका क्या प्रभाव पड़ेगा। उस समय प्रत्येक देशमें इस बातका जोर बढ़ता जाता था कि जबरदस्ती और उपद्रवसे सब कुछ मिल सकता है। उनका बिचार था कि इंगलेंडमें भारतवासियोंका जोर बढ़ जावेगा और इस बातकी सम्भावना है कि यूरोपमें कोई महान युद्ध हो जिसका परिणाम बहुत ही भयंकर होगा और उसके परिणाम चिन्ह दिखलाई पड़ते थे। ह्यूम साहबने श्रोतागणको साहस रखने और दृढ़ रहनेके लिए उत्तेजित किया। उन्होंने कहा कि ऐ भारतवासियो, उस सिद्धांत पर दृढ़ रहो जिसे दुनियाँके समस्त विद्वान् मानते हैं। वह सिद्धांत यह है कि अंतमें सत्यकी जय होती है। यदि कोई जाति इच्छानुसार प्राप्त करना चाहे तो उसे चाहिए कि पहले अपनेको पूर्णतया योग्य बनाले। उन्नतिके मार्गमें विघ्न भी चाहे आवें और अवश्य आते है और वर्षों तक चाहे सफलता बिल्कुल भी न हो, तथापि लगातार अश्रान्त उद्योग किये जाओ और अच्छे समयके लिए तैयारी करते रहो। अवश्य एक दिन आयेगा कि जब भारतवासियोंको उनके श्रमका शुभ फल मिलेगा। किसी विघ्न-बाधासे हतोत्साह न होना चाहिए। समयका प्रभाव तुम्हारा सहायक है और तुम्हारी अवश्य विजय होगी। वर्तमान दशाके प्रतिकूल होनेके कारण चाहे उन्नति कितनी ही असंभव दीख पड़े; परन्तु तुम्हें उचित है कि वीरतासे काममें लगे रहो, बराबर उद्योग किये जाओ, कदापि डोर ढीली न छोड़ो। इस प्रकार करते करते तुममें अविश्रांत श्रम करनेका अभ्यास हो जायगा। इसका होना आवश्यक है और इसीका भारतीय जातिमें अभाव है। आप लोग कुछ समय तक तो एक कामको बड़े जोर शोरसे करते है; परंतु शांतिसे अधिक समय तक किसी कामको करना

और लगातार उद्योग किये जाना प्रायः भारतवासियोंकी शक्तिसे बाहर है। राजनीतिक सफलताके वास्ते इसीकी आवश्यकता है कि शांति पूर्वक अधिक समय तक लगातार उद्योग किया जावे। यदि इन छोटी छोटी विघ्न-बाधाओंसे भारतवासियोंमें यह गुण उत्पन्न हो जाय तो समझना चाहिए कि ये बुरी नहीं हैं; किंतु गुप्तरूपमें लाभदायक हैं। ह्यूम साहबने भारतवासियोंको यह भी उपदेश दिया कि यदि अभाग्यसे यूरोपमें महाभारत हो जावे तो भारतवासियोंको उचित है कि एक होकर बिना किसी सोच विचारके ब्रिटिश जातिकी सहायता करें। यद्यपि इस जातिमें अनेक दूषण हैं तथापि यह सभ्य और शिष्ट जाति है। जो कुछ तुमने प्राप्त किया है वह सब इसीके प्रतापसे किया है। अतएव यह उचित है कि ऐसे युद्धके समयमें एक होकर ब्रिटिश टापूकी रक्षा करो जो स्वतंत्रताका केन्द्र है। सरल शब्दोंमें यह कहना चाहिए कि यूरोपका युद्ध भारतके वास्ते बड़ा अच्छा अवसर होगा। उस समय यह सिद्ध हो सकेगा कि यदि शांतिके समय भारत समान स्वत्वोंके लिए पुकारता रहता है तो युद्धके समय भी वह बराबर युद्धका भार और हानि उठानेके लिए तैयार है।

इस जबरदस्त अपीलके बाद, जिसकी लोगोंने बड़ी प्रशंसा की, ह्यूम साहबने राजनीतिसे सामाजिक सुधारकी ओर लोगोंके चित्तको आकर्षित किया और इस बातकी आवश्यकता बतलाई कि यदि भारतवासी सुखी और स्वतंत्र होना चाहते हैं तो उन्हें चाहिए कि अपनी शारीरिक मानसिक और नैतिक अवस्थाको सुधारें।

इसके अनंतर ह्यूम साहबने पहले तो बड़ी वीरताके साथ राज्यके कर्मचारियोंको फटकारा पश्चात् भारतवासियोंको उन दोषोंसे बचे रहनेका उपदेश दिया कि जिनमें वे प्रायः पड़ जाया करते हैं। उन्होंने इस बातके कहनेमें अपने लिए उतना ही धर्म समझा जितना कि एक पिता जो

अपने प्यारे बच्चोंसे सदैवके लिए जुदा होते समय कहना समझता है। उन्होंने कहा कि "मैं अब बूढ़ा हो गया हूँ। मेरे जीवनका अधिकांश भारतमें ही व्यतीत हुआ है। मैं भारतके विषयमें बहुत कुछ जानता हूँ। इतना होते हुए भी मैं यह नहीं कहता कि मेरी बात बिना सोचे समझे मान लो। मैं जो तुम्हें हृदयसे प्यार करता हूँ केवल उतना ही कहता हूँ जितना कि तुम्हारी अंतिम सफलताके लिए आवश्यक समझता हूँ। पहले तो तुम्हें अपने विवाह-शादियोंके नियमोंमें सुधार करना चाहिए। बाल्य-विवाहको सर्वथा बंद कर देना चाहिए। ऐसे विवाहोंसे जातिमें निर्बलता आ जाती है। स्वस्थ मनके लिए स्वस्थ शरीर होना चाहिए। जातीय उत्थानके लिए इसकी अत्यंत आवश्यकता है। इसीसे भारत-संतान जीवित रह सकती है और बलवान बन सकती है। तुम्हें भारतके समस्त बालक, बालिकाओंको शिक्षा देनी चाहिए। वर्तमानमें तुम्हारे सामने इससे बढ़ कर कोई दूसरा काम नहीं है कि तुम भारतकी स्त्रियोंको फिर उसी उच्चासन पर पहुँचा दो जिस पर कि प्राचीन कालमें, जब भारत उन्नतिके शिखर पर था और उसका गुण-गौरव बढ़ रहा था, तुम्हारे पूर्वजोंने उनको प्रतिष्ठित कर रक्खा था।" अंतमें उन्होंने बड़े दुःखके साथ दो बुराइयाँ बतलाईं जो भारतमें फैली हुई हैं। एक तो यह कि जो शब्द मुखसे निकलते हैं उनका पूरा पूरा विचार नहीं रक्खा जाता अर्थात् इस बातका स्मरण नहीं रहता कि 'प्राण जाहिं पर बचन न जाई।' दूसरी बात यह है कि काम करनेवालोंमें ईर्ष्या पाई जाती है। ये बातें ऐसी हैं कि इनसे सामाजिक कार्यके लिए एकत्रित होनेमें बड़ी रुकावट होती है। इन दोनों बुराइयोंके विषयमें जो कुछ ह्यूम साहबने उस समय कहा था वह पूरा पढ़ने योग्य है। बुराइयाँ इतनी अधिक तो बढ़ी हुई नहीं हैं, परंतु ह्यूम साहबने इनके विषयमें अधिक बलसे इस कारण कहा था कि ये उन्नतिमें रुकावट डालनेवाली हैं और इनका निकल जाना ही अच्छा है। जिस प्रकार कोई पिता अपने पुत्रके दोष दूर करनेकी इच्छासे उसे समझाता है, ठीक

उसी प्रकार ह्यूम साहबने भारतवासियोंसे कहा था। वे सचमुच भारत-वासियोंसे पितावत् प्रेम रखते हैं।

समाज-सुधार।

जो दोष ह्यूम साहबको भारतवासियोंमें मालूम हुए उनको उन्होंने भली भाँति बतलाया और साथमें देशोन्नतिके लिए जिन बातोंकी आवश्यकता थी, उनको भी उन्होंने अपनी दृष्टिके सामने रक्खा। वे जानते थे कि भारतवर्षमें जो प्रथायें प्रचलित हैं उनकी जड़ यहाँकी प्राचीन सभ्यतामें है। हाँ, यह बात अवश्य है कि विदेशी लोगोंके आनेसे उनमें कुछ अंतर पड़ गया है। इन सब बातोंको ध्यानमें रखते हुए जिन बातोंकी अवश्यकता भारतकी उन्नतिके वास्ते थी, वे ह्यूम साहबकी दृष्टिमें थीं। उनका विचार था कि धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, आर्थिक किसी भी प्रकारका सुधार करना भारतकी उन्नतिका एक अंग है। सफलताके लिए इस बातकी जरूरत है कि समस्त सुधारक चाहे उनके उद्देश्य और कार्य भिन्न भिन्न हों, वर्तमान दशाको ध्यानमें रखते हुए ठीक ठीक रीतिसे मिल कर काम करें। उन्होंने अपने ये विचार एक पत्रमें प्रगट किये थे कि जो १ फरवरी सन् १८८५ ई० के इंडियन स्पेक्टेटर '(Indian Spectator)' नामी समाचार-पत्रमें निकला था। यह पत्र श्रीयुत बेहरामजी एम. मलाबारीको लिखा गया था। और इसका विषय बाल-विवाह और बलात्कार वैधव्य था। इसमें उन्होंने जातीय उन्नतिके उपाय बतलाये थे। इस विषयमें उनके कैसे विचार थे और वे किस रीति पर कार्य करना पसंद करते थे, ये सब बातें इस पत्रसे भली भाँति विदित होती हैं। ह्यूम साहबने एक पत्र मलाबारी महाशयको और लिखा था। वह पत्र उस समयका है जब कि लार्ड डफरिनने श्रीयुत मलाबारीकी सामाजिक सुधारके अर्थ कानून बनाये जानेकी प्रार्थना पर प्रस्ताव पास किया था। उसमें उन्होंने बतलाया है

कि लार्ड डफरिनने इस प्रकारका कानून बनानेके वास्ते जो एतराज किये हैं वे सर्वथा बेजा नहीं हैं। जब तक वाइसराय महोदयके सलाहकार केवल यूरोपियन महाशय हैं, तब तक सरकार चाहे कितनी ही सहानुभूति रक्खे, समाजके पेचदार विषयोंके सम्बंधमें कोई कानून पास नहीं हो सकता। न तो यह बात जातिके वास्ते लाभदायक है और न राज्यके लिए ही, कि भारतवासियोंके गृह-संबंधी अंतरंग विषयोंको भी विदेशी लोग तय किया करें; परंतु जिस समय कोंसिलमें भारतवासियोंकी संख्या अच्छी हो जावेगी उस समय इस प्रकारके प्रश्न भली भाँति विचारें जा सकेंगे, कारण कि उस समय बात ही और हो जावेगी। अब लार्ड मारलेके सुधारोंसे इन बातोंके लिए अच्छा रास्ता खुल गया है और अब कौंसिलमें भी भारतवासी कई एक हो गये हैं। स्वतंत्र सदस्योंने इस विषयमें उद्योग करना भी आरंभ कर दिया है। स्वर्गीय गोखले महोदयके आवश्यक और बिना मूल्य प्रारम्भिक शिक्षाके प्रस्तावका समर्थन करके उन्होंने जमीनको तैयार कर दिया है जिसमें अच्छा बीज बोया जा सकता है। इस प्रस्तावके विरोधका जो कारण बतलाया गया है वह सर्वथा बे-बुनियाद है। कहा गया है कि सर्व-साधारण इसको पसंद नहीं करेंगे। यह बात सर्वथा मिथ्या है। गोखले महाशयके प्रस्तावके विरोधमें किसीने जिह्वा भी नहीं उठाई; किंतु समस्त समाचार-पत्र एक स्वरसे यही पुकारते रहे कि यह बिल पास हो जाना चाहिए। देशके प्रत्येक भागमें इसके पक्षमें सभायें हुई। बड़े आश्चर्यकी बात है कि इस बिलके विरोधमें किसीने चूँ भी नहीं की और इसे इस कारण हटा दिया गया कि लोग इसको नहीं चाहते। इससे यह विदित होता है कि बड़े बड़े गवर्नर, लेफ्टिनेंट गवर्नर, जिनकी इन विषयोंमें सम्मति ली जाती है, कैसी समझके है। एक ओर तो उनकी रिपोर्ट यह होती है कि हम सर्व-साधारणके हृदयका हाल सर्व-साधारणसे अधिक जानते

हैं, दूसरी ओर उन्हें सम्राट पंचम जार्जकी हार्दिक इच्छासे तनिक भी सहानुभूति नहीं होती। सम्राटने स्वयं अपने मुखारविंदसे कहा था कि मैं चाहता हूँ कि भारतमें स्कूलों और कालेजोंका एक जालसा पुर जावे। गोखले महाशयका बिल ऐसा था कि यदि वह पास हो जाता तो भारतवर्षकी अज्ञानता दूर हो जाती और सामाजिक सुधारकी जड़ दृढ़ हो जाती; परंतु वाइसराय महोदयकी कौंसिलके राज्य-कर्मचारियोंने उसका पटड़ा कर डाला जिससे सामाजिक सुधारके काममें बड़ा भारी धक्का लग गया।

ह्यूम साहबमें समयानुकूल हो जानेकी विलक्षण शक्ति थी। स्मरण होगा कि जातीय उन्नतिके लिए उनका शुरूमें यह विचार था कि सामाजिक सुधारको पहले हाथमें लिया जावे; परंतु उन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धिसे इस बातको मालूम कर लिया था कि इस देशमें सामाजिक सुधारका कानून तभी बन सकता है जब कि कौंसिलमें भारतवासियोंकी अधिकता हो जाये। इस कारणसे उन्होंने पहले राजनीतिक सुधारोंको हाथमें लिया था। और घटनाओंसे भी यही ठीक साबित हुआ। यद्यपि गोखले महाशयका बिल पास नहीं हुआ; परंतु युक्तियाँ उसीके पक्षमें थीं और जो जोश उसके वाद-विवादमें हुआ वह भी आगामी उन्नतिके वास्ते बड़ा उपयोगी है।

विलायतमें।

ह्यूम साहबने भारतसे अंतिम विदा लेकर लंदनसे कुछ मीलकी दूरी पर अपने रहनेके लिए एक छोटासा घर बनाया और वहाँसे उन्होंने भारतीय मित्रोंसे पत्र व्यवहार करना और ब्रिटिश कमेटीके कामका निरीक्षण करना जारी रक्खा। इनके अतिरिक्त यहाँ रहते हुए उन्होंने डलविच प्रदेशके सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलनमें भी पूर्ण रूपसे योग लेना शुरू कर दिया। ह्यूम साहब उदार (Liberal) दलके अनु-

यायी थे। उनका सिद्धांत था कि लोगों पर विश्वास करो। लोगोंके पक्षका समर्थन करो। वे सच्चे सुधारक थे और उनको इस बातका दृढ़ श्रद्धान था कि जो कुछ धन, समय और शक्ति हमारे पास है वह सब अपने भाइयोंके लिए है। देश-हितके लिए ही ये चीजें हमें मिली हैं, अतएव देश-हितमें ही इन्हें लगा देना चाहिए। इसीसे लोग उनको अपना नेता और पथ-प्रदर्शक मानने लगे थे। सन् १८९१ ई० में वे डलविच सुधारक-सभाके सभापति और डलविच और पेंजकी लिबरल और रेडीकल एसोसियेशनके उपसभापति तथा कार्यकारिणी-सभाके सदस्य निर्वाचित किये गये। सन् १८९४ ई० में उदार दलकी सभा (Liberal Association) के सभापति चुने गये और मरते दम तक उस पद पर प्रतिष्ठित रहे। उनकी उपस्थितिसे उदार दलके अनुयायियोंमें नवीन साहस और उत्साह उत्पन्न हो जाता था और वे कठिनाइयोंका सामना करनेके लिए पहलेसे अधिक उत्साहित हो जाते थे। ह्यूम साहब नियम, विधि, न्याय और शांतिके पक्षपाती थे। द्वेष और ईर्ष्या, फूट और कलहका उनमें लेश भी न था। समस्त सम्प्रदायोंके उदार विचार रखनेवाले मनुष्योंके साथ मिल कर परोपकारके काम करनेका भाव उनके हृदयमें दृढ़ रूपसे जमा हुआ था। निर्धनसे निर्धन व्यक्तिको भी शिक्षाके लाभोंसे परिचित करना वे अपना धर्म समझते थे। जनताके सुधारके लिए, निर्धन भाइयोंकी सहायताके लिए वे सदैव तत्पर रहते थे। जिस काममें गरीब भाइयोंका कुछ भी हित हो उसमें उनकी पूरी पूरी सहानुभूति होती थी। लोगोंकी ह्यूम साहबके प्रति कितनी प्रीति और भक्ति थी, इसका अनुमान इससे किया जा सकता है कि, कुछ दिनोंसे ह्यूम साहबका स्वास्थ्य बिगड़ गया था। वे बीमार रहा करते थे। उन्होंने कई बार एसोसियेशनसे प्रार्थना की कि मेरे स्थानमें कोई दूसरा सभापति चुन लिया जाय; परंतु लोकमत यही होता था कि ह्यूम साहबके

होते हुए दूसरा सभापति नहीं हो सकता। ह्यूम साहबकी ८० वीं वर्ष गाँठके दिन एसोसियेशनके उपसभापतिने समस्त सभासदोंको गार्डन पार्टी (गोट)में निमंत्रित किया और सबने एक मत होकर ह्यूम साहबको उनकी ८० वीं वर्षकी जन्म गाँठ पर बधाई दी और उनकी उदारता, दयालुता और योग्यता पर उन्हें धन्यवाद दिया।

जब ह्यूम साहब बीमार थे उस दशामें भी उन्होंने राजनीतिक सुधारोंके आंदोलनमें शक्तिसे अधिक श्रम किया। उन्हें यह जान कर कि बहुतसे सुधार, जिनके लिए उन्होंने जी-जानसे आन्दोलन किया था, कार्यरूपमें आ गये अपार हर्ष होता था और, उनकी बीमारी आधी हो जाती थी।

दान।

ह्यूम साहब वनस्पति-विद्यामें भी पारंगत थे। इस विषयमें उन्होंने बड़ी बड़ी खोजें की थीं ओर पौधों, पत्तियों फूलों और इन विषयोंकी पुस्तकों और चित्रोंका भारी संग्रह किया था। १९१० ई० में उन्होंने अपने बगीचे, पुस्तकालय और अजायब-घरके लिए एक बहुत बड़ा अहाता खरीदा और उसमें तीनों चीजोंको बड़े पैमाने पर स्थापित किया और उनके लिए इतना रुपया निकाल दिया कि जिसके सूदमे बराबर काम जारी रहे। यद्यपि उन्होंने इतना रुपया वनस्पति-विज्ञानके प्रचारके लिए अर्पण किया तथापि उन्होंने किसी पत्रमें इसे प्रकाशित नहीं किया। उन्हें नामकी बिल्कुल चाह नहीं थी। उन्हें कामसे शौक था। इसी कारण उन्होंने वनस्पति-भवन खोलनेके समय कोई आम जल्सा नहीं किया था। वे इस बात पर भी बड़ी देरमें राजी हुए कि उक्त वनस्पति-शालाकी नियमावली प्राकृतिक इतिहास सम्बंधी समितियोंके पास भेजी जाये।

ह्यूम साहब अव्वल दरजेके मिहनती थे। वे दूसरोंसे भी यही आशा रखते थे। आलससे उन्हें बड़ी घृणा थी। आलसी मनुष्यकी उनके पास

दाल नहीं गलती थी । जो लोग उनके साथ काम करते थे उनसे वह अपार भक्ति और प्रेम रखते थे । उनके मरनेसे उन्हें जितना दुःख हुआ उसको हम लेखनी द्वारा प्रगट नहीं कर सकते ।

उपोद्घात ।

ह्यूम साहबका आत्म-चरित्र भारतके इतिहासमें बड़े महत्त्वकी चीज है । ऐसे महापुरुषकी जीवनीसे बड़ी बड़ी शिक्षायें मिल सकती हैं जो भारतीय विषयोंके चलानेके लिए बड़ी उपयोगी हैं । अतः उनका इस पुस्तकमें वर्णन करना आवश्यक है । इस कारणसे और भी अधिक आवश्यक है कि भारतीय पब्लिक-सर्विसकी आवश्यकताओं तथा उसमें क्या क्या परिवर्तन होने चाहिए, इन पर विचार करनेके लिए रायल कमीशन (Royal Commission) नियत हुआ है । इस कमीशनका मुख्य कार्य्य यही है कि इस बातकी खोज करे कि वर्तमान पद्धतिमें क्या क्या दोष हैं और उनमें किन किन परिवर्तनोंकी आवश्यकता है कि जिनसे भारतवासियोंको सुख मिले ।

जब इस विषय पर विचार किया जाता है तो ज्ञात होता है कि वर्तमान पद्धतिमें वास्तविक दोष इस कारण आ गये हैं कि राज्य विदेशियोंके हाथमें है और ये दोष इस कारणसे और भी अधिक बढ़ गये हैं कि सरकारकी पालिसी सदा यह रही है कि एक स्थान पर सर्व अधिकार एकत्रित कर दिये जायँ और केवल अँग्रेज कर्मचारियोंके हाथमें प्रबंध रहे । इस बातको सारा संसार जानता है कि अँग्रेज भारतवर्षमें देशको लाभ पहुँचानेके लिए कदापि नहीं आये थे । प्रथम तो वे केवल व्यापारके वास्ते आये थे, पश्चात् राज्य भी उनके हाथ लग गया । यह केवल दैव-संयोगी बात थी कि जिस समय वे आये भारतमें गड़बड़ *फैली हुई थी और उस गड़बड़में इनका दाव लग गया । उस समय इसी* बातमें भलाई थी कि अधिकार एक पुरुषके हाथमें रहे । इसी कारणसे

लार्ड कार्नवालिसने इंडियन सिविल-सर्विसकी बुनियाद डाली और इसमें संदेह नहीं कि सिविल-सर्विसके आदमी बड़े योग्य और ईमानदार निकले; परंतु अब समय दूसरा है । जो बात उस समय उपयोगी थी वह अब नहीं है । जिन बातोंके कारण राज्यका अधिकार केवल विदेशियोंके हाथमें रहनेकी पद्धति चलाई गई थी वे अब जाती रही हैं । उस समय भारतमें योग्य और शिक्षित पुरुषोंका अभाव था; परंतु वर्तमानमें पब्लिक-सर्विसकी प्रत्येक शाखाके लिए योग्यसे योग्य भारतवासी मिल सकते हैं और लोकमत भी यह है कि प्राचीन रीतिका स्वराज्य लोगोंको फिर मिल जावे ।

पहली अवस्थाको छोड़ कर पीछे भी एक विचित्र घटना हो गई है । वह यह कि पृथक् पृथक् विभाग बन गये हैं और उनमें खूब शक्ति आ गई है । राज्यके भिन्न भिन्न कार्यों पर जो उनका प्रभाव पड़ रहा है वह बड़ा शोचनीय है। उनका अनुचित अधिकार बढ़ जाना बड़ा हानिकर है । उससे स्थानीय राज्य-कार्यको भी हानि पहुँची और भारतीय सचिव और हाउस-आफ़-कामन्सका भी वह पूर्ण प्रबंध नहीं रहा ।

जैसा लार्ड रिपन तथा लार्ड मारलेकी पालिसीसे प्रगट होता है उदार दलके नेताओंका खास उद्देश्य यह था कि इन सीमासे बढ़े हुए विभागोंको उचित सीमाके भीतर लाया जाय और उन पर उचित दबाव रक्खा जाय । समस्त अधिकारोंके एक जगह एकत्रित होनेसे राज्यकार्यमें जो त्रुटियाँ आई हैं उनका हाल ह्यूम साहबकी जीवनीके पढ़नेसे भली भाँति विदित हो जायगा । इसमें किसीको शंका नहीं कि ह्यूम साहब कैसे योग्य और परिश्रमी मनुष्य थे । उन्हें सदैव देश-हितका ध्यान लगा रहता था । सरकारी कागजोंसे भी ज्ञात होता है कि अपना कर्तव्य-पालन करनेमें उनसे बढ़ कर सच्चा मनुष्य और कोई नहीं था। वे आदर्श पुरुष थे। ऐसे मनुष्यकी सर्वत्र इज्जत होती है । यदि

ऐसे मनुष्यसे भी गवर्नमेंटने लाभ नहीं उठाया तो समझना चाहिए कि दोष पद्धतिका है, उनका नहीं। इस बातको सब जानते हैं कि जिलेका प्रबन्ध करनेमें ह्यूम साहबको कितनी सफलता हुई तथा वाइसराय महोदयके दफ्तरमें भी उन्होंने कितनी सफलता प्राप्त की। यदि जिलेके कर्मचारियोंको उचित अधिकार प्राप्त हों और वे लोगोंसे मिले जुले रहें तो उनसे ब्रिटिश राज्यको बड़ा सहारा मिल सकता है। ह्यूम साहबमें ये दोनों बातें थीं। उस समय कलेक्टर प्रत्येक विभागमें सरकारका भारी प्रतिनिधि समझा जाता था। ह्यूम साहबमें यह और भी अच्छी बात थी कि वे लोगोंसे मेल रखते थे और आवश्यक विषयोंमें उनसे सम्मति और सहायता लेते रहते थे। इसीसे गदरके समय अथवा बादके शांतिके समय भी उनको बड़ी सफलता हुई। जिस प्रकार सम्राट अकबर अपनी प्रजासे मिलता था, ह्यूम साहब भी अपने जिलेके लोगोंसे मिलते थे और उनकी आवश्यकताओंको भली भाँति समझते थे तथा उन्हीं आवश्यकताओंको दृष्टिमें रखते हुए सब कार्य करते थे। दुर्भाग्यसे इनके प्रबंधमें भंग पड़ गया। कारण कि जबसे गवर्नमेंटकी नीति यह हुई कि समस्त अधिकार एक जगह रहें, कलेक्टरोंकी पहली जैसी स्थिती नहीं रही और उन्नतिमें बड़ा विघ्न पड़ गया। जबसे अधिकार जिलेके अफसरोंसे छीन कर लोकल गवर्नमेन्टके अधीन भिन्न भिन्न विभागोंके मंत्रियों और कर्मचारियोंको दिये गये, जिलेका प्रबन्ध उतना उपयोगी न रहा जितना पहले था।

तीस वर्ष हुए जब लार्ड रिपन स्थानीय स्वराज्यके प्रश्न पर विचार कर रहे थे, उस समय एक अनुभवी पुरुषने उक्त विभागों तथा उनके हानिकर हस्तक्षेपोंके विषयमें लिखा था कि इनकी संख्या बहुत है। पुलिस, इंजीनियरी, जंगलात, आबकारी, नमक, सर्वे, आबपाशी, सफाई, टीका इत्यादि। इनमेंसे प्रत्येक विभागके बहुतसे कम वेतन पानेवाले और भर्को मरनेवाले नौकर प्रत्येक जिलेमें रहते हैं। ये लोग गाँवमें घूमा करते हैं और लूट मार और जुल्मसे अपना पेट भरा करते हैं। इन तमाम

विभागों और छोटे छोटे कर्मचारियोंके बीचमें बेचारी प्रजाका जीवन ऐसे व्यतीत होता है जैसा बकरीका भेड़ियोंके जंगलमें। वर्षोंसे ऐसे ढगके चले आनेसे और इन लोगोंके अत्याचारोंसे प्रजाके ऊपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। इस छोरसे उस छोर तक देशभरमें लोगोंके दिल बिगड गये हैं और यह बात ब्रिटिश राज्यके लिए बडी हानिकर हुई है। अब अंतमें जाकर इस बातके लिए उद्योग किया जा रहा है कि इस आये दिनके अत्याचारको दूर किया जाय और गाँववालोंको अपने भीतरी मामलोंके तय करनेका अधिकार दे दिया जाये, और इस बातमें कोई आश्चर्य नहीं है कि प्रजा इससे बड़ी प्रसन्न और कृतज्ञ है। इस बातको सदैव ध्यानमें रखना चाहिए कि राज्यका ढंग चाहे जो हो, परंतु राज्य-कार्य स्वयं भारतवासी ही करें, तो ठीक है। अधिकार बाँटने और स्थानीय स्वराज्यका वास्तविक मतव्य यही है कि योग्य भारतवासियोंसे राज्यका कार्य कराया जाय। गाँवकी पंचायतकी पुरानी प्रथाको फिरसे जारी किया जाय और गाँवका प्रबन्ध उन लालची लोगोंके हाथसे निकाल कर, जो गवर्नमेन्टकी नौकरी तनख्वाहके वास्ते नहीं करते, किंतु अधिकारोंके प्राप्त करने और लोगोंसे रुपया लूटनेके लिए करते हैं, स्थानीय योग्य और अनुभवी लोगोंके हाथमें दिया जाय। इन विभागोंके आदमी हर एक जिले और गाँवमें पहुँचते हैं और इससे जिलेके प्रबन्ध कर्ताओंको भी हानि होती है और गाँवके प्रबन्धमें भी गड़बड मच जाती है। इस खराबीका इलाज यही है कि अधिकार एक जगह एकत्रित न हों और इसीको लार्ड रिपनने ठीक रीतिसे काममें लानेका उद्योग किया था। उनका अभिप्राय यह नहीं था कि स्थान स्थान पर अधिकारी मनुष्योंकी सख्या बढ जाये; किंतु यह था कि पचायतकी दृढ नींव पर स्थानीय स्वराज्य स्थापित हो जाय। एक ओर तो इन विभागोंके आदमी गाँवोंमें गडबड़ मचाते थे, दूसरी ओर बड़े लाट और भारत-सचिव (Secretary fo State) पर भी बुरा प्रभाव डालते थे। इसका परिणाम यह होता था कि इंगलैंडमें हाउस-आफ-

कामन्स (House of Commons) तकको अपनी सम्मतिके अनुसार मोड़ लेते थे। इस प्रकार राजनीति और नियमोंका निर्माण इन्हीं विभागोंके हाथमें था। प्रत्येक विभागके लिए नियम और उपनियम बने हुए हैं और इन्हीं नियमोंके अनुसार काम होता है; परंतु सब लोग इस बात-को जानते हैं कि ये नियम विभागोंकी सम्मतिसे ही बनाये जाते है और इन समस्त नियमोंका अभिप्राय यही होता है कि विभागोंका शासन दृढ़ हो जाये और उनका प्रजा पर पूरा पूरा दबाव हो जाये। नियम और कानून बनाते समय भारतवासियोंकी राय कभी नहीं ली जाती थी। यदि ली भी जाती थी तो उस समय जब अधिकारी-वर्ग विभागोंकी रायसे अपना विचार बना चुकते थे। इन कारणोंसे कहा जाता है कि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट क्या है विभागोंकी पेटियोंका जुल्म है। इस जुल्ममें कभी कभी कमी हो जाती है और वह उस समय जब कि इन पेटियोंकी कुंजी खो जाती है। इन पेटियोंमें ही कानूनकी तजवीजें पकती है और ऐसी ऐसी तरकीबें निकाली जाती है कि किसीको बचनेका मौका न रहे और अंतमें प्रजाकी स्वतंत्रता जाती रहे। केवल बड़े लाट ही ऐसे महापुरुष हैं कि जो चाहे तो इन विभागोंके जुल्मको रोक सकते हैं, कारण कि वे सीधे इंगलेंडसे नियत हो कर आते है; परंतु वे ऐसा करना कब चाहेंगे जब कि उनको पहलेसे ही रँग दिया जाय या उनमें ऐसा करनेका साहस और योग्यता नहीं। रुकावट डालने अथवा विरोध करनेका काम बड़ा कठिन है और यह बात लार्ड कैनिङ्ग, लार्ड मेयो और लार्ड रिपनके उदाहर-णोंसे स्पष्टतया प्रगट है। इसका कारण है और वह यह कि कौंसिलमें अनेक सदस्य होते है और उनमेंसे अनेक पहले विभागोंके अधिकारी रहे हुए होते है। उनके बीचमें बड़े लाट अकेले होते हैं। अकेला मनुष्य चाहे कितना ही जोरदार हो, क्या कर सकता है। इसके अतिरिक्त उन्हें इंगलेंडके इंडिया-आफिस (भारत-सचिवकी कौंसिल) के विरोधका भी पूरा पूरा भय रहता है; क्योंकि भारत-सचिवकी कौं-

सिल्के सदस्य भी विभागोंके अधिकारी और लाट साहबकी कौंसिलके सदस्य रहे हुए होते हैं। ह्यूम साहब पर जो बीती, उससे प्रत्यक्ष है कि वे लोग क्या कर सकते हैं। स्मरण होगा कि लार्ड मेयोने कृषि-विभाग बनाया था और उसका अधिकारी ह्यूम साहबको नियत किया था; परंतु बड़े लाटकी कौंसिल और इंडिया-आफिसके विरोधके कारण यह तजवीज बदल गई। दूसरी बार इन्हीं लोगोंके विरोधसे ह्यूम साहबको अपने उच्च पदसे, जिसके वे सर्व प्रकारसे योग्य थे, पृथक् होना पड़ा। वाइसरायोंके साथ जो कुछ बीती है, उसका सारांश यह है कि जब वे न्याय पर रहे और तराजूके दोनों पलड़ोंको उन्होंने बराबर रखना चाहा तो उनकी बदनामी हुई और हार हुई; परंतु जब उनकी सहानुभूति इन लोगोंके साथ रही तो उस समय उन्होंने अपनी शक्तिको बढ़ानेका उद्योग किया।

जिन कारणोंसे ये खराबियाँ पड़ गई है वे बड़े गहरे हैं। दोष उन लोगोंका नहीं हैं, किंतु पद्धतिका है। कार्यकर्त्ता अवश्य सुशील और योग्य होते हैं; परंतु ढंग उनको दूसरी तरहका बना देता है। उन्हें पूर्ण अधिकार मिल जाते है। उनमें अपनी उन्नतिकी इच्छा बहुत ज्यादा बढ़ जाती है और स्वतंत्र विचार करनेकी शक्ति कम हो जाती है। ह्यूम साहबके साथ जो विरोध हुआ उसका कारण यही था कि वे लोग वर्तमान पद्धतिसे उन्नति करते करते उच्च पद पर पहुँच गये। इसमें दोष उनका नहीं, किंतु पद्धतिका है। इस बातके समझनेके लिए, कि वाइसरायकी कौंसिलमें यह अपवित्र भाव किस प्रकार उत्पन्न हो गया, यह जानना जरूरी है कि जो लोग इस कामके वास्ते इंगलैंडसे आते है वे किस तरह बन कर आते हैं, उनको किस प्रकारकी शिक्षा मिलती है और किस भाँति उनके चित्त पर प्रभाव डाला जाता है। ईस्ट इंडिया-कम्पनीके समयमें भारतीय सेवाके लिए इंगलैंडमें लोग नामजद किये जाते थे और फिर उन्हें हेलीबरी काळेजमें (Haileybury College) काम सिखलाया जाता था। इसमें प्रायः उन्हीं घरानोंके लोग आते थे जिनका

पहलेसे भारतसे कुछ न कुछ सम्बंध होता था। यद्यपि इस ढंगमें भी दोष अवश्य थे; परंतु एक लाभ कमसे कम इससे यह था कि उनको भारतवासियोंसे कुछ न कुछ सहानुभूति होती थी; परंतु वर्तमानमें परीक्षा लेकर लोगोंके चुननेकी पद्धतिसे सहानुभूति बिल्कुल जाती रही है। आजकल केवल पढ़ाईकी परीक्षा लेते हैं। परीक्षामें अच्छे नम्बरोंसे उत्तीर्ण हो जानेवालोंको नियत कर दिया जाता है। कालेजसे निकलते ही ये लोग एकदम ऊँचे पदों पर नियत होकर हिन्दुस्तानमें चले आते हैं। न इन्हें इंगलेंडके सार्वजनिक जीवनका कुछ अनुभव होता है और न इनका प्रायः भारतसे कुछ सम्बंध होता है। ये लोग अपनी योग्यताके घमंडमें फूले रहते हैं और इन्हें एकदम अन्य देशवालों पर राज्य करनेका अधिकार मिल जाता है। भारतमें आकर ये जिस रीतिसे काम करते हैं उससे भी इन्हें अपने दोषोंके निकालनेका अवसर नहीं मिलता। कारण कि जिन शर्तोंसे ऊँचे ऊँचे पदों पर इनकी उन्नति होती है, वे भारत सरकारकी गूढ़ नीतिके कारण विलक्षण हैं। इन सबका यह परिणाम होता है कि ये लोग अपनेको स्वतन्त्र बिना किसी रुकावटके काम करने वाले जानने लगते हैं और समझते है कि जिन पर हम हुकूमत करते हैं, वे दासोंसे भी बढ़ कर हैं। यदि कोई स्वतंत्र प्रकृतिका मनुष्य आभी जाता है तो वह गवर्नमेन्टकी पालिसीके चक्करमें आ जाता है। क्योंकि किसी वाइसरायके समयमें कुछ पालिसी होती है और किसीके समयमें कुछ। यदि वह एकको ठीक समझता है तो दूसरेके विरुद्ध उसे अवश्य होना पड़ेगा और यह बात उसकी उन्नतिमें हानिकर होगी। उन्नति वही कर सकता है जो जैसा समय देखता है उसके अनुसार काम करता है। उसके स्वयंके विचार कुछ नहीं होते। गवर्नमेन्टकी पालिसीके साथ साथ उसके विचारोंमें भी परिवर्तन हो जाता है। ऐसा आदमी जानता है कि यदि मैं ऐसा नहीं करूँगा तो मेरा भाई दूसरा कोई ऐसा करेगा, क्योंकि काम तो ऐसा ही होगा। हाँ मेरी हानि हो जायगी अर्थात् मेरी उन्नतिका मौका जाता रहेगा। दूसरे

लोग जो मुझसे नीचे हैं बढ़ जायँगे। इन विचारोंसे वह गवर्नमेंटकी पालिसीके अनुसार बन जाता है। वह प्रेसका गला घोंटनेके लिए वैसे ही तैयार रहता है जैसे उसे स्वतंत्र करनेके लिए। वह जनताके नेताओंके साथ मित्रता करनेके लिए भी वैसे ही तैयार है जैसे उन्हें राज्य-विद्रोहके दण्डमें कैद करनेके लिए। ऐसे मनुष्य ही उन्नति करते हैं। पहले किसी विभागके अधिकारी हो जाते हैं फिर वाइसराय-की कौंसिलमें पहुँच जाते हैं और फिर वहाँसे भारत-सचिवकी कौंसिल-में पहुँच कर भारतवर्षके ढंक माग करते हैं और अपनी तथा अपने मित्रोंकी प्रशंसा किया करते हैं। ह्यूम साहब इस प्रकृतिके मनुष्य नहीं थे। उन्हें इस प्रकारके विचारोंसे घृणा थी।

पब्लिक-सर्विस कमीशन।

ऐसी दशा है जिसके साथ भारतीय सुधारकोंको पाला पड़ता है। रायल कमीशनके नियत होनेसे बहुत अच्छा अवसर मिल गया है और आशा की जाती है कि कांग्रेसके नेता इस अवसरको भली भाँति काममें लावेंगे। उचित है कि इस समय राज्यकी वर्तमान पद्धतिके दोषोंको प्रगट किया जाय और कमीशनके सामने एक ऐसी तजवीज रक्खी जाय जिसमें भारत-शासनमें जो परिवर्तन आवश्यक है उनको भली भाँति दिख-लाया जाय और जो भारतवासियोंको हृदयसे स्वीकार हों। समस्त सुधा-रोंका सार यह है कि अधिकार इस प्रकार बँट जावें कि जिससे प्रजाकी सम्मतिके अनुसार कार्य हुआ करे। लार्ड रिपनका स्थानीय स्वराज्य उचित सीमाके अन्दर काममें लाया जाये, अतएव समस्त अधिकारोंक एक स्थान पर एकत्रित होनेके ढंगको तोड़नेका प्रयत्न करना आवश्यक है। कारण कि इससे इधर तो गाँवों और जिलों पर बुरा असर पड़ता है और उधर वाइसरायकी कौंसिल पर। सौभाग्यसे वर्तमान पद्धतिके दोषोंको उच्चाधिकारी भी भली भाँति स्वीकार करने लगे हैं। लार्ड मारलेने

सन् १९०९ ई० में रायल कमीशन इस लिए नियत किया था कि जिससे इस पद्धतिके दोष पूर्णरीतिसे मालूम हो जायँ और यह भी मालूम हो जाय कि किस रीतिसे ये दोष दूर हो सकते है। यह तरकीब तो अच्छी थी और इसका परिणाम भी अवश्य अच्छा होता यदि कमीशनके सदस्य निरपेक्ष होकर न्याय करनेवाले होते; परंतु दुर्भाग्यसे कमीशनमें निरपेक्ष होकर न्याय करनेवाले बहुत कम थे। कमिश्नरोंके चुनते समय एक भारी भूल हो गई। उनमें अधिकांश ऐसे लोग चुने गये जो वर्तमान पद्धतिके पक्षपाती थे। कमीशनमें छः सदस्य थे; परंतु भारतवासी उनमें केवल रमेशदत्त थे। शेष पाँचों सभापति सहित अधिकारी-वर्गमेंसे थे। इस कारण भारतवासियोंकी स्वतंत्र संमतिके प्रगट होनेका कोई प्रबंध नहीं था। इसके अतिरिक्त तीन सदस्य ऐसे थे जो वाइसरायकी कौंसिलके ही उच्चाधिकारी थे और जनताकी दशासे सर्वथा अनभिज्ञ रहते हैं। केवल इतना ही नहीं किंतु जो स्वयं वर्तमान पद्धतिके कर्त्ता-धर्त्ता और उत्तर-दाता होते हैं। ऐसे पुरुषोंके कमीशनमें होनेसे भला क्या लाभ हो सकता था? कौन मनुष्य ऐसा है जो अपने किये हुए काममें आप दोष निकालता है। इसका यह परिणाम हुआ कि कमीशनको सफलता नहीं हुई। प्रजाकी सम्मतिके अनुसार स्थानीय स्वराज्यकी स्थापनाके निमित्त कुछ कार्य नहीं हुआ। उल्टा यह हुआ कि बहुतसी बातें कमीशनने ऐसी लिखी जो अवनति की थीं। लार्ड मारलेने जो भारी दोष देखा था वह ज्योंका त्यों बना रहा। यद्यपि इस कमीशनका परिणाम कुछ नहीं हुआ; परंतु कमीशनने कई भारतवासियोंकी और विशेष कर स्वर्गीय मिस्टर गोखलेकी जो साक्षी ली, जिसे उन्होंने बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसियेशनकी ओरसे लिखा है वह, बड़े मारकेकी है। मिस्टर गोखलेने बतलाया था कि गाँवकी पंचायतकी नींव पर स्थानीय स्वराज्यकी स्थापना होनी चाहिए और प्राचीन कालके अनुसार गाँवके मामले उसी गाँवकी पंचायतमें ही तय हो जाने चाहिए। जिलेके प्रबंधके वास्ते यह प्रस्ताव था कि जिलेके अफसरकी सहायताके

लिए एक छोटीसी कौंसिल हो जिसके कुछ मेम्बर निर्वाचित किये जायँ और कुछ नामजद किये जायँ । और आवश्यक अवसरों पर इस कौंसिलकी सम्मतिसे काम किया जाय। ऐसा होने पर जिलेके अफसरके अधिकार भी बढ़ा दिये जायँ जिससे बहुतसी बातें तुरंत और जहाँकी तहाँ तय हो जाया करें । फिजूल ऊँचे हाकिमों तक न जाना पड़े । जिस समय ह्यूम साहब इटावेमें थे यदि उस समय ऐसा प्रबंध होता तो इटावेकी दशा बहुत ही अच्छी होती । इन रीतियोंसे स्थानीय स्वराज्यके विषयमें सुधार होना चाहिए; परंतु भिन्न भिन्न बातोंकी शिकायत करते हुए हमें नवीन परिवर्तनको भी ध्यानमें रखना चाहिए अर्थात देखना चाहिए कि लार्ड मारलेने भारतवासियोंके लिए कौन कौनसे सुधार किये और हमारे सम्राट् पंचम जार्जने दिल्लीमें क्या घोषणा की । वर्तमान पद्धति, जिसके अनुसार थोड़ेसे विदेशी कर्मचारी २५ करोड़ भारतवासियों पर स्वतंत्रतासे शासन कर रहे हैं, अब कामकी नहीं रही । अब उसमें पूर्ण परिवर्तनकी आवश्यकता है । एड़ीसे लेकर चोटी तक, गाँवकी पंचायतसे लेकर हाउस-आफ-कामन्स तक पुनः संगठन होना उचित है । राज्य-सिद्धांतमें भी परिवर्तनकी जरूरत है । थोड़ेसे अफ़सरोंके झुंड पर भरोसा करनेकी जगह अब लोगों पर विश्वास करना चाहिए । गवर्नमेंटके कर्मचारियोंको नौकर होना चाहिए न कि प्रजाके मालिक ।

इंगलेंडमें रुकावट ।

परंतु प्रजाके स्वत्त्वोंकी पूर्ण रक्षा उस समय तक नहीं होगी जब तक इंगलेंडमें भारतके उच्चाधिकारियों पर निरपेक्ष और वास्तविक रुकावट न होगी। १३० वर्ष पहले मिस्टर फाक्सने इसके लिए यह प्रस्ताव किया था कि इंगलेंडमें एक कमीशन नियत किया जाय जिसमें ऐसे मनुष्य हों जो अपने सिद्धान्तोंके पक्के मजबूत हों, भारतवर्षसे जिनका कोई सम्बंध

न हो और जो न्याय और सुशासनके उच्च और उदार सिद्धान्तोंको निरपेक्ष होकर बुद्धिमानीसे काममें ला सकें। इस प्रस्तावका एडमंड बर्कने बड़ी योग्यतासे समर्थन किया था। बर्क साहब चाहते थे कि भारतके राजकाजकी पूरी पूरी सँभाल की जाये और दोष और पक्षपातको जहाँ तक सम्भव है, निकाल दिया जाय। यदि कोई मनुष्य किसी अधिकारको पाकर उसका दुरुपयोग करे और उससे अनुचित लाभ उठाना चाहे तो अवश्य उसे दंड दिया जाय। इस विषयका आन्दोलन करनेके लिए लार्ड वेलबीके कमीशनकी रिपोर्टमें जिन सुधारोंकी सिफारिश की थी उनमेंसे कुछको जारी किया जाय। सेक्रेटरी आफ स्टेटको सम्मति देनेवालोंके विषयमें भी उक्त रिपोर्टमें लिखा था कि भारतके योग्य और अनुभवी पुरुषोंकी एक अच्छी संख्या सेक्रेटरी आफ स्टेटकी कौंसिलमें होनी चाहिए। और उसका निर्वाचन वाइसराय तथा छोटे लाटकी कौंसिलके लोकनिर्वाचित सदस्योंकी सम्मतिसे होना चाहिए। इस प्रकार कमसे कम एक तिहाई सदस्य भारतवासी हों, एक तिहाई अफसर लोग हों और एक तिहाई इंगलैंडकके योग्य और विश्वास-पात्र मनुष्य हों जो सार्वजनिक कार्योंमें योग लेते हों और भारतीय राज्यसे जिनका कोई सम्बंध न हो। पार्लियामेन्टके दबावके विषयमें उक्त रिपोर्टमें निम्न लिखित सिफारिश थी— ईस्ट-इंडिया-कम्पनीके समयमें २० वें वर्ष कम्पनीको नवीन आज्ञापत्र देते समय पार्लियामेन्ट द्वारा जाँच पड़ताल की जाती थी। भारतवर्षमें जो कुछ सुधार हुए हैं, वे इन्हीं जाँच पड़तालोंके परिणाम हैं। इन्हींके भयसे अधिक अत्याचार नहीं होते थे। यह पुराना ढंग कानूनके द्वारा फिर जारी हो जाना चाहिए। भारतके खर्च पर भी संभाल रखनेके वास्ते यह आवश्यक है कि भारत-सचिवकी तनख्वाह भारतीय खजानेसे न दी जाये, किंतु ब्रिटिश खजानेसे दी जाये। भारतीय वजट पर जो कुछ बहस होती है वह नाम मात्रकी होती है। उसको वास्तविक बनानेके लिए इस बातकी आवश्यकता है

कि हाउस-आफ-कामन्स (House of Commons) की ओरसे प्रति वर्ष एक कमेटी नियत की जाया करे जो भारतकी आर्थिक दशाकी, जो बजटमें तथा बड़े लाटकी व्यवस्थापक सभामें बजट पर बहस करते हुए दिखलाई जाती है, तहकीकात किया करे और उसकी रिपोर्ट पार्लियामेंटमें पेश किया करे। लार्ड मारलेने कहा है कि "हमको इस बातका पूरा अनुभव होना चाहिए कि भारतके प्रति जो हमारा कर्तव्य है वह कैसा भारी *नाजुक, भयंकर और पेचदार है।" जो बातें वेलबी कमीशन*-ने बतलाई हैं उनसे पार्लियामेंटको इस बातका ज्ञान हो जायगा कि भारतका भार अपने सिर पर लेनेके कारण जो जो उसके कर्तव्य हैं, उनको वह भली भाँति पालन करे।

अंत समय।

टामस कारलाइलने कहा है कि बुढ़ापा मनुष्यके जीवनमें एक अन्धमय और अप्रिय वस्तु है। परंतु ह्यूम साहबके लिए यह बात नहीं थी। जिस समय उनको शारीरिक दुःख होता था उस समय भी वे अपने लिए हर्ष और आनंदकी सामग्री एकत्रित कर लेते थे। इसका कारण यह है कि वे अपने हृदयके राजा थे। अन्त समय तक भी वे अपने वैज्ञानिक अनुभवोंमें लगे रहे। इससे उनके चित्तको बड़ी प्रसन्नता होती थी। उनकी सबसे प्रबल इच्छा यह थी कि भारतकी स्वतंत्रताको वे अपनी आँखोंसे देखलें। वे स्वयं कहा करते थे कि भारतवर्षके भविष्यके वास्ते मेरी बड़ी आशा लग रही है और यदि मैं अपने जीवनमें इस आशाको पूर्ण होता हुआ देखलूँ तो मरते समय मुझे बड़ा सुख और सन्तोष होगा। ह्यूम साहबके श्रमका वृक्ष अब अच्छे फल ला रहा है। उनके वियोगसे दुखी मित्रोंको कमसे कम इतना सन्तोष अवश्य है कि ह्यूम साहबको अपनी मृत्युसे पहले यह विश्वास हो गया था कि भारतवासियोंके लिए, जिन्हें वे अपने जीसे प्यारा समझते थे, शीघ्र अच्छा दिन आनेवाला है।

२१ जुलाई सन् १९१२ को ८४ वर्षकी अवस्थामें ह्यूम साहब शांति पूर्वक इस संसारको छोड़ कर स्वर्ग लोकको पधारे । उनके अन्त समयका क्रिया-कर्म बहुत ही सादा तौरसे हुआ । उनकी समाधि पर बहुत कम शब्द थे; परंतु सात समुद्रों पार भारतवर्षमें उनके वास्ते बड़ा शोक मनाया गया । तारों, चिट्ठियों और प्रस्तावों द्वारा देशभरमें भारतवासियोंने बड़े जोशीले शब्दोंमें अपना शोक प्रगट किया, जिनसे विदित होता है कि भारतवासियोंके हृदयोंमें उनके प्रति कितनी भक्ति थी। जितने लोगोंने उनके वास्ते शोक मनाया शायद उतनोंने किसीके वास्ते मनाया हो । इसका कारण यह है कि उनका नाम और काम भारतके दूर दूर देशोंमें था । प्रत्येक स्थान पर भारतवासी अपने उस मित्रका मातम करनेको एकत्रित हुए जो उनसे प्रेम करता था, जिसने उनके वास्ते श्रम किया था, दुःख उठाया था और जिसने उनको जातीय स्वतंत्रताका मार्ग बतलाया था । इलाहाबादके लीडर पत्रके ३१ अगस्तके अंकमें श्रीयुत जोरावरसिंह निगम म्यूनिसिपल कमिश्नरने एक बड़ा प्रभावशाली लेख लिखा था, जिसका अनुवाद इस पुस्तकके अन्तमें दिया गया है। उसमें उन्होंने इस बातको भली भाँति दिखलाया है कि इटावे शहर और जिलेमें ह्यूम साहबका नाम कितना प्रसिद्ध है । ५० वर्ष बीत जाने पर भी लोगोंके दिलोंमें अब तक उनकी याद वैसी ही बनी हुई है। उनके कामोंको लोग अभी तक भूले नहीं हैं। जब इटावेमें उनकी मृत्युके हृदय-विदारक समाचार मिले तो इटावेके बाजारकी सब दूकानें बंद हो गईं । उनकी यादगारमें जो इटावेमें सभा हुई उसमें वहाँके कलेक्टर श्रीयुत एच. आर. नेविल सभापति थे । उन्होंने बड़े प्रभावशाली शब्दोंमें कहा था कि ह्यूम साहबके समयमें इटावेके जिलेमें बड़ी उन्नति हुई और प्रजा प्रसन्न रही । जब हम ह्यूम साहबके जीवनपर दृष्टि डालते है और भारतवर्ष और इंगलैंडकी उन्नतिके वास्ते जो तजवीज उन्होंने की थीं, उसको देखते है, तो यूनान

देशके प्रसिद्ध वीर प्रोमीथियस (Prometheus) की याद आती है, जिसका यह उद्देश्य था कि सदा आगेका विचार करना चाहिए। इसीके मुकाबिलेमें एक दूसरा था, जिसका नाम एपीमीथियस (Epimetheus) था। उसका उद्देश्य यह था कि पीछेका विचार करना चाहिए। एपीमीथियस ऐसे मनुष्योंका नमूना था जो न कुछ सीखें न कुछ भूलें; किन्तु जितना जानते हो उसीको अंधेपनसे बिना किसी दूसरेका विचार किये काममें लाते रहें। कहते हैं कि प्रोमीथियस मिट्टीके मनुष्योंमें आत्मिक जीवन उत्पन्न करनेके लिए आकाशसे अग्नि लाया था। उसने मनुष्यको कला कौशल्य और विज्ञानादि सिखलाये जिसके कारण उस समयके राज्यके कर्मचारी उससे अप्रसन्न भी हो गये उसने प्रजाके वास्ते अनेक दुःख उठाये; परंतु अंतमें उसकी ही विजय हुई, जब हरक्युलसने उन गिद्धोंको, जो उसके मांसको नोच नोच कर खाते थे, मारडाला और उसके बंधनोंको काट दिया। प्रत्येक जातिमें उन्नति और अवनतिमें यही झगड़ा चलता रहता है। भारतवर्षके लिए यह सौभाग्यकी बात है कि उसका साथ इंगलेंडसे पड़ा है। यदि कहीं रूससे पड़ता, जहाँ मनुष्योंके जोश और उत्साहको बड़ी बुरी तरहसे रोका जाता है तो बड़ी मुश्किल होती। यदि इंगलेंडमें, जो स्वतंत्रताका प्राचीन स्थान है, रूसकी नीतिके अनुयायी कुछ लोग हो जाते है, तो उनका थोड़े दिन ही बाजा बजता है। अतएव भारतवर्षके भविष्यके लिए हमको उचित है कि ह्यूम साहबकी इस आशा पर दृढ़ विश्वास करें कि चाहे रातभर दुःखमें गुजरे; परंतु सुबह होते ही अवश्य आनंदकी सामग्री मिल जायगी।

परिशिष्ट १।

ह्यूम साहबका पत्र।

इटावा
२४ जुलाई १८६०।

सेवामें—
श्रीयुत जी. आर. हेबुड,
मंत्री, काटनसप्लाई समिति,
मैंचेस्टर।

प्रिय महाशय,

आपका दिसम्बर सन् १८५९ ई० का पत्र तथा सर्क्युलर (विज्ञप्ति) मेरे पास इस महीनेकी १७ तारीखको पहुँचा। इतना विलम्ब क्यों हुआ यह मैं नहीं कह सकता। कमसे कम मैं तो निर्दोष हूँ। मैं आपसे इस बातमें पूर्णरूपसे सहमत हूँ कि इन प्रान्तोंमें रुईकी पैदावार बढ़ाने तथा उसको उम्दा बनानेकी जरूरत है। अन्य अनेक कार्योंसे जो समय मुझे मिल सका, मैंने उसे वर्षों इस विषय पर विचार करनेमें लगाया है, अत अब मैं आपके बहुतसे प्रश्नोंका उत्तर दे सकता हूँ।

आपमें ही इस भयसे कि कहीं ऐसा न हो कि मेरे अनेक उत्तरोंको ठीक न देख कर आप शंका और आश्चर्य करने लगें, कि मैंने उद्देश्योंकी मददगारीमें, जिनको मैं हृदयसे चाहता हूँ, अधिक श्रम और उत्साहसे काम नहीं किया, मैं आपको यह बतला देना उचित समझता हूँ कि एक कर्मचारीको, जिसे अकेले छह सात हजार लोगों पर शासन करना होता है, रुईकी पैदावारकी उन्नति या बढ़तीका ख्याल

इतना आवश्यक नहीं होता जितना अन्य विषयोंका। उसमें वही समय लगाया जा सकता है जो लोगोंके जीवन और धनकी रक्षा करने, स्कूलों, अस्पतालों तथा सार्वजनिक पुस्तकालयोंके स्थापित करने और उनको चलाने, मालगुजारीके वसूल करने, सड़को इमारतों वगैरहके बनानेके बड़े बड़े कामोंके बाद बचता है।

अब आपके प्रश्नोंका उत्तर क्रमसे देता हूँ।

१–इटावेके जिलेमें रुईकी पैदावार होती है।

२–इस जिलेमें अब केवल एक किस्मकी रुई होती है। उसके दो तरहके नमूने भेजता हूँ। एक कपास अर्थात् बिना साफ की हुई रुई या, दूसरी चरखी द्वारा साफ की हुई रुईका। पैदावारका अच्छा बुरा होना जमीन और मौसिम पर निर्भर है। जो नमूना भेज रहा हूँ उससे यहाँकी आधी रुई घटिया होती है, केवल दसवाँ भाग उससे बढ़िया होता है।

३–अमेरिकाकी किस्मकी रुई यहाँ पैदा नहीं होती और न यहाँ कभी उसके पैदा करनेका उद्योग किया गया है। मालूम होता है कि कुछ जमींदारोंने २० साल हुए चन्द एकड़ जमीनमें उसकी काश्त की थी, परंतु कहते हैं कि उसके फूल आनेमें इतनी देर लगी कि वह कभी भी ठीक तौरसे नहीं फली। मैने स्वयं लगातार तीन वर्ष तक उसे बोया है, परन्तु कुछ भी सफलता नहीं हुई। समयके अभावसे शायद उसकी पूरी देख-भाल नहीं हो सकी हो अथवा उसके अथवा उसके बीजका ही दोष हो। अमेरिकाकी रुईको यहाँ पर लोग नर्म कपास कहते हैं।

४–गत वर्ष ५७६७५ एकड़ जमीनमें रुई बोई गई थी और १०७९२९ मन पैदावार हुई थी अर्थात् औसत पैदावार एकड़ पीछे एक मन पेंतीस सेरकी थी; परंतु वर्षा बड़ी खराब हुई थी। मेरे खयालमें अच्छे मौसिममें यदि अच्छी तरह बोई जाय तो एकड़ पीछे ३ मन ५ सेरकी औसत पैदावार पड़ जायगी।

५–देखो, नम्बर ३ का उत्तर।

६–यहाँकी जमीनमें भिन्न भिन्न भागोंमें भिन्नता है। कहीं बहुत हलकी रेतीली है जिसको यहाँ भूर कहते है और कहीं दोमुट है। यहाँकी आबहवा सेंट्रल दोआबके शेष जिलोंकी समान है।......यहाँकी सालभरकी वर्षाका औसत २८ इंच है जिसमें २२ इंच वर्षाऋतुमें होती है।

७–कपास प्रायः जनूके महीनेमें एक या दो अच्छी वारिश होनेके बाद बोया जाता है; परंतु कभी कभी यदि वारिश देरसे हो तो सूखी जमीनमें भी बोदिया जाता है। जिन वर्षोंमें वर्षा अच्छी होती है उनमे सिंचाईकी जरूरत नहीं होती; परन्तु जब मौसिमके पहले भागमें वर्षा नहीं होती तब लोग यथासंभव पानी देने लगते हैं; परंतु यदि बादमें भी वर्षा न हो, तो फिर लोग सिंचाईको छोड़ देते हैं। क्योंकि सिंचाईमें खर्च ज्यादा होता है और लाभ कम। फसिल उस समय सबसे अच्छी होती है जब कि वर्षा पौधेके फूलने पर कुछ दिनके लिए बन्द हो जाय। फूल प्रायः जमीनमें बोनेके दिनसे ७५ दिनमें आने लगता है अथवा यदि सूखी जमीनमें बोया तो पहली अच्छी वारिशके दिनसे ७५ दिनमें आने लगता है। यदि पानी फूल पर पड़ जाय तो उपज बहुत कम होती है और बहुत घटिया किस्मकी होती है। फली पर यदि पानी पड़ जाय तो फसिल और भी अधिक खराब हो जाती है। हम लोग हलकी चिक्नी मिट्टीको कपासके लिए बहुत अच्छा समझते हैं। इसमें खाद देनेसे पैदावार बहुत बढ़ जाती है। इसी कारणसे जितना थोड़ा बहुत खाद लोग जमा कर पाते हैं वह कपासके खेतोंमें ही देते हैं। जिलेके चौथाई भागमें सिंचाई गंगा नहरसे होती है और लगभग दूसरे चौथाई भागमें कुँवों, तलावों और नदियों वगैरहसे होती है। प्रायः लोगोंका विश्वास यह है कि सिंचाईसे न तो पैदावार अच्छी होती है और न बढ़ती है।

८–जितना कपास चुना जाता है उसमें साफ रूईका औसत एक तिहाईके करीब होता है।..................इस जिलेमें जितनी जमीनमें अब रूईकी कारत होती है उससे तिगुनी जमीनमें आसानीसे कारत हो सकती है।

९–यदि ठीक तौरसे काम किया जाय तो रूईकी कारतके बढ़नेकी अपेक्षा कोई भी चीज आसान नहीं है। हमें विशेष कर आवश्यकता इन बातोंकी है कि रुपया पेशगी दिया जाय, ज्ञान अधिक हो और तुरंत अच्छी खरीदारी हो, (आगे नम्बर १२ को देखो।)

१०–इस समय केवल ये ही विघ्न हैं कि रुपया नहीं है, ज्ञानकी कमी है और माँगका कोई भी निश्चय नहीं। (आगे देखो नम्बर १२।)

११–इस जिलेकी पैदावारमें हमारे अंदाजेमें एक तिहाईके लगभग तो यहाँके लोगोंमें ही खर्च हो जाती है। शेषमेंसे २५ हजार मनके लगभग इंगलैंडको चली जाती है और अवशिष्ट बंगालमें खर्च हो जाती है।

१२–इस जिलेमें या इसके आसपासके जिलोंमें ऐसे कोई यूरोपियन व्यापारी नहीं हैं जो रुई खरीदते हैं या मेरे खयालमें खरीदेंगे, और न कोई हिंदुस्तानी व्यापारी ही ज्यादह रुईका खरीदार है। राधेलाल, भगवानदास और उमरावसिंह ये लोग इटावेमें रुईके बड़े खरीदार समझे जाते हैं; परंतु ये मिल कर भी मुश्किलसे डेढ़ लाख रुपयेकी रुई सालभरमें खरीदते होंगे। अबसे करीब २५ वर्ष पहले आगरेमें मेसर्स राइट एंड रिची (Messrs wright of Rtchie) और काल्पीमें मिस्टर ब्रूस इस कामको यहाँ और आसपासके जिलोंमें बड़े पैमाने पर करते थे। ब्रूस साहब रुईकी काश्त भी करते थे और रुई खरीदते भी थे। मालूम होता है कि सबको घाटा हुआ। यह बात मेरे इस प्रदेशमें आनेसे बहुत पहले की है, इस लिए मैं उनकी असफलताके कारणों पर अपनी कोई सम्मति नहीं दे सकता हूँ; परन्तु यदि यहाँके लोगोंका विश्वास किया जाय तो उनकी असफलता व्याप.से भिन्न और कारणोंसे हुई। मथुरा जिलेमें उमरागढ़के एच एच. बैल साहबने भी कोई १४ वर्ष पहले स्वर्गीय जे. थामसन साहब लैफ्टनेन्ट गवर्नरकी प्रार्थना पर अमेरिकाकी रुईके बोने और देशी रुई खरीदनेका काम किया; परंतु उनको सम्भवतः इस काममें नफा नहीं हुआ होगा। आप पूछते हैं कि कौनसा जरिया रुईके खरीदने और इंगलेंड भेजनेका निकाला जाय। इसके लिए मैं राय दूँगा कि आपकी समिति मेंचेस्टरके किसी बड़े कारखानेके किसी मेम्बरको, जिसका नाम ही उसके कामके लिए पूरा पूरा प्रमाण होगा, इटावे भेजे। उन महाशयको चाहिए कि यहाँ पर वे रुईकी खरीदके लिए एक नियमित एजेंसी खोलें और रुईके साफ कराने और दबानेके लिए एक कारखाना कायम करें। कपास खरीद कर अपनी निगरानीमें उसे साफ करावें। एक अच्छे भाफके एंजिनसे १५ प्रति शतक रुईका मूल्य बढ़ जायगा और ५ प्रति शतक श्रममें कम पड़ेगा। यदि ईंधनके मिलनेमें कुछ कठिनाई हुई, जैसी कि सम्भावना है, तो घोड़ों, खच्चरों वगैरह चौपायोंसे काम लिया जाय जैसा देशी रियासतोंमें होता है। इस प्रकार खरीदी और साफ की हुई रुईको दबा कर और बंडल बना कर इंगलेंड भेज देनी

चाहिए। यहाँसे कलकत्ते तक जमुनामें नौकाओं द्वारा जावे। साथमें ही आपका एजेंट यहाँ पर धीरे धीरे अच्छी किस्मकी रुईका भी प्रचार करता रहे। उसे एक अपना छोटासा उम्दा खेत भी रखना चाहिए जिससे यह मालूम होता रहे कि इस तरफकी जमीनमें किस किस किस्मकी रुई उम्दा पैदा हो सकती है और उनके पैदा करनेका सबसे उत्तम और लाभदायक उपाय क्या है तथा बाँटनेके लिए अन्य देशोंका बीज भी जमा रहे और लोगोंको खेतीमें उन्नति देनेके लिए व्यावहारिक शिक्षा भी देता रहे। ज्यों ज्यों पैदावार बढ़ती जायगी त्यों त्यों एजेंट धीरे धीरे हाथकी चरखियोंका भी प्रचार करता जायगा और बहुतसी रुई स्वयं लोगों द्वारा साफ हो जायगी। यदि इटावेमें कारखाना खुल जायगा तो खास इटावेकी पैदावारके सिवाय धौलपुर, आगरा, मथुरा, मैनपुरी, फर्रुखाबाद, कानपुर, जालौन तथा ग्वालियरके उत्तरीय भाग वगैरह सब जगहोंसे यहाँ रुई आने लगेगी। मुझे इसके कहनेमें तनिक भी संकोच नहीं होता कि यदि दो तीन वर्ष तक नगद रुपयोंसे ईमानदारीसे व्यवहार रहा तो यहाँसे २५०००,००० पौंड अर्थात् ३१२५०० मनके करीब साफ रुई हर साल आसानीसे इंगलेंड जा सकेगी और यदि काश्तकारोंको खेतीके लिए रुपया पेशगी दिया गया तो इससे भी कई गुनी रुई मिल सकती है। इस काममें रुपये, समय, संतोष, चातुर्य, उदारता और कार्य-कुशलताकी बड़ी जरूरत होगी; परंतु लाभ भी बहुत होगा। यदि हिन्दुस्तानमें दो, चार ऐसी एजेन्सियाँ खुल गईं तो मुझे विश्वास है कि मैंचेस्टरके व्यापारियोंको हर एक किस्मकी रुई, जो यहाँकी जमीनमें पैदा हो सकती है, बहुतायतसे मिल सकती है। यहाँ अच्छीसे अच्छी किस्मकी रुई पैदा हो सकती है, यह बात समय और अनुभवसे ही मालूम हो सकती है; परंतु यदि नई किस्में न भी बोई जायँ तो भी वर्त्तमानमें जो रुई होती है उसमें बहुत कुछ उन्नति हो सकती है। मैंने स्वयं दो बार यह करके देखा है। यदि यह मान भी लिया जाय कि जिस किस्मका नमूना भेजा है उससे अच्छी रुई यहाँ प्रायः नहीं पैदा होती, तो भी जिस प्रकारसे मैंने काम करनेको बतलाया है उसमें लाभ रहेगा। वर्त्तमानमें काश्तकार जो कुछ कपास उसके यहाँ पैदा होता है उसे चरखोंमें ओंट कर (जिससे सूत खराब हो जाता है) अपने गाँवके छोटेसे बनियेको बेच देता है। बनिया किसी बड़े देशी व्यापारीके

हाथ बेच देता है। व्यापारी बंडल बना कर, (बिना मशीनके बंडल ऐसा खराब बनता है कि आगे चल कर फिर बाँधना पड़ता है) कभी कभी सीधे कलकत्ते भेज देता है, नहीं तो प्रायः मिर्जापुर भेजता है। वहाँ भी वह एक या दो व्यापारियोंके हाथमेंसे निकलता है। यदि सीधी एजेंसी खोल दी जाय, जिसके द्वारा रुईको इस प्रकार साफ कराया जाय, कि सूतको हानि न पहुँचे और तुरन्त बँधवा कर सीधी इंगलेंड भेज दी जाय तो बहुत लाभ होगा। जब वर्त्तमान अवस्थामें भी पाँच छह आदमियोंको काफी लाभ होता है तो उस समय तो बहुत ही लाभ होगा इसमे कोई सन्देह ही नहीं।

कची रुई अर्थात् कपासका जो नमूना भेजता हूँ उस किस्मका कपास यदि बहुत ज्यादह खरीदा जाय, अच्छी कलों द्वारा साफ कराया जाय, ठीक तौरसे बँधवाया जाय, जमुनासे किश्तियोंमें भेजा जाय और कलकत्तेमें जहाज पर लदवाया जाय तो औसत खर्च मेरे हिसाबसे साढ़े दस रुपये मन पड़ेगा। अब प्रश्न यह है कि कलकत्तेसे इंगलेंडका क्या किराया पड़ेगा और मेंचेस्टरमे जाकर उसका क्या मूल्य होगा।

यह बात भी मैं लिखे देता हूँ कि यहाँ रुईके भावमे बड़ा उतार चढ़ाव रहता है। इसका कारण खास कर यह है कि माँगका कोई निश्चय नहीं। यदि यहाँ पर कोई नियमित एजेंसी होगी तो फिर भावमें कभी इतनी गड़बड़ न हो।

१३–वर्तमान ढंगके अनुसार इटावेमें साफ रुईका असली भाव सात रुपया बारह आने मनके करीब है, परंतु यदि खरीद कर घोड़ों अथवा भापके द्वारा बड़े पैमाने पर कलोंसे साफ कराई जावे तो अच्छी होनेके सिवाय भावमें भी ॥) मन कम पड़ेगी। अब ॥) मन बँधवाई लगती है और फिर भी खराब बँधती है। यदि अच्छी मशीनसे दबा कर बँधवाई जाय जो इंगलेंड तक उसी हालतमें चली जाय, रास्तेमें कहीं भी खोलनेकी जरूरत न पड़े और खर्च भी केवल ।) मन पड़े और साथमें अच्छी बँधी होनेके कारण किरायेमें भी ॥) मन किफायत हो।

१४–रुईकी एजेंसीके लिए इटावेकी स्थिति बड़ी ही अच्छी है। नक्शेके देखनेसे आपको मालूम होगा, यह शहर जमुनाके किनारे पर है और इस कारण यहाँसे कलकत्ते तक सीधा और सस्ता रास्ता है। इसके एक तरफ जमुना और

चम्बलको पार करती हुई, जिन पर मैंने किश्तियोंके पुल लगवा दिये हैं, ग्वालियरसे सड़क आती है और दूसरी तरफ फर्रुखाबादसे आती है। कलकत्ता, इलाहाबाद, आगरा, दिल्ली, पंजाबको रेलगाड़ी भी इटावे होकर जाती है और यद्यपि राजमहल और इलाहाबादके बीचकी लाइनके बिल्कुल पूरी होनेमें सम्भवतः दो साल लगेंगे; परंतु इलाहाबाद और आगरेका बीचका टुकड़ा सालभरसे भी कममें हो जायगा। इसके अतिरिक्त गत तीन वर्षमें मैंने लगभग ४०० मीलकी गाड़ीकी उम्दा सड़कें जिलेके चारों तरफसे इटावे तक बनवा दी हैं। अब माल लाने-लेजानेके लिए केवल एक ही बातकी जरूरत है और वह यह हैं कि उम्दा किस्मकी किश्तियाँ बनाई जायँ। मेरी रायमें वे लोहेकी होनी चाहिए और उनमे अलग अलग हिस्से हों। जिस प्रकारकी किश्तियां आजकल चलती हैं उनके डूबने और जलनेसे भारी नुकसान होता है।

१५–किसानोंके पास मामूली बीज होता है। यदि वास्तवमें उन्हें अच्छा बीज दिया जाय तो कितने ही खुशीसे खरीद लेंगे। पहले तो बिक्री थोड़ी जरूर होगी; परंतु यदि उन्हें सफलता हो गई तो फिर बहुत ज्यादा होगी। बात यह है कि जहाँ तक मेरा अनुभव है, हिन्दू लोग अंग्रेजोंकी तरह अच्छी सलाह मानने और अच्छा ढंग ग्रहण करनेके लिए बिल्कुल तैयार रहते हैं, यदि उन्हें व्यवहारमें लाकर दिखला दो कि इसमें लाभ है। यही कसौटी है। यदि किसी उम्दा बीजसे किसी कारण-वश उन्हें इतना लाभ न हो जितना उन्हें उससे होता है जो पहलेसे बोते आये हैं तो दो चार बार परिक्षा करनेके बाद वे उसे छोड़ देंगे; परंतु यदि उससे अधिक लाभ होगा तो आप विश्वास रखिए वे उसीको ग्रहण कर लेंगे। विदेशीय बीजकी वास्तवमें सफलताके लिए एक छोटीसी व्यावहारिक पुस्तककी जरूरत है जो इस देशमें और इस प्रान्तकी आवश्यकताके अनुसार हो। ... ...
ऐसी पुस्तक उस विषयमें, जिसका मैंने १२ वें पैरेमें जिक्र किया है, चंद वर्ष तक अनुभव प्राप्त करके लिखी जा सकती है।

१६–यहाँ पर वर्तमानमें केवल देशी चरखे ही काममें लाये जाते हैं। गट्ठा बाँधनेके लिए कोई मशीन नहीं है। बहुत ही पुराने और सादे तरीकेसे गट्ठे बाँधे जाते हैं।... ... ...

ऐसे हर एक गट्ठेमें प्रायः ३ मन ५ सेर रुई आती है। छोटा गट्ठा भी बाँधा जाता है जिसका वजन १ मन ३५ सेरके करीब होता है।

१७—चरखेसे कपास ओटनेकी मजदूरी यहाँ पर ३ पैसके करीब है। जिस आदमीको ३ पैस अर्थात् एक आना मिलता है वह दिन भरमें ५ सेर कपास ओट देता है। बिनोला कपास ओटनेकी मजदूरीसे लगभग १० सैकड़ा अधिक दाममें बिकता है।

१८—कची रुई (कपास) तथा साफ की हुई रुई दोनोंके नमूने भेजे जाते हैं।

१९—मेरे पास कोई बीज नहीं है। इस साल मैंने थोड़ासा बीज कलकत्ते-से मँगाया था। अगर इसमे सफलता हुई तो मैं थोड़ासा अगले साल बाँट सकूँगा; परंतु यदि आपकी समिति मुझे अव्वल दरजेका बहुत ज्यादह वजनमें बीज दे तो में अपने जिलेमे बहुत सी जगहोंमें उसे बुवाऊँगा और अगर उसमें सफलता हुई तो फिर बहुत ज्यादा उसका प्रचार हो सकेगा।..............

२०—इस जिलेके रुईके बुने हुए कपड़ेके नमूने भी भेजता हूँ, उनका मूल्य तथा उनके विषयमें अन्य आवश्यक बातें उन चिटों पर लिखी हुई हैं जो उन पर लगी हैं।

२१—इस जिलेमे खराब जमीन बहुत ही कम है और जो है वह प्रायः बिल्कुल वंजड़ और खेतीके अयोग्य है।

२२—इस जिलेकी तिजारतमें किस तरह अधिक उन्नति हो सकती है इस विषय पर अब समयाभावसे विचार नहीं कर सकता।................. ...

यह मैं आपसे फिर कहूँगा कि जमीन और आबहवामें इस प्रांतमें और न केवल मिससिपीकी घाटीमें किंतु हिंदुस्तानके दक्षिणीय और मध्य भागमे बड़ा अंतर है। न्यू आरलियनकी रुईमें, चाहे वह अमेरिकाके ढंग पर बोई जाय, चाहे हिंदुस्तानी ढंग पर, अब तक सफलता जरूर हुई है, परंतु बहुत थोड़ी। यह किसे मालूम है कि दो किस्मोंके मेलसे अथवा किसी नये ढंगसे बोनेसे कितनी सफ-लता होगी। इसके विपरीत यदि यह मान भी लिया जाय कि अमेरिकाके बी-जमें यहाँ कदापि सफलता नहीं हो सकती तो यह असम्भव है कि अफरिका

अथवा मिश्र देशके बीजमें सफलता हो। आवश्यकता अनुभवकी है। यदि किसी योग्य अनुभवी, शिक्षित मनुष्यकी देख-रेखमें छह वर्ष तक अच्छे ढंगसे खेती की जाय तो रूईकी फादतके विषयमें सब बातें तय हो जायँ। यदि आपकी समिति वास्तवमें इस अनुभवके प्राप्त करनेकी इच्छा रखती है और यहाँ तथा अन्य जगहोंकी रूईकी किस्म और पैदावारको बढ़ाना चाहती है तो उसे स्वयं इस भारको अपने ऊपर उठाना चाहिए। वह सरकारसे प्रार्थना छोड़ दे और जो कुछ करना चाहे खुद अपने खर्चसे करे। अंतमें उसे यह ढंग सबसे सस्ता और उम्दा मालूम होगा।

मुझे इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं कि जिस प्रकारका साधन मैंने १२ वें नम्बरमें बतलाया है यदि उस प्रकारका साधन कोई काममें लायगा तो मेरी उससे पूरी सहानुभूति होगी और जिस किस्मकी भी सलाह या सहायता मैं दे सकूँगा उसके लिए सदैव तैयार रहूँगा।

मैकार्थी किस्मकी रूईसे बिनौलोंके निकालनेकी कलें यहाँ तुरंत खरीद ली जायँगी यदि लोगोंको यह विश्वास हो गया कि इनसे काम चल जायगा। अगर आप एक कल नमूनेके तौर पर पूरी पूरी हिदायतोंके साथ भेज देवें और मैं लोगोंको यह दिखला सका कि इसमें लाभ है, तो मेरे खयालसे एक वर्षमें ही ५०० कलें बिक जायगीं।

आपका,

ए. ओ. ह्यूम।

परिशिष्ट २ ।

ह्यूम साहबके विषयमें लोकमत ।

ह्यूम साहबकी मृत्युके समाचार पाते ही भारतवासियोंने राज्यके प्रत्येक भागमें शोक सभायें करना और समाचार-पत्रों द्वारा अपना हृदयोद्गार प्रगट करना प्रारम्भ कर दिया । वेस्ट-मिनिस्टरमें जो सभा हुई उसमें मिस्टर गोखलेने ह्यूम साहबके गुणोंका बखान करते हुए कहा कि ह्यूम साहबकी गणना संसारके उन महा पुरुषोंमें है जो ईश्वरके आदेशानुसार इस जगत्में मानव-जातिका उद्धार करनेके लिए समय समय पर प्रादुर्भूत होते हैं । उनकी आवाजने शताब्दियोंकी गाढ़ निद्रामें अचेत सोते हुए भारतवासियोंको जगा कर कर्तव्य-पथ पर लगा दिया । उनका नाम राष्ट्रीय इतिहासमें सबसे ऊँचा लिखा जायगा । ह्यूम साहबके हृदयमें भारतवर्षसे सच्चा प्रेम था और वे न्याय, और स्वाधीनताको हृदयसे प्यार करते थे । यही कारण था कि एक ऊँचे राज्य-पदसे पृथक् होकर उन्होंने अपना उच्च और अमूल्य जीवन भारतकी न्याय और स्वाधीनता और आत्म-गौरवके मार्ग पर लेजानेमें लगाया और भारतवासियोंको राष्ट्रीयताके मार्ग पर चलनेका पाठ पढ़ाया ।

इंडियन-नेशनल-कांग्रेसके संयुक्त महामंत्री मिस्टर डी० ई० वाच्छाने इंडियन रिव्यू (Indian Review) में लिखा कि भारतवासियों पर ह्यूम साहबका स्वभावतः अद्भुत प्रभाव पड़ता था । उनमें आत्मबल और बुद्धिबल इतना था कि जिन लोगोंको उनसे मिलने और उनके पास रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है वे उनको उस समयके वसिष्ठ वा चाणक्य समझते थे । वे अत्यन्त उदार और धार्मिक विचारोंसे प्रेरित होकर भारतवासियोंके पक्षका समर्थन करते थे । लोगों पर प्रभाव डालना, उनमें शक्तिका संचार करना और उन्हें शिक्षा देना ये बातें एक ह्यूम साहबहीको मालूम थीं । यद्यपि वे स्वर्गको पधार गये हैं, हमारे नेत्रोंसे अदृश्य हो गये हैं तथापि हमें सिखला गये हैं कि चाहे उड़नेके लिए हमारे पास पर भले ही न हों किंतु चढ़नेके लिए पैर अवश्य हैं जिनसे हम धीरे धीरे समयकी ऊँचीसे ऊँची चोटियों पर चढ़ सकते हैं ।

श्रीयुत सुरेन्द्रनाथ बनर्जीने कलकत्तेमें एक आम सभामें अपने व्याख्यानमें कहा कि ह्यूम साहबने भारतवासियोंके राजनीतिक उत्थानके लिए बीमारी तकमें निःस्वार्थ भावसे एकाग्रचित्त होकर कार्य किया है। इसके कारण उनका नाम भारतवासियोंके हृदयमें चिरस्मरणीय रहेगा और भारत संतान सदैव हृदयसे उनका आभार मानती रहेगी। भारतके इतिहासमें उनका नाम भारतीय राष्ट्रके निर्माण करनेवालों और भारतमें जातीय संगठनको बढ़ानेवालोंमें स्वर्णाक्षरोंसे अंकित किया जायगा। उन प्रसिद्ध अंग्रेजोंमें, जिन्होंने भारतमें ब्रिटिश राज्यकी स्थापना की और भारतवासियोंके हृदयोंमें उच्चासन प्राप्त किया, ह्यूम साहबका नाम सबसे ऊँचा है। भारतके सुनहरे इतिहासमें उनका नाम मेटकाफ और बैंटिक तथा अनेक उदार दयालु पादरियोंके उत्तराधिकारियोंमें अंकित है, जिन्होंने भारतमें शिक्षा-प्रचारका बीज बोया था और जिसका उत्तम फल आज हम आस्वादन कर रहे हैं।

डाक्टर रासविहारी घोषने उसी सभामें अपना दृढ़ विश्वास प्रगट किया कि जब अंधे क्रोध और व्यर्थके झगड़ोंकी आवाज दब जायगी तब ह्यूम साहबका नाम इंगलेंडके उन सच्चे शुभचिंतकोंमें मुख्य रूपसे लिये जाने योग्य है जो इस बातको भली भाँति समझे हुए हैं कि इंगलेंडने भारतकी ऐसी भारी जिम्मेवारी अपने ऊपर ले रक्खी है कि उसे एक धार्मिक जाति ही निवाह सकती है। ह्यूम साहबकी समाधि संम्पूर्ण भारत है और उनका सबसे अधिक काल तक रहनेवाला स्मारक किसी पाषाण या धातुका नहीं बन सकता। किंतु वह उन लोगोंके हृदयोंमें बनेगा जिनके लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पण कर रक्खा था और जिनके हेतु उन्होंने अपने प्राणों तकको न्योछावर कर दिया।

माननीय पंडित मदनमोहन मालवीयने इलाहाबादकी सभामें कहा कि जिन लोगों पर ह्यूम साहबका प्रभाव पड़ा, उनको उन्होंने अपनी प्रकृति, सार्वजनिक सहानुभूति और सच्चाईसे उत्साहित और शिक्षित किया। उन्हें इस बातका दृढ़ श्रद्धान था कि सत्य और न्यायकी अंतमें जय होती है। इसी श्रद्धानके बलसे उन्होंने लोगोंको उठा कर कार्य-क्षेत्रमे लगाया। उनकी आत्मा वास्तवमें एक महान आत्मा थी। वे अत्यन्त सभ्य अंग्रेजोंमेंसे थे। वे उन महात्माओंमेंसे थे जिन्होंने अपने भाइयोंके हितके लिए बड़े बड़े कामोंको करनेके लिए जन्म लिया। ह्यूम साहब न्याय और

स्वाधीनताके प्रेमी थे और सम्पूर्ण मनुष्योंके साथ समान व्यवहार करना चाहिए, इस बातके पक्षपाती थे। वे अन्याय और अत्याचारको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे और सच्चे दिलसे मनुष्य मात्रके हितकी वाञ्छा रखते थे।

श्रीयुत माननीय आर. एन. मधोलकरने अमरावतीमें कहा कि ह्यूम साहब ब्रिटिश शासनके सच्चे मित्र और दृढ़ स्तम्भ थे। संकुचित हृदयके मतिमंद मनुष्य उनके समझनेमें भूल करते हैं और इसी कारणसे उनकी निन्दा करते हैं। ह्यूम साहबने पढ़े लिखे भारतवासियोंकी मानसिक तथा अन्य शक्तियोंको भयंकर मार्गमे प्रवाहित होनेसे रोक कर सन्मार्ग पर लगाया है और भारतवासियोंके प्रति उनकी अपार दया और सहानुभूतिने भारतवासियोंके हृदयोंमें ब्रिटिश न्यायका श्रद्धान कराया है। वे बड़े दूरदर्शी और सभ्य अंग्रेज थे और भारतके सच्चे मित्र और परोपकारी थे। नहीं नहीं, इससे भी अधिक थे। उनकी गणना उन महात्रर्षियोंमें है जो समय समय पर लोगोंको उत्तेजित करनेके लिए अवतार धारण किया करते हैं। उनके मरनेसे भारतने एक ऐसे सच्चे नेता, शिक्षक और पथ प्रदर्शकको खो दिया है जिसका प्रत्येक शब्द और प्रत्येक कार्य प्रेम और बुद्धिमानीसे पूरित था।

इंगलैंड एक सच्चे राजभक्त, बुद्धिमान और दूरदर्शी राजनीतिज्ञको खो बैठा है और ब्रिटिश राज्यका एक राजनीतिक नागरिक जाता रहा है और मनुष्य जातिसे सत्य और न्याय आदि आदर्श गुणोंका खोजी उठ गया है।

भारतके समाचार-पत्रोंने भी स्वर्गीय महात्मा ह्यूमके गुणोंका एक स्वरसे गान किया। कलकत्तेके बंगाली पत्रने लिखा कि यह यश ह्यूम साहबको ही प्राप्त है कि उन्होंने सार्वजनिक जीवनकी तितर बितर हुई शक्तियोंको मिला कर एक ऐसी संस्था स्थापित कर दी कि जिसका उद्देश्य देशमें सार्वजनिक भावका उत्पन करना और राष्ट्रीय जीवनका निर्माण करना है। पहली कांग्रेस, जो १८८५ ई० में बम्बईमें हुई थी, वह मुख्य मुख्य नेताओंकी एक छोटासी सभा थी जिसके मुख्य संचालक ह्यूम साहब थे, परंतु वही सभा उस नेशनल कांग्रेसकी जननी हुई जिसने गत २५ वर्षोंमें देशकी राजनीतिक अवस्थामें हलचल डालदी है। आज उस व्यक्तिकी मृत्यु पर, जिसने भारतवासियोंके राजनीतिक हितोंकी वृद्धि करनेमें इतना योग लिया है, शिक्षित भारतवासियोंके हृदयोंसे शोक भरी आहें निकल रही हैं।

अमृतबाजार पत्रिकाने लिखा कि ह्यूम साहबका चरित्र अत्यन्त विशुद्ध और पवित्र था। शायद ही कहीं दुनियाँमें उनके समान किसीका हो। वे बिना किसी इच्छाके भारतकी निःस्वार्थ सेवा करते थे।

इंडियन मिरर (Indian mirror) ने लिखा कि भारतमें राष्ट्रीय जीवनका प्रादुर्भाव पहले पहल ह्यूम साहब तथा उनके साथियोंनें किया। उन्होंने ही लोगोंमें जोश पैदा किया और भारतवासियोंको राजनीतिक स्तत्त्व प्राप्त करनेका मार्ग बतलाया। नियम और शांतिके साथ अपनी उन्नति किये जाओ, यह उनके राजनीतिक मतका पहला सिद्धात था। शंका और कठिनाईके समय वे अपनी आशापूर्ण सम्मतिसे लोगोंको प्रसन्न और उत्साहित करते रहते थे।

कामेड नामक एक मुसल्मानी पत्रने लिखा कि ह्यूम साहब इंडियन सिविलसर्विसके उन इने गिने महात्माओंमेसे थे जिन्होंने अपने जीवनको भारतवासियोंकी निष्काम सेवाके अर्थ अर्पण कर दिया और अपनी बढ़ती और उन्नतिकी आहुति देकर भारतके सामाजिक और राजनीतिक उत्थानके पक्षका निर्भय होकर समर्थन किया। भारतवासियोंको उठानेमें जिस उदारतासे ह्यूम साहबने काम किया यद्यपि उसके कारण उन्हें अपने उच्च पदकी आहुति देनी पड़ी तथापि भारतवासियोंने उन्हें अपने हृदयमें बड़े मानके साथ स्थान दिया। जनताको उन पर इतना भरोसा था कि गदरके अंधकारमय समयमें भी उनकी दया और न्याय पर सबको दृढ़ विश्वास था। उनका जीवन आज कल हमारे अंग्रेज अफसरोंके लिए आदर्श रूप होना चाहिए।

इलाहाबादके लीडर पत्रने लिखा है कि इस महान और प्राचीन भारत-भूमिके करोड़ों निवासियोंको स्वर्गीय महात्मा ह्यूमके वियोगसे जितना दुःख और शोक है उसको शब्दोंमें प्रगट नहीं किया जा सकता। ह्यूम महाशयने एक अंग्रेज और इंडियन-सिविल-सर्विसके मेम्बर होने पर भी पक्षपातको छोड़ कर भारतमें कांग्रेसकी स्थापना की, जिस पर प्रत्येक भारतवासीको अभिमान है। भारतमें जो आज नवीन जीवन देखनेमें आ रहा है, भारतवासियोंमें जो स्वजातीय अभिमान पाया जाता है जिसका कांग्रेस स्थापित होनेसे पहले नाम भी नहीं था, भारतवासियोंको जो सभ्य संसार उच्च दृष्टिसे देखता है, और वे उस दिनके देखनेकी आशा रखते हैं कि जब उनके देशको ब्रिटिश राज्यके अधीन अन्य कालोनियों-

के समान स्वराज्य मिल जायगा, इन सब बातोंका यश कांग्रेसको प्राप्त है और कांग्रेसको ह्यूम साहबने स्थापित किया, अतएव ह्यूम साहब ही इन सब बातोंके यशके भागी हैं। एलन ह्यूम और विलियम वेडरबर्नके नाम भारतीय हृदय पर सदैव अंकित रहेंगे। ये दोनों महाशय पूजनेके योग्य हैं। इन्होंने सर्व प्रकारके स्वार्थको तिलांजलि देकर प्राचीन भारत-भूमिके उत्थानके लिए उत्साह और दृढ़ताके साथ कार्य किया और अनेक विघ्नोंके आने पर भी ईश्वर पर इस बातका भरोसा रक्खा कि किसी उत्तम कार्यमें असफलता नहीं होती।

लोहोरके ट्रीब्यून (Tribune) ने लिखा कि ह्यूम साहबने कांग्रेसकी उन्नतिके निमित्त हिन्दुस्तानके समस्त नेताओंसे पत्र-व्यवहार किया और जी खोल कर रुपया खर्च किया। समाचार-पत्रोंके लिए उन्होंने महत्त्वशाली लेख लिखे, उच्च कर्मचारियोंसे पत्र-व्यवहार किया, वाद-विवाद किया और छोटी छोटी पुस्तकें लिखीं। वे कभी मेहनत करनेसे नहीं थके, उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा नहीं था, तो भी जिस कार्यको उन्होंने अपने हाथमें ले रक्खा था उससे वे एक क्षणके लिए भी नहीं हटे। उनका उद्देश्य निश्चित था। उनमें एक अवतार जैसा तेज, धर्मके लिए पागल हो जानेवाले जैसा उत्साह था; परंतु एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञकी तरह वे अपने जोशको अपने वशमें किये, हुए थे। वे चाहते तो लेफ्टिनेंट गवर्नर बन जाते; परंतु उन्होंने शांतिसे उन्हीं लोगोंके लिए काम करनेमें संतोष किया, जिनमें वे इतने दिन तक रहे थे। अब जब कि वे स्वर्ग धामको पधार गये हैं, हम केवल अपनी टूटी फूटी भाषामें उनके उन समस्त कार्योंके लिए, जो उन्होंने सच्ची भक्ति और दृढ़तासे हमारे और हमारे देशके लिए किया, उनका हृदयसे आभार मानते हैं।

पंजाबीने लिखा है कि ह्यूम साहबके नामको घर घरमें क्या बूढ़े और क्या जवान सब कोई प्रेम और आदरसे लेते थे। यद्यपि वे एक उच्च कर्मचारी थे और उन्होंने गदरके समय बहुत कुछ सरकारी काम किया था तथापि लाखों मनुष्य उनको भारतमें जातीयताके भावका उत्पन्न करनेवाला मानते हैं... तनिक इस बात पर विचार करो कि जो मनुष्य पहले भारत गवर्नमेंटका मंत्री रह चुका था, वही पीछे भारतवासियोंकी तितर बितर हुई शक्तियोंको एकत्रित

करने और उनमें जातीयताके आंदोलनको उस समय उन्नति देनेमें लगा हुआ था, जब कि इलवर्ट बिलके विरोधकी ध्वनि पूरे तौरसे, बंद नहीं हुई थी। उनके मार्गमें कितनी ही कठिनाइयाँ उपस्थित हुईं, उन्होंने सदा दृढ़तासे काम किया। विरोध या आपत्तिसे, जिसका पग पग पर उन्हें सामना करना पड़ा, वे कभी भयभीत नहीं हुए।

मद्रासके हिंदू पत्रने लिखा कि ह्यूम सबसे पहले अंग्रेज थे जिन्होंने इंगलेंड जानेके बाद भारत और भारतवासियोंसे प्रेम और सहानुभूति रक्खी। तेंतीस वर्ष तक भारतवासियोंके साथ रहनेके कारण उनके हृदयमें भारतसे इतना गाढ़ प्रेम हो गया था कि वे औरोंकी नाईं इंगलेंड जाकर भारतको नहीं भूले। उन लोगोंमें, जिन्होंने अपने अविश्रांत श्रम, अथक उद्योग और अतुल्य प्रभावसे कांग्रेसको जन्म दिया और अनेक कठिनाइयों और आपत्तियोंको झेलते हुए उसकी बढ़तीकी ओर रात दिन ध्यान रक्खा, ह्यूम साहबका नाम चिरकाल तक अत्यंत और कृतज्ञताके साथ लिया जायगा।

इंडियन पेट्रियाट (Indian Patriot) ह्यूम साहबको भारतवासियोंका पिता, कांग्रेसका पिता समझता था। उसने लिखा कि यदि कभी ह्यूम साहबके जीवनमें हर्ष और आनंदमें बाधा पड़ी अर्थात् कभी उन्हें कुछ विषाद हुआ तो इसका कारण यह था कि उन्हें भारत और भारतवासियोंकी अधिक चिंता रहती थी। उनके प्रति हमारे अत्यंत गाढ़ प्रेम और आदरके भाव होने चाहिए और हमें उचित है कि हम उन भावोंको उत्तम रीतिसे प्रकाश करें। हमें उस महात्माके लिए स्थान स्थान पर अपनी प्रीति और भक्तिके स्मारक बनाने चाहिए, जिससे हमारी संतान यह देख सके कि किस प्रकार हमने उस महापुरुषकी स्मृतिको सुरक्षित रक्खा, जिसने भिन्न जातिके और भिन्न देशके होने पर भी, अपनेको बिल्कुल हममें मिला लिया और भलाई और उन्नतिके लिए हमारे उद्देश्योंको जिसने अपने उद्देश्य बना लिये।

वेडनेसडे रिव्यू (Wednesday Review) ने लिखा कि ह्यूम साहब भारतसे जितना प्रेम रखते थे उतना आज तक किसी अंग्रेज राजनीतिज्ञने प्रेम नहीं किया। इसीका परिणाम था कि लाखों भारतवासी उनके अनन्य भक्त थे।

उस जोश और उत्साहको कौन भूल सकता है जो उन्होंने १९ वर्ष पहले इस देशमें आकर यहाँके लोगोंमे फूँका था। जिस प्रकार एक विजेता एक स्थानको विजय करके दूसरे स्थानको बढ़ता है उसी प्रकार जब ह्यूम साहब कांग्रेसके कामके लिए दौरा कर रहे थे तो जहाँ जाते थे वहाँके लोगोंको अपने प्रेमसे मोहित कर लेते थे। उन्होंने इस बातको दिखला दिया कि एक अकेला अंग्रेज भारतवासियोंका इंगलेंडसे निकट तक सम्बंध कराने, और भारतवासियोंके हृदयमें ब्रिटिश शासनके प्रति भक्तिको गहरी बनानेके लिए कितना काम कर सकता है। ह्यूम साहबकी शिक्षायें इतनी बहुमूल्य क्यों थीं ? इसका कारण यह था कि वे सच्चे, सरल और निष्कपट थे। उन्होंने कभी भारतवासियोंकी त्रुटियों और उनके दोषोंको ढकने या उन पर रंग चढ़ानेका उद्योग नहीं किया।

मद्रास स्टेंडर्ड (Madras Standard) की उनके विषयमें यह सम्मति थी कि वे पिछली शताब्दिके एक बहुत बड़े ऐंगलो इंडियन थे। यदि उनमें पैतृक *विचार-शीलता, निरंतर अभिरुचि, असाधारण उद्योग, समय-सूचकता* और *सम्मति* और आत्म समर्पण न होता तो इंडियन-नेशनल-कांग्रेस रूपी नौका कदापि उन चट्टानोंसे न निकल सकती जो उसके मार्गमें बाधक थीं। अंत समय तक वे सच्चाई और ईमानदारीके साथ पतवाड़ पर जमे रहे और उनको कांग्रेसकी शक्ति और उपयोगिताका दृढ़ विश्वास बना रहा। वे एक ऐसी भारतीय राष्ट्रके निर्माणकी आशा लगाये हुए थे जो सुखी, संतोषी और प्रबल होगा और ब्रिटिश राज्यके लिए शक्तिका स्थम्भ होगा। निःसन्देह मरते समय उन्हें इस बातका संतोष था कि जिस कामको उन्होंने अपने जीवनका उद्देश बनाया था, वह शीघ्र ही फलीभूत होनेवाला है अर्थात् जो बीज उन्होंने बोया था वह शीघ्र फल लानेवाला है।

पूनाके मराठा पत्रने लिखा कि ह्यूम साहबको भारतवासी इस कारणसे याद नहीं करेंगे कि उन्होंने एक उच्च कर्मचारी रह कर भारतको कितना लाभ पहुँचाया; परंतु इस कारण कि उन्होंने राज्य-कार्यसे निर्वृत होकर कांग्रेस जैसी भारतीय राष्ट्र-संस्था स्थापित की। उन दिनोंमें ह्यूम साहबके सिवाय और कोई व्यक्ति इस कामको ह्यूम साहब जितना नहीं कर सकता था।

गुजरातीने लिखा कि, ईश्वर उन्हें राजनीतिक कार्यके लिए जीवित रखना चाहता था और यह बात सर्व मान्य है कि उन्होंने इस महान कार्यको उत्तमतया

सम्पादन किया। जब सर विल्यम वेडरबर्न जैसे शात परिणामी सच्चे धार्मिक ईसाई और महात्मा भी अपने देशवासियोंके आक्षेपोंसे नहीं बचे, तब इसमें क्या आश्चर्य है कि ह्यूम साहब पर, जो इतने जोशीले और दबंग स्वभावके मनुष्य थे, उन लोगोंने तीव्र आक्षेप किये और गालियाँ दीं; परंतु ह्यूम साहबने जो अपने लिए निश्चित कर लिया था उससे वे विचलित नहीं हुए।

हिन्दीपंचने लिखा है कि वर्तमान भारत-भूमिके राजनीतिज्ञ ऋषिने अपने प्यारे बच्चेको, जो अब कुछ बड़ा हो चला है, इस देशकी सेवा करनेके लिए छोड़ कर समाधि लगाली है। उन्होंने इस बालककी पालनेमें रक्षा की है और बड़े आनंदसे उसे हँसते खेलते देखा है। उन्होंने उसे क्रमश बढते हुए भी देखा है। अब उसमें इतनी बुद्धि और बल हो गया है कि वह शख बजा कर बृटानियाको जगा सकता है और अपने वास्तविक स्वत्त्वोंकी याचना कर सकता है.........। यह सब गौरव उसके पिताको प्राप्त है। आज भारत उस महापुरुषके लिए रो रहा है; परंतु मातृ भूमिके उदार हृदयमे उसके लिए स्थायी स्थान है।

बिहारीने लिखा कि ह्यूम साहबकी समाधि पर भारतवासियोंको अपने सब भेद भाव दूर कर देने चाहिए और उनके प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करनेके लिए सबको मिल कर एक मंडली बना लेनी चाहिए।........................।

ह्यूम साहबकी आत्मा १९१२ ई० की कांग्रेस पर प्रेमसे चक्कर लगाती रहेगी। उनके लिए कोई भी स्मारक इतना प्रिय नहीं होगा जितना यह कि सब मिल कर देशकी उन्नतिके लिए उद्योग करें और कांग्रेसकी सत्यता और उच्चताको सुरक्षित रक्खे।

कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, इलाहाबाद, कानपुर, बनारस, नागपुर, बाँकीपुर, पूना, अमरावती, यवतमाल, लखनऊ, रायबरेली, मैनपुरी, मेरठ, इटावा, गोरखपुर, कुड़ापा, बेजवाड़ा, बेहरामपुर, नंदपाल, त्रिचनापल्ली, बपाटला तथा अन्य अनेक स्थानों पर ह्यूम साहबकी स्मृतिमे शोक-सभायें की गईं और सबने प्रायः एकसे प्रस्ताव पास किये। कांग्रेसके मंत्रियोंने जो शोक-सूचक तार सर विलियम वेडरबर्नके पास भेजा उसमें निम्न लिखित शब्द थे।

"भारतवासी ह्यूम साहबके वैकुंठ होने पर बड़ा शोक करते हैं। उनके मरनेसे देशका एक ऐसा सच्चा और सहानुभूति रखनेवाला पिता जाता रहा है जिसकी

कोई भी कभी बराबरी नहीं कर सकता, और कांग्रेसका सबसे बड़ा प्रेमी और जन्म-दाता उठ गया है। उसने अपने अद्वितीय साहस, अविश्रांत-श्रम और दृढ़ विश्वाससे भलाई और बुराईके बीचमें लोगोंकी सामाजिक और राजनीतिक उन्नतिके लिए उद्योग किया और उसका फल भी उसने अपने जीवनमें ही देख लिया। यद्यपि यह बात असम्भव है कि भारतवासी उसकी निःस्वार्थ सेवाका बदला चुका सकें तथापि भारतकी संतान पीढ़ी दर पीढ़ी उसका नाम सदैव प्रेम और कृतज्ञताके साथ लेती रहेगी और उसके विषयमे यह मानती रहेगी कि यद्यपि वह अंग्रेज था तथापि भारतवासियोंके विचारोंसे सच्ची और स्थायी सहानुभूति रखता था।"

कांग्रसने अपने २७ वें अधिवेशनमें, जो २६, २७, २८ दिसम्बर सन् १९१२ को बाँकीपुरमें हुआ था, ह्यूम साहबकी मृत्यु पर निम्न लिखित प्रस्ताव पास किया —

"यह कांग्रेस अपने पिता और जन्म-दाता एलन आक्टेवियन ह्यूमकी मृत्यु पर अत्यंत शोक प्रगट करती है। उन्होंने स्वार्थकी अलौकिक आहुति देकर जीवन पर्यंत देशकी सेवा की और इसके लिए भारत उनका हृदयसे कृतज्ञ है। उनकी मृत्युसे भारतीय उन्नति और सुधारके काममें ऐसी हानि पहुँची है कि उसकी पूर्ति नहीं हो सकती।"

परिशिष्ट ३।

ह्यूम साहबका इटावे पर ऋण।

(३१ अगस्त सन् १९१२ ई० के लीडरमें इटावा निवासी श्रीयुत जोरावर-सिंह निगम म्युनिसिपल कमिश्नरका उक्त शीर्षकका एक लेख प्रकाशित हुआ था। उसीका अनुवाद नीचे दिया जाता है। इससे प्रगट होता है कि ह्यूम साहबने इटावेमें कैसे कैसे काम किये।)

जिन लोगोंका इटावेसे सम्बन्ध नहीं है वे इस बातको नहीं समझ सकते कि इस नगर और जिलेमें ह्यूम साहबके नामका क्या और कितना महत्त्व है। अतः उनके शासन-कालकी प्रसिद्ध प्रसिद्ध बातोंका संक्षेपमें वर्णन करनेसे केवल पाठकोंका मनोरंजन ही न होगा किंतु उनको यह भी मालूम हो जायगा कि उन्होंने राजनीतिक नेता होनेसे बहुत काल पहले योग्य और प्रजा-प्रिय शासक रह कर कितना नाम और सम्मान प्राप्त कर लिया था।

इटावेका इतिहास उनके नामसे कभी पृथक् नहीं हो सकता। यहाँके निवासियोंके दिलोंमें सदा उनकी स्मृति रहेगी। उनकी उमर मुश्किल से २६ वर्षकी होगी, जब उनको इस ज़िलेके कलक्टर मैजिस्ट्रेटके पदका भार और जिम्मेवारीका काम मिला; परंतु उन्होंने अपनी योग्यता, दूरदर्शिता, दृढ़ प्रतिज्ञा, अश्रान्त साहस और जातीय वैभवसे सारे जिलेमें ऐसा प्रभाव डाला कि सब अमीर गरीब उनसे प्यार और उनका सम्मान करने लगे। शांति उन्नति और सुधारका उनके राज्यमें बीजारोपण हो गया। जब सन् १८५७ में अकस्मात् बलवा हो गया तो इटावेमें सर्वत्र शांति और आशा ही दृष्टि-गोचर होती थी। बलवेसे पहले जिलेकी कैसी दशा थी इसको स्वयं ह्यूम साहबने अपनी स्वाभाविक प्रतिभाशाली शैलीमें बड़ी सुन्दरतासे वर्णन किया है। " जिलेमें कभी भी ऐसी प्रसन्नता नहीं दिखलाई दी थी। गत दो वर्षोंसे अपराध बिल्कुल घट रहे थे। मालगुजारी बिना किसी प्रकारके दबाव या जोरके स्वयमेव चली आती थी। सार्वजनिक पुस्तकालयों और अनेक स्कूलोंसे भावी उन्नतिकी बड़ी बड़ी आशायें की जाती

थीं । आने जानेके नये नये रास्ते तेजीसे खुलते जाते थे । रेलकी सड़क भी अधिक अधिक बनती जाती थी । नहर और उसकी दिन दिन बढ़नेवाली शाखाओंसे यहाँके विशाल क्षेत्रकी उपज बढ़ती जाती और सब जातियाँ बड़ी प्रसन्न और सन्तुष्ट थीं । एक बारगी बलवा हो गया और उसने वर्षोंकी मेहनतको एक दिनमें नष्ट कर दिया । " पासके जिलेमें बलवा होनेसे यहाँकी दशा बड़ी भयंकर हो गई; परंतु ह्यूम साहबने अपनी दृढ़ता, बुद्धिमत्ता, श्रम और साहससे बागियोंको भगा दिया, बलवेको शांत कर दिया और थोड़े ही दिनोंमें पूर्णरूपसे शांति स्थापित कर दी । बादके कुछ कारणोंसे तथा हैजेमें ग्रसित हो जानेसे ह्यूम साहबको कुछ दिनों तक इटावेसे बाहर रहना पड़ा; परंतु इस बीचमें भी वे हिंदुस्तानी कर्मचारियों और जमींदारोंसे बराबर पत्र-व्यवहार रखते रहे, उन्हें हुकम और समाचार पहुँचाते रहे, उनकी कठिनाइयोंको हल करते रहे और घोषणाओं और चिठ्ठियों द्वारा उनके राज्यभक्तिके भावको जीवित रखनेका उद्योग करते रहे । जिन लोगोंका बलवेकी ओर झुकाव था उनको भी पत्रों द्वारा ह्यूम साहबने सीमासे बाहर नहीं निकलने दिया। जितनी चिंता उनके आज्ञाकारी कर्मचारियों और जमींदारोंको उनके वापिस आनेकी थी, उतनी ही स्वयं उनको भी थी । वापिस आते समय रास्तेमें उन्हें मालूम हुआ कि जैसा गवर्नमेंटने हुकम दिया था ब्रिगेडियर वालपोलने कुछ भी सेना वहाँ नहीं छोड़ी है; परंतु इससे उनको कुछ भी भय नहीं हुआ । वे और उनका अरदली दोनो बढ़ गये और उन्होंने शहर पर दुबारा अधिकार कर लिया । अनंतराम, हरचन्दपुर तथा कितनी ही अन्य छोटी छोटी लड़ाइयोंका, जिनमें उन्होंने बड़ी धीरतासे काम किया, अब तक बड़े जोशीले शब्दोंमें वर्णन किया जाता है । इन बातोंसे विदित होता है कि २८ वर्ष की उमरमें ही ह्यूम साहब ऐसे अच्छे सेनापति थे और ऐसे महान राजनीतिज्ञ थे कि देश उन पर अभिमान कर सकता है । दूसरी जुलाई सन् १८५८ ई० को ह्यूम साहब फिर बीमार पड़ गये और उन्हें छुट्टी लेनी पड़ी । उसी दिन उसी बागी राजाने, जिसको ह्यूम साहबने पहले हरा दिया था, फिर सिर उठाया । जब तक ह्यूम साहब छुट्टीसे वापिस आये और उन्होंने पुनः शांति स्थापन की तब तक बीचमें बड़ी गड़बड़ रही । इससे

प्रगट होता है कि उनका जातीय प्रभाव कितना था। उस समयके इतिहास पर दृष्टि डालनेसे ह्यूम साहबके एक और विशेष गुणका स्मरण होता है। वह यह था कि वे आदमियोंको बड़े अनुभवसे चुनते थे और उन पर बड़ा विश्वास रखते थे। राजा लक्ष्मणसिंह, मुन्शी देवीप्रसाद, ईश्वरीप्रसाद, रामबख्श, श्यामबिहारी लाल, राव जसवंतराव, कुँवर जरसिंह.........सब उनके सच्चे मित्र थे और राजभक्तिके लिए प्रसिद्ध थे। सब लोगोंसे चाहे वे विद्रोही हो चाहे मित्र, ह्यूम साहब केवल एक बात कहते थे कि चाहे महीनों लगें चाहे वर्ष लगें, देर हो या जल्दी, एक दिन अंग्रेजी सरकारका सिक्का बैठेगा और हर एक आदमीको उसकी करनीका फल मिलेगा। अहा! कैसे महत्त्वशाली शब्द थे। कैसी गहरी सहानुभूति और सच्ची राजभक्ति इनसे प्रगट होती है। दोनों भाव किस उत्तमताके साथ एक दूसरेसे वेष्टित किये गये हैं। ह्यूम साहबकी न्याय और बुद्धिमत्ता युक्त नीतिका क्या परिणाम हुआ और जो लोग उनसे मिले उन पर उनके जातीय प्रभावके जादू जैसे असरने क्या काम किया, इसके विषयमें हम ह्यूम साहबके ही शब्दोंको पाठकोंके समक्ष रखते हैं। उन्होंने लिखा है कि "जिस दिनसे मैंने पहले पहल जिलेकी सीमा पर अपने सैकड़ों शुभचिंतकोंसे भेंट की उसी दिनसे मैंने यह समझ लिया कि मुझसे लोगोंको किसी प्रकारकी ऐसी शिकायत नहीं है कि जिसको मुझे दूर करना चाहिए। शांतिसे, द्वेष रखनेवाले मनुष्योंकी संख्या बुरेसे बुरे दिनोंमें भी बहुत कम रही है और जिस समयसे लोगोंको मेरे विचार आम तौरसे मालूम हो गये उनकी संख्या औरय्याके सिवाय अन्य खास खास परगनोंमें मुश्किलसे सौ पीछे एक होगी। यही हमारी शक्ति थी। विद्रोहियोंके लिए हमको भयभीत करना असम्भव थी। जरा जरासी बातकी भी हमें दस दस जगहसे तुरंत खबर लग जाती थी। चारों ओर लुटेरे लोगोंकी जातियोंकी जातियाँ बजाय विद्रोह करनेके अपने अपने कामोंमें लग गई।" गेजेटिअरमें ह्यूम साहबके विषयमें लिखा है कि उक्त विद्रोहके समयमें प्रजाकी राजभक्तिमें बहुत कम जिलोंका इटावेसे मिलान किया जा सकता है। इसका कारण यह था कि जन-साधारणके भाव ह्यूम साहबसे बड़े प्रेमके थे और ह्यूम साहब भी इस बातके लिए उद्योग करते रहते थे कि लोगोंके भाव उनके प्रति ऐसे ही बने रहें।..

..................इसमें सारी नामवरी ह्यूम साहबकी है। इटावे पर ह्यूम

साहबका बहुत ऋण है। वहाँ आपने वर्षों तक कलेक्टर रह कर बहुत कुछ किया है यह उन्हींका प्रभाव है कि सन् १८५७ के बलवेका इटावे पर बहुत ही कम असर हुआ और अब तक वहाँके लोग उनका नाम बड़ी कृतज्ञताके साथ लेते हैं।

बलवेके शांत हो जाने पर ह्यूम साहबने शिक्षा-प्रचारके लिए पृथक् उद्योग करना शुरु कर दिया। सात तहसीली स्कूल खोले गये और ढाईसौसे अधिक प्राथमिक स्कूल स्वीकृत किये और पब्लिक फंडसे उनको इमदाद मिलने लगी। इटावेमें ह्यूम स्कूलको मुख्य जिला स्कूल बनाया गया। स्कूलकी इमारतकी बनावट बड़ी ही उम्दा है।.. इसके बनानेमें कुल खर्च ३४०००) हुआ था जिसमेंसे २४०००) का स्वयं ह्यूम साहब और जिलेके लोगोंने चंदा किया था। जब तक ह्यूम साहब इटावेके कलक्टर रहे, वे ३०) मासिक स्कूलकी सहायतार्थ देते रहे और जब उन्होंने इटावा छोड़ा तब ७२००) के गवर्नमेंट प्रामेसरा नोट स्कूलको प्रदान किये जिनका उतना ही मासिक व्याज आता रहा जितना वे चंदा दिया करते थे। जितना रुपया साल भरमें आता है उसमेंसे छह छह रुपये मासिकके ४ वजीफे मिडिल क्लासके उन चार लडकोंको दिये जाते हैं जिनकी अवस्था १४ वर्षसे कम होती है और जो अंग्रेजी या गणितमें उत्तम रहते हैं। इसके अतिरिक्त ह्यूम साहबने १२००) रुपये और इस लिए प्रदान किये कि इनके व्याजसे हर साल उस लड़केको पारितोषिक दिया जाय जो सबसे थोड़ी उमरमें इंट्रेंस (मैट्रीकुलेशन की परीक्षा पास करे।

इटावेमें सबसे पहला मेडीकल इन्सटीटयूशन अर्थात् शफाखाना सन् १८५६ ई० में ह्यूम साहबने बनाया। ....ह्यूम साहबके समयसे पहले इटावेकी पुरानी बस्ती और नई बस्तीमें आने जानेका ठीक मार्ग नहीं था। ह्यूम साहबने उनमें पक्की चौड़ी सड़कें बनवाई जिससे आने जानेमें बड़ी सुविधा हो गई। उन्होंने अच्छी सड़कें इतनी बनवा दी थीं कि यद्यपि आज उन्हें इटावा छोड़े ४५ वर्ष हो गये और अब उसमें म्यूनिसिपल बोर्ड और जिला बोर्डका सब कुछ प्रबंध है, तथापि उस समयसे अब तक बहुत ही कम नई सड़कें बनाई गई हैं।

शहरके बीचमें ह्यूम-गंज है। पहले यह जमीन जंगल बन रही थी। ऊँची नीची बड़ी खराब हालतमें थी। यहाँ जंगली जानवर फिरते थे। ह्यूम

हबने ही इसे बराबर ठीक कराया और अब यहाँ बड़ी बड़ी आलीशान इमारतें
ों हुई हैं। बड़ा सुदर बाजार है जिसे ह्यूम-गंज कहते हैं। अनाज
र रुईकी यहाँ खास मंडी है। इसमे बड़ी बड़ी सुंदर दूकानें हैं जिनमें
ग्रेंकी महराबे देखने योग्य हैं। अनाजकी मंडीके पश्चिमकी ओर ह्यूम-
राय है। उसका दरवाजा बड़ा खूबसूरत है। तहसील, अमेरिकन मिशन
रजा, जिसमें आज कल म्युनिसिपल दफ्तर है, सबजीमंडी, ह्यूम-हाईस्कूल,
तवाली, पुरानी मुन्सफी और टाऊनस्कूल तथा अस्पताल ये तमाम इमारतें
सी जगह हैं और सदा ह्यूम साहब और उनके कामोंकी इटावेमें यादगार रहेंगी।

ह्यूम साहबने सोमेरशाहके किलेके खंडहर पर एक बारादरी तैयार कराई थी,
ौर उसमें जानेकी एक सड़क भी बनाई थी, परंतु अब वह सड़क टूट टाट गई
। कलक्टर साहबके रहनेकी कोठी और क्ररकी इमारत भी ह्यूम साहबकी ही
नवाई हुई है और उनकी निर्माण शैली भी एक विलक्षण प्रकारकी है जो ह्यूम
ाहबकी ही इमारतोंमें पाई जाती है। ह्यूम साहबका ध्यान केवल शहरकी ओर
ा नहीं गया था, किंतु जिले भरमें उनकी यादगार पाई जाती है। एक ह्यूम-गंज
फफूंदमे है और एक औरय्यामें है।

मैं यह बात अब आप पर और आपके पाठकों पर छोड़ता हूँ कि आप देखें कि
ह्यूम साहबके स्मारक पर, जिसके बनानेका प्रस्ताव है, इटावेका कितना हक़ है और
यह कितना अच्छा होगा, यदि उनका स्मारक ऐसी जगह पर बनाया जायगा
जहाँ उनका पहलेसे इतना आदर किया जाता है। ऐसे स्मारकका इटावेके आस-
पासके जिलोंके लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा। ये जिले अभी उन्नतिमें बहुत पीछे
हैं। इनकी ओर उन लोगोंका अवश्य ध्यान जाना चाहिए जिनका मुख्य उद्देश्य यह
रहता है कि कोई भी पीछे न रहे।

हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला।

इस ग्रन्थमालामें अच्छी अच्छी चुनी हुई पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं इस बातका खास ध्यान रक्खा जाता है कि पाठकगण इस मालासे कोई विशे लाभ उठा सकें। इसकी अब तक प्रकाशित पुस्तकोंके पढ़ने और उन पर दी हु विद्वानोंकी सम्मतियोंसे पाठक स्वयं भी इस बातका अनुभव कर सकेंगे कि य माला कहाँ तक अपनेको चरितार्थ कर रही है। ग्रन्थमालामें अब तक नीचे लिखं पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ सफल-गृहस्थ। यह पुस्तक अँगरेजीके प्रसिद्ध लेखक सर आर्थ हेल्सके निबन्धोंका अनुवाद है। इसमें प्रायः उन सब विषयोंका वर्णन आ गया प्रत्येक मनुष्यके जीवनमें बड़ी भारी आवश्यता है और जिनके द्वारा सब नको सुखी बना सकते हैं। इसके पूर्वार्द्धमें कार्य-कुशलता, कुटुम्ब-शासन, भीरता, संयम, आदि अपने और कुटुम्बके सुखसे सम्बन्ध रखनेवाले वर्णन है और उत्तरार्द्धमें व्यापारसे सम्बन्ध रखनेवाले—व्यवसायी मनुष्यकी शिक्षा, व्यवसाय-संचालन, कर्मचारियोंकी नियुक्ति, उम्मेदवारोंसे व्यवहार, आदि विषय आये हैं। थोड़ेमें यह कहा जा सकता है कि इस पुस्त-कको शिक्षाके अनुसार चलनेवाले अपने जीवनको सब भाँति सुखी बना कर पूर्ण-सफलता लाभ कर सकते हैं। कीमत ग्यारह आने।

२ आरोग्य-दिग्दर्शन। इसके मूल लेखक देशभक्त महात्मा मोहनचन्द करमचन्द गाँधी हैं। अपने जीवनमें आरोग्य-सम्बन्धी जिन जिन बातोंक आपने अनुभव किया है, प्रायः वे ही बातें इसमें बड़ी सुन्दरता और सरलता ाथ लिखी गई हैं। इसमें नीचे लिखे विषय आये हैं।

आरोग्य, हमारा शरीर, हवा, पानी, खुराक, कसरत, गुह्य प्रकरण, जल केत्सा, मिट्टीके उपचार, कब्ज-संग्रहणी दस्त-अर्श, छूतके रोग शीतला—आ सव, बच्चोंकी सँभाल, सर्प बिच्छू आदिका काटना, अकस्मात् डूबना या ज ाना आदि। प्रत्येक गृहस्थके लिए बड़े कामकी पुस्तक है। कीमत ग्यारह आ

३ कांग्रेसके पिता मि० ह्यूम। नेशनल-कांग्रेसके जन्म-दाता, भार ःस्वार्थ सेवक महात्मा ह्यूमकी पवित्र जीवनी प्रत्येक देशभक्तके ाग्य है। कीमत बारह आने।

मिलनेका पता—

हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला,
चन्दावाड़ी पो० गिरगाँव—बम्बई